इकाई 1. सतत विकास: अर्थ एवं अवधारणा
(Sustainable Development)

1.1 प्रस्तावना (Introduction)
1.2 उदेश्य (Objectives)
1.3 सतत विकास का अर्थ (Meaning of Sustainable Development)
1.4 सतत विकास की उत्पत्ति एवं इतिहास (Origin and History of Sustainable Development)
1.5 भारत में सहस्राब्दि विकास लक्ष्य (Millennium Development Goals in India)
1.6 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)
1.7 सांराश (Summary)
1.9 शब्दावली (Glossary)
1.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)
1.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
1.10 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Useful Text)
1.11 निबंधात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1.1 प्रस्तावना (Introduction)

सतत विकास के सन्दर्भ में यह पहली इकाई हैं, इस इकाई के अंतर्गत आप सतत विकास क्या हैं यह समझेंगे, सतत विकास की महत्ता के बारें में जानेंगे एवं सतत विकास के इतिहास को भी विस्तार से पढ़ेंगे। सहस्राब्दि विकास लक्ष्य जोकि सतत विकास लक्ष्य से पहले दिए गए थे उनके बारें में भी आप इस इकाई में पढेंगे, यह कुल आठ लक्ष्य हैं जिन्हें आप एक-एक कर विस्तार से इस इकाई में पढेंगे। इससे आगे की इकाई में आप सतत विकास लक्ष्य के बारें में जानेंगे साथ ही आप सततशीलता की अवधारणा को भी समझेंगे और यह भी पढेंगे की सततशीलता विकास से किस प्रकार जुडी हुई हैं।

1.2 उदेश्य (Objectives)

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- ✓ सतत विकास के अर्थ को समझ सकेंगे।
- ✓ किसी देश के आर्थिक विकास के साथ-साथ सतत विकास के महत्व से अवगत हो सकेंगे।
- ✓ इस तथ्य से अवगत हो सकेंगे कि सहस्राब्दि विकास लक्ष्यों को सतत विकास लक्ष्यों ने किस प्रकार प्रतिस्थापित किया।
- ✓ भारत में सहस्राब्दि विकास लक्ष्यों का मूल्यांकन करने में सक्षम हो सकेंगे।

1.3 सतत विकास का अर्थ (Meaning of Sustainable Development)

सतत विकास मानव विकास लक्ष्यों को पूरा करने के लिए संगठित सिद्धांत है, यह प्राकृतिक प्रणालियों द्वारा प्राकृतिक संसाधनों और पारिस्थिति की तंत्र सेवाएं प्रदान करने की क्षमता को बनाए रखने पर जोर देता है। सतत विकास की अवधारणा आर्थिक विकास, पर्यावरण की गुणवत्ता एवं सामाजिक समानता के बीच संबंधों की खोज करती है। सतत विकास या संधारणीय विकास का अभिप्राय ऐसे विकास से है जो पर्यावरण के निम्नीकरण के बिना संतोषजनक विकास करता हो, दूसरे शब्दों में सतत विकास वह प्रक्रिया है जो हमारी भावी पीढ़ियों की अपनी जरूरतें पूरी करने की योग्यता को प्रभावित किए बिना वर्तमान समय की आवश्यकताएं पूरी करे। सतत विकास सामाजिक एवं आर्थिक विकास की वह प्रक्रिया है जिसमें पृथ्वी की सहनशक्ति के अनुसार विकास की बात की जाती हैं।

1.4 सतत विकास की उत्पत्ति एवं इतिहास (Origin and History of Sustainable Development)

सतत विकास की अवधारणा ने पूरे विश्व में विकास की परिभाषा को बदल दिया। सतत विकास एक बहुआयामी अवधारणा है, जिसकी शुरूआत वर्ष 1962 में, वैज्ञानिक **राहेल कार्सन (Rachel Carson)** की "***दी साइलेंटस्प्रिंग (The Silent Spring)*** नामक पुस्तक के प्रकाशित होने के पश्चात हुई, जिसमें एक कीटनाशक डी.डी.टी (Dichloro Diphenyl Trichloroethane) के प्रयोग से वन्य जीवन पर होने वाले हानिकारक प्रभावों का उल्लेख किया गया था। यह पुस्तक तब आयी जब औद्योगिक क्रांति चरम पर थी और लोग औद्योगीकरण के पर्यावरण पर हानिकारक प्रभावों से अनभिज्ञ थे। इस पुस्तक को सतत विकास की दिशा में एक मील का पत्थर माना जाता है। इसके पश्चात सतत विकास की अवधारणा का उद्भव मुख्यत: उत्पादन-प्रणालियों पर नियंत्रण करने वाले कुछ लोगों द्वारा प्रकृति के बहुमूल्य तथा सीमित संसाधनों के लालच पूर्ण दुरुपयोग के कारण प्राकृतिक संसाधनों की समाप्ति तथा उसके कारण आर्थिक क्रियाओं तथा उत्पादन प्रणालियों के धीमे होने या प्राकृतिक संसाधनों के ख़त्म होने के भय से हुआ। वर्ष 1969 में गैर-लाभकारी संस्था ***'फ्रेंड्स ऑफ़दी अर्थ' (Friends of the Earth)*** बनाई गई जिसे पर्यावरण की सुरक्षा हेतु एवं निर्णय प्रक्रिया में नागरिकों की भागीदारी को सुनिश्चित करने हेतु समर्पित किया गया।

वर्ष 1971 में **आर्थिक सहयोग तथा विकास संगठन** (Organisation for Economic Cooperation and Development) ने ***'प्रदूषण भुगतान' (Polluter Pay Principle)*** का सिद्धांत दिया जिसमें यह कहा गया कि प्रदूषण फैलाने वाले देशों को उसकी कीमत देनी चाहिए। पहली बार वर्ष 1972 में स्वीडन की राजधानी स्टॉकहोम में मानव पर्यावरण पर आयोजित संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन (United Nations Conference on the Human Environment) में विश्व समुदाय में इस बात पर सहमति हुई कि मानव पर्यावरण और प्राकृतिक संसाधनों में भारी गिरावट आई है एवं पर्यावरण संकट एक गंभीर समस्या है। इस विचार को पहली बार अंतराष्ट्रीय कार्यसूची में शामिल किया गया । इससे 'संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम' (United Nation Environmental Programme) की स्थापना हुई।

निदेशक **मौरिस स्ट्रांग** (Maurice Strong) ने पर्यावरण विकास (Eco Development) शब्द दिया जो विकास को पर्यावरण सुरक्षा के साथ जोड़ता है। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम, अंतर्राष्ट्रीय समुदाय के लिए पर्यावरण रणनीतियों को विकसित करने के उद्देश्य से संयुक्त राष्ट्र द्वारा दिसंबर, 1983 में एक आयोग का गठन किया गया जिसका नाम **'पर्यावरण और विकास विश्व आयोग'** (World Commission on Environment and Development) था । इस समिति में 22 सदस्य थे जो दोनों विकसित एवं विकासशील देशो का प्रतिनिधित्व करते थे तथा इस आयोग की अध्यक्षता नॉर्वे की पूर्व प्रधानमंत्री **श्रीमती ग्रोहर्ले म ब्रंटलैण्डने** (Grohrle M bruntlandne) की थी जिस वजह से इसे 'ब्रंटलैण्ड आयोग' भी कहा जाता है। उनकी रिपोर्ट ***'अवर कॉमन फ्यूचर ' (Our Common Future)*** के नाम से अक्टूबर, 1987 में प्रकाशित हुई। सबसे पहले सतत विकास की परिभाषा इसी आयोग ने दी थी। उनके अनुसार स्थायी विकास का अभिप्राय आर्थिक विकास के साथ-साथ पर्यावरण को सुरक्षित करना भी है।

इस रिपोर्ट ने सतत विकास को मजबूती से राजनीतिक अंतर्राष्ट्रीय विकास सोच में सम्मिलित करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस रिपोर्ट में कहा गया है कि विकास हमारी आज की जरूरतों को पूरा करे और साथ ही आने वाली पीढ़ियों की जरूरतों की भी अनदेखा ना करें। आयोग का कहना है कि सतत विकास का अर्थ सिर्फ पर्यावरण के साथ सामंजस्य स्थापित करना नहीं है बल्कि यह परिवर्तन की एक प्रक्रिया है जिसमें संसाधनों के दोहन, निवेश की दिशा, तकनीकी विकास की स्थिति और संस्थागत परिवर्तनों को वर्तमान के साथ-साथ भविष्य की जरूरतों के अनुकूल बनाया जा सकता है। सतत विकास कोयला, तेल और जल जैसे प्राकृतिक संसाधनों के दोहन के लिए उत्पादन तकनीकों, औद्योगिक प्रक्रियाओं और न्यायसंगत विकास नीतियों के संबंध में दीर्घकालिक योजना प्रदान करता है। यह विश्व को आर्थिक विकास की दौड़ के प्रति सचेत करता है कि विकास प्राकृतिक संसाधनों को नष्ट किये बिना एवं पर्यावरण को क्षति पहुंचाए बिना हो। सतत विकास यह सुनिश्चित करता है कि परिस्थिति की व्यवस्थाओं की सहनशीलता क्षमताओं के अनुरूप मानव जीवन की गुणवत्ता में सुधार लाया जा सके एवं ऐसी आर्थिक उन्नति हो जो पृथ्वी के सीमित संसाधनों को नष्ट किए बिना, विश्व के सभी लोगों को न्याय तथा समान अवसर प्रदान करे।

ब्रंटलैंड की परिभाषा में एक महत्वपूर्ण तत्व पर्यावरण और विकास की एकता है। ब्रंटलैंड आयोग मानव पर्यावरण पर वर्ष 1972 में स्टॉक होम (Stock Holm) सम्मेलन के दावे के खिलाफ तर्क देता है और प्रकृति संरक्षण के लिए अंतरराष्ट्रीय संघ की वर्ष 1980 के विश्व संरक्षण रणनीति की तुलना में, सतत विकास पर एक वैकल्पिक दृष्टिकोण प्रदान करता है। ब्रंटलैंड आयोग ने इस पर जोर दिया कि 'पर्यावरण' को पहले मानव भावना या कार्रवाई से अलग एक क्षेत्र के रूप में माना जाता था, और 'विकास' एक शब्द था जिसे राजनीतिक लक्ष्यों या आर्थिक प्रगति का वर्णन करने के लिए इस्तेमाल किया गया था, यह समझने के लिए अधिक व्यापक है एक दूसरे के संबंध में दो शब्द (हम विकास के संबंध में पर्यावरण को बेहतर समझ सकते हैं और हम पर्यावरण के संबंध में विकास को बेहतर समझ सकते हैं, क्योंकि वह अलग-अलग संस्थाओं के रूप में अलग नहीं हो सकते)। ब्रंटलैंड का तर्क है कि 'पर्यावरण' वह है जहाँ हम रहते हैं और 'विकास' वह है जो हम सभी उस निवास के भीतर अपनी तकदीर को सुधारने के प्रयास में करते हैं तथा दोनों अविभाज्य हैं।

वर्ष 1992 के रियो में हुए 'पृथ्वी शिखर सम्मेलन' के बाद से सतत विकास ने खुद को सारी अवधारणाओं के केंद्र के रूप में स्थापित किया है तथा यह अवधारणा अंतराष्ट्रीय विकासवादी सम्मेलनों तथा कार्यक्रमों की सबसे महत्वपूर्ण सामाजिक आर्थिक अवधारणा बन गई है। इस सम्मेलन में ही विश्व राजनीति में पर्यावरण को एक ठोस स्वरूप मिला। इस अवसर पर कार्य सूची- Agenda21 पारित किया गया। सभी राष्ट्रों से निवेदन किया गया कि वह प्राकृतिक संतुलन को बनाए रखें, पर्यावरण के प्रदूषण को रोके तथा सतत विकास का रास्ता अपनाएं।

'ब्रंटलैंड आयोग' की रिपोर्ट के पश्चात सतत विकास के काग्रक्रमों को प्रभावी रूप से लागू करने के लिए संयुक्त राष्ट्र द्वारा दिसम्बर, 1992 में संयुक्त राष्ट्र सतत विकास आयोग का गठन किया गया। संयुक्त राष्ट्र संघ के वर्ष 2000 के सहस्त्राब्दि शिखर सम्मेलन में सहस्राब्दी विकास लक्ष्यों की घोषणा की तथा इसी क्रम में वर्ष 2002 में जोहान्सबर्ग (Johannesburg) में सतत विकास पर विश्व सम्मेलन, वर्ष 2005 में कनाडा के मोंट्रियल (Montreal) शहर में संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन सम्मेलन, वर्ष 2006 में न्यूयोर्क (New York) में वनों के सतत विकास पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन तथा दिसम्बर, 2007 में इंडोनेशिया (Indonesia) के बाली (Bali) द्वीप में जलवायु परिवर्तन पर सम्मेलन आयोजित किया गया। सतत विकास की प्रासंगिकता जून 2012 में रिओ पृथ्वी सम्मलेन (Rio Earth Summit) के 20 वर्ष पूर्ण होने के उपलक्ष्य में संयुक्त राष्ट्र द्वारा आयोजित सम्मेलन में भी उभर कर आयी। वर्ष 2015 के पश्चात सहस्राब्दी विकास लक्ष्यों का स्थान वैश्विक सतत विकास लक्ष्यों ने ले लिया।

1.5 भारत में सहस्राब्दि विकास लक्ष्य (Millennium Development Goals in India)

प्रकृति और पर्यावरण शब्द का इस्तेमाल विद्वानों द्वारा आम बोलचाल में एक दूसरे के स्थान पर किया जाता है। पर्यावरण शब्द कार्यात्मक परिभाषा से जुड़ा है जिसके अनुसार हमारा परिवेश हमें विकास और वृद्धि के लिए परिस्थितियाँ प्रदान करता है और साथ ही खतरे और विनाश का स्रोत भी है। पारिस्थितिकी विज्ञान में पर्यावरण को विद्वानों द्वारा ***'हमारे ग्रह पर उपलब्ध जैविक और अजैविक दोनों घटकों की संगति'*** के रूप में वर्णित किया जाता है।

एक अनुशासन के रूप में पर्यावरणीय नैतिकता अपेक्षाकृत नई है लेकिन पूजा और प्रथाओं के रूप में पर्यावरण और प्रकृति के प्रति मानवीय चिंता अतीत से ही मौजूद रही है। यह विचार कि प्रकृति का अपना आंतरिक मूल्य है, मानव के लिए उपयोगितावादी मूल्यों से अलग है, एक महत्वपूर्ण विचार है जो प्रकृति के 'जैव-केंद्रित' दृष्टिकोण का आधार बनता है। इन दार्शनिकों का मानना है कि मनुष्य सोचता है कि वे प्रकृति से अलग हैं और अपने अस्तित्व के लिए प्रकृति का उपयोग करना केवल दिखावा है। इसलिए पर्यावरण की देखभाल करनी चाहिए क्योंकि अंतत: मानव कल्याण सभी पहलुओं में पर्यावरण पर निर्भर करता है।

सहस्राब्दि विकास लक्ष्य (Millennium Development Goals):

दुनिया भर से गरीबी और अन्य बुराइयों को मिटाने के लिए एक चरम उपाय, सहस्राब्दि विकास लक्ष्य (Millennium Development Goals) को विश्व नेताओं द्वारा अपनी राजनीतिक सीमाओं के भीतर आठ (8) सामाजिक और आर्थिक चिंताओं से निपटने के लिए अपनाया गया था। ये लक्ष्य वैश्विक दृष्टि और व्यक्तिगत जिम्मेदारी के साथ तय किए गए थे। सहस्राब्दि विकास लक्ष्य मूल्यांकन ने सभी हितधारक देशों और उनके आंतरिक योगदानकर्ताओं के बीच सकारात्मक प्रतिक्रिया को अनिवार्य बना दिया। अधिकांश संकेतकों ने सकारात्मक मूल्य प्राप्त किए, जिसके परिणामस्वरूप समग्र सामाजिक-आर्थिक सुधारों को पूरा करने के लिए नए और व्यापक लक्ष्य अपनाए गए।

संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (United Nations Development Programme) क्षमता निर्माण की कई पहलों का समर्थन करता है जो कार्यान्वयन चुनौतियों का समाधान करती हैं। संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम शासन के प्रत्येक स्तर पर प्रतिनिधियों और अधिकारियों की क्षमताओं को मजबूत करके केंद्रीय

मंत्रालयों और कई राज्यों के साथ सीधे काम करता है। संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम रणनीतिक कार्यक्रमों और योजनाओं में भी भाग लेता है जो सहस्राब्दि विकास लक्ष्य और अन्य राष्ट्रीय विकास लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए तैयार किए गए हैं। भारत सितंबर 2000 में अपनाए गए सहस्राब्दि घोषणापत्र का एक हस्ताक्षरकर्ता है। सहस्राब्दि विकास लक्ष्य के आठ विकास लक्ष्यों के लक्ष्य गरीबी और अन्य वंचित क्षेत्रों को कम करने के विकास लक्ष्यों के प्रति भारत की अपनी प्रतिबद्धता के साथ मिलते हैं। भारत ने सहस्राब्दि विकास लक्ष्य की दिशा में महत्वपूर्ण प्रगति देखी है क्योंकि कुछ लक्ष्य 2015 की समय सीमा से पहले हासिल किए गए हैं।

उदाहरण के लिए, भारत ने गरीबी को आधे से कम करने का लक्ष्य हासिल कर लिया है, लेकिन भूख को कम करने का लक्ष्य हासिल करने में पीछे रह गया है। फिर से, देश ने प्राथमिक विद्यालय में नामांकन में लैंगिक समानता हासिल कर ली है, लेकिन प्राथमिक विद्यालय में नामांकन और पूरा करने के लक्ष्यों में पिछड़ गया है। कुल मिलाकर, भारत ने स्वच्छ पेयजल उपलब्ध कराने में प्रगति की है, लेकिन स्वच्छता सुविधाओं तक पहुँच अपर्याप्त बनी हुई है। सहस्राब्दि विकास लक्ष्य ने महत्वपूर्ण विकास चुनौतियों को सामने लाया और मजबूत लक्ष्य-उन्मुख एजेंडे वाले देशों को भी अपनाया। भारत ने कुछ क्षेत्रों में सही दिशा में कदम बढ़ाए हैं, लेकिन अभी भी कुछ बड़े सुधारों की आवश्यकता है।

सहस्राब्दि विकास के आठ लक्ष्य (Eight Goals of Millennium Development)

अब आप एक-एक कर इन लक्ष्यों को समझेंगे-

1. अत्यधिक भूख और गरीबी को मिटाना
2. सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करना
3. लैंगिक समानता को बढ़ावा देना और महिलाओं को सशक्त बनाना
4. बाल मृत्यु दर कम करें
5. मातृ स्वास्थ्य में सुधार
6. एचआईवी/एड्स, मलेरिया और अन्य बीमारियों से लड़ें
7. पर्यावरणीय स्थिरता सुनिश्चित करें
8. विकास के लिए वैश्विक साझेदारी विकसित करना

1. अत्यधिक भूख और गरीबी को मिटाना (Eradicate Extreme Hunger and Poverty)

सहस्राब्दि विकास लक्ष्य को पूरा करने के लिए, गरीबी कुल संख्या अनुपात (Poverty Head Count Ratio) का स्तर 23.9% होना चाहिए। 2011-12 में, गरीबी कुल संख्या अनुपात (Poverty Head Count Ratio) 21.9 प्रतिशत था। यह दर्शाता है कि भारत ने गरीबी उन्मूलन लक्ष्य हासिल कर लिया है, लेकिन प्रगति असमान है। इस उपलब्धि का श्रेय आर्थिक विकास (कृषि क्षेत्र सहित) के साथ-साथ महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act) और राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य

मिशन (National Rural Health Mission) जैसे हस्तक्षेपों पर बढ़े सामाजिक खर्च को जाता है। भारत दुनिया की कुपोषित आबादी का एक-चौथाई हिस्सा है। इसमें दुनिया के कम वजन वाले बच्चों का एक तिहाई से अधिक और दुनिया के खाद्य-असुरक्षित लोगों का लगभग एक तिहाई हिस्सा शामिल है। 2015 तक, सभी आयु वर्गों में कुपोषण घटकर 40 प्रतिशत रह गया लेकिन यह अभी भी 26 प्रतिशत तक की कमी के लक्ष्य से नीचे है।

2. सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करना (Achieving Universal Primary Education)

भारत में प्राथमिक शिक्षा को सार्वभौमिक बनाना एक बहुत बड़ा काम था लेकिन मध्यम प्रयासों के कारण, भारत इस सहस्राब्दि विकास लक्ष्य को प्राप्त करने की दिशा में आगे बढ़ रहा है। प्राथमिक विद्यालय में लड़कियों के नामांकन और पूर्णता दर में भारी वृद्धि हुई है और वे लड़कों के बराबर पहुँच रही हैं। इस प्रयास से लैंगिक पूर्वाग्रह भी कम हुए हैं। राष्ट्रीय स्तर पर, पुरुष और महिला युवा साक्षरता दर 94.81 प्रतिशत और 92.47 प्रतिशत होने की संभावना है। 2009 में, भारत ने शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार करने के लिए, विशेष रूप से प्राथमिक स्तर पर, बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार अधिनियम (Right To Education) पेश किया।

3. लैंगिक समानता को बढ़ावा देना और महिलाओं को सशक्त बनाना (Promoting Gender Equality and Empowering Women)

अगस्त 2015 तक भारतीय संसद में 542 सदस्यों वाली लोकसभा में केवल 65 महिला प्रतिनिधि हैं, जबकि 242 सदस्यों वाली राज्यसभा में 31 महिला प्रतिनिधि हैं। ये आंकड़े बताते हैं कि राष्ट्रीय संसद में महिलाओं के पास सीटों का अनुपात 50 प्रतिशत के लक्ष्य के मुकाबले केवल 12.24 प्रतिशत है।

4. बाल मृत्यु दर कम करें (Reduce Child Mortality)

इस सहस्राब्दि विकास लक्ष्य का लक्ष्य पांच वर्ष से कम उम्र के बच्चों में मृत्यु दर को कम करना है। भारत में पांच वर्ष से कम उम्र के बच्चों की मृत्यु दर 1990 में प्रति 1,000 जीवित जन्मों पर 125 से घटकर 2013 में प्रति 1,000 जीवित जन्मों पर 49 हो गई। यह देखते हुए कि सहस्राब्दि विकास लक्ष्य का लक्ष्य प्रति 1000 पर 42 का है, ये आंकड़े बताते हैं कि भारत सही रास्ते पर है, जिसका मुख्य कारण हाल के वर्षों में इसमें आई तेज गिरावट है। माताओं और बच्चों में बड़े पैमाने पर कुपोषण की स्थिति भारत के लिए एक गंभीर विकास चुनौती है। इस स्थिति से उबरने के लिए कई कार्यक्रम जैसे- राष्ट्रीय बाल नीति (National Child Policy) (2013), राष्ट्रीय प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा नीति (Early Childhood Care and Education) और एकीकृत बाल विकास सेवाएं (Integrated Child Development Services) बाल विकास की वास्तविक समय निगरानी पर ध्यान केंद्रित करने के लिए तैयार किए गए हैं।

5. मातृ स्वास्थ्य में सुधार (Improve Maternal Health)

भारत को सहस्राब्दि विकास लक्ष्य को पूरा करने के लिए 2015 तक मातृ मृत्यु दर (Maternal Mortality Rate) को घटाकर 139 प्रति 100,000 जीवित जन्मों तक लाना है। 1990 से 2006 के बीच मातृ मृत्यु दर दर (Maternal Mortality Rate) में कुछ सुधार हुआ है (2009 में घटकर 167 प्रति 100,000 जीवित जन्म हो गई)। हालांकि, प्रगति के इन संकेतों के बावजूद, इस लक्ष्य की ओर भारत की प्रगति धीमी पाई गई है। संस्थागत सुविधाओं में प्रसव 26 प्रतिशत (1992-93) से बढ़कर 72 प्रतिशत (2008-09) हो गया है। परिणामस्वरूप, प्रशिक्षित

कर्मियों द्वारा प्रसव भी उसी गति से बढ़े हैं। इस कारक में योगदान देने वाला मुख्य कारण सशर्त-नकद-हस्तांतरण योजना 'जननी सुरक्षा योजना' (Janani Suraksha Yojana) की शुरूआत रही है, जिसने 2009 में अस्पतालों और नर्सिंग होम में प्रसव में 72 प्रतिशत तक सुधार किया।

6. एचआईवी या एड्स, मलेरिया और अन्य बीमारियों से लड़ें (Combat HIV/AIDS, Malaria and Other Diseases)

भारत इस लक्ष्य को प्राप्त करने की दिशा में आगे बढ़ रहा है क्योंकि एचआईवी, मलेरिया और तपेदिक का प्रसार लगातार कम हो रहा है। भारत ने एचआईवी/एड्स के प्रसार को कम करने में महत्वपूर्ण प्रगति की है और भारत में एचआईवी/एड्स का संक्रमण 0.45 प्रतिशत (2002) से घटकर 0.36 प्रतिशत (2009) हो गया है। मलेरिया लगातार 2.12 प्रति हजार (2001) से घटकर 0.72 प्रति हजार (2013) हो गया है। अकेले भारत में तपेदिक (TB) के वैश्विक हिस्से का पांचवां हिस्सा है, प्रति लाख जनसंख्या पर तपेदिक का प्रसार 465 (1990) से घटकर 211 (2013) हो गया है।

7. पर्यावरणीय स्थिरता सुनिश्चित करें (Ensure Environment Sustainability)

भारत ने कुछ प्रगति की है और इस सहस्राब्दि विकास लक्ष्य को प्राप्त करने की दिशा में आगे बढ़ रहा है। वन क्षेत्र या हरित संपत्ति बढ़कर 21.23 प्रतिशत हो गई है, जो 5871 वर्ग किलोमीटर की वृद्धि है और संरक्षित क्षेत्रों का छादित (Covered) क्षेत्र देश के कुल भूमि क्षेत्र का लगभग 4.83 प्रतिशत है, इसने उच्च ऊर्जा दक्षता के माध्यम से सकल घरेलु उत्पाद (Gross Domestic Product) विकास की ऊर्जा तीव्रता को कम कर दिया है।

8. विकास के लिए वैश्विक साझेदारी विकसित करना (Develop a Global Partnership for Development)

दुनिया में चीन के बाद दूसरा सबसे बड़ा नेटवर्क 'भारतीय दूरसंचार नेटवर्क' है (2014 के आंकड़ों के अनुसार)। इंटरनेट उपयोगकर्ताओं की कुल संख्या 198.39 मिलियन (2013) से बढ़कर 259.14 मिलियन (2014) हो गई है, जो 60% की वार्षिक वृद्धि को दर्शाता है। वैश्वीकरण के प्रभाव के कारण, भारत दुनिया भर के विभिन्न विकसित और विकासशील देशों को आर्थिक और बौद्धिक सहायता को बढ़ावा देने के लिए प्रमुख विकास भागीदारों में से एक के रूप में उभरा है। निधियों के संदर्भ में भारत की विकास सहायता विकसित देशों से पारंपरिक सहायता प्रवाह के लिए महत्वपूर्ण रूप से पूरक है।

1.6 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. सतत विकास का मुख्य उद्देश्य................................ है। (प्राकृतिक संसाधनों का अधिकतम उपयोग **या** वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों की जरूरतों को संतुलित करना)
2. ....वर्ष में संयुक्त राष्ट्र ने सतत विकास के लक्ष्यों (SDGs) को अपनाया था। (2000 **या** 2015)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. सतत विकास में "जलवायु परिवर्तन" को नवीकरणीय ऊर्जा का प्रयोग संबोधित किया जाता है।
2. सामाजिक समानता और न्याय, सतत विकास का एक प्रमुख सिद्धांत है।
3. टिकाऊ कृषि का मुख्य लाभ केवल आर्थिक लाभ है।

1.7 सांराश (Summary)

सतत विकास या संधारणीय विकास का अभिप्राय ऐसे विकास से है जो पर्यावरण के निम्नीकरण के बिना संतोषजनक विकास करता हो, दूसरे शब्दों में सतत विकास वह प्रक्रिया है जो हमारी भावी पीढ़ियों की अपनी जरूरतें पूरी करने की योग्यता को प्रभावित किए बिना वर्तमान समय की आवश्यकताएं पूरी करे।

सहस्राब्दि विकास के आठ लक्ष्य- पारिस्थितिकी तंत्र के संरक्षण का सिद्धांत, समाज के सतत विकास का सिद्धांत, जैव विविधता संरक्षण का सिद्धांत, जनसंख्या नियंत्रण का सिद्धांत, मानव संसाधन संरक्षण का सिद्धांत, सार्वजनिक भागीदारी का सिद्धांत,सांस्कृतिक विरासत संरक्षण का सिद्धांत और सामाजिक न्याय और एकजुटता हैं। जिसके आधार पर ही सतत विकास लक्ष्यों की बनाया गया।

अब यह बात बहुत अच्छी तरह से स्थापित हो चुकी है कि कोई भी एक स्थायी मार्ग नहीं है और तदनुसार, नीति निर्माताओं को प्रत्येक क्षेत्र (जैसे- देश या राज्य) के लिए कुशल स्थायी निर्णय लेने के लिए अलग-अलग मानदंड और रणनीति चुननी चाहिए। अधिकांश स्थानों पर आर्थिक प्रगति दिखाई दे रही है।

उदाहरण के लिए- शहर बढ़ रहे हैं, परिवहन व्यवस्थाएँ फलफूल रही हैं और इसी तरह परिणामस्वरूप, जीवन के सभी पहलुओं में मध्यम वर्ग तेजी से बढ़ रहा है। देश में नीति आयोग तथा सांख्यिकी एवं कार्यक्रम कार्यान्वियन मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा सतत् विकास लक्ष्य-2030 एजेंडा का क्रियान्वयन किया जा रहा हैं । लक्ष्यों की प्रगति की मॉनिटरिंग के लिए सांख्यिकी और कार्यक्रम कार्यान्वियन मंत्रालय (Ministry of Statistics and Programme Implementation) द्वारा 302 संकेतकों वाला नेशनल इंडिकेटर फ्रेमवर्क (National Indicator Framework) तैयार किया गया हैं। भारत राष्ट्रीय और उप-राष्ट्रीय सरकारों के बीच घनिष्ठ सहयोग के माध्यम से सतत विकास लक्ष्य एजेंडे के कार्यान्वियन को आगे बढ़ाने के लिए कदम उठा रहा है। इसके लिए, भारत विभिन्न पहलों को शुरू करके सतत विकास लक्ष्य (2030 तक प्राप्त करने का लक्ष्य) के प्रति समग्र दृष्टिकोण अपना रहा है। इन प्रयासों के परिणामस्वरूप, भारत का सतत विकास लक्ष्य सूचकांक स्कोर राज्यों के लिए 42 से 69 के बीच और केंद्र शासित प्रदेशों के लिए 57 से 68 के बीच है।

भारत के राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित योगदान (Intended Nationally determined contributions) के कार्यान्वियन के लिए बड़े पैमाने और आकार के निवेश की आवश्यकता है जो एक विकासशील राष्ट्र के लिए अभूतपूर्व है। यह अनिवार्य रूप से इंगित करता है कि घरेलू वित्त के साथ-साथ अंतरराष्ट्रीय सार्वजनिक और निजी क्षेत्र के वित्त को अंतराल को भरने के लिए जुटाना होगा। सतत विकास लक्ष्य की उपलब्धियों के लिए काफी चुनौतियां हैं, एक बहुत ही स्पष्ट चुनौती वायु प्रदूषण है, जो मुख्य रूप से कोयले पर उच्च निर्भरता के कारण है और इसलिए बहुत अधिक कार्बन डाईऑक्साइड (CO_2) उत्सर्जित करता है। इसलिए भारत को कोयला आधारित ऊर्जा दक्षता बढ़ाने और अधिक नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों का उपयोग करने की आवश्यकता है। भारत के कई हिस्से संसाधनों की भारी कमी का सामना कर रहे हैं, खासकर प्राकृतिक संसाधनों जैसे- जल प्रदूषण (कभी-कभी जहरीला) और कमी।

1.8 शब्दावली (Glossary)

- **पर्यावरणीय स्थिरता (Environment Sustainability):** पर्यावरणीय स्थिरता से तात्पर्य प्राकृतिक संसाधनों के जिम्मेदारीपूर्ण प्रबंधन से है, ताकि भविष्य की पीढ़ियों की आवश्यकताओं को पूरा करने की क्षमता से समझौता किए बिना वर्तमान आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके।
- **सतत विकास (Sustainable Development):** सतत विकास का अर्थ है वर्तमान की आवश्यकताओं को पूरा करना और यह सुनिश्चित करना कि भावी पीढ़ियां अपनी आवश्यकताओं को स्वयं पूरा कर सकें।

- **मातृ स्वास्थ्य (Maternal Health):** मातृ स्वास्थ्य से तात्पर्य गर्भावस्था, प्रसव और प्रसवोत्तर अवधि के दौरान महिलाओं के स्वास्थ्य से है।
- **बाल मृत्यु दर (Child Mortality Rate):** बाल मृत्यु दर का तात्पर्य 5 वर्ष से कम आयु में मरने की संभावना से है, जिसे 5 वर्ष से कम आयु में मृत्यु दर के रूप में जाना जाता है।
- **आर्थिक विकास (Economic Development):** किसी देश की अर्थव्यवस्था में वस्तुओं और सेवाओं के कुल उत्पादन में सतत, दीर्घकालिक वृद्धि है, जिसे आमतौर पर सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि द्वारा दर्शाया जाता है।
- **सकल घरेलू उत्पाद (Gross Domestic Product):** आर्थिक उत्पादन का मानक माप है। यह किसी निश्चित अवधि में किसी क्षेत्र या देश में उत्पादित सभी अंतिम वस्तुओं और सेवाओं के मौद्रिक मूल्य को दर्शाता है।
- **उत्पादन-प्रणाली (Production System):** इसका अर्थ उस प्रणाली से है जो किसी उत्पाद को वास्तविकता बनाने के लिए आवश्यक सभी घटकों से निर्मित करती है।
- **ऊर्जा दक्षता (Energy Efficiency):** ऊर्जा दक्षता एक ही कार्य को करने या एक ही परिणाम उत्पन्न करने के लिए कम ऊर्जा का उपयोग है। ऊर्जा-कुशल घर और इमारतें उपकरणों और इलेक्ट्रॉनिक्स को गर्म करने, ठंडा करने और चलाने के लिए कम ऊर्जा का उपयोग करती हैं और ऊर्जा-कुशल विनिर्माण सुविधाएं सामान का उत्पादन करने के लिए कम ऊर्जा का उपयोग करती हैं।
- **वैश्वीकरण (Globalization):** यह एक प्रक्रिया है जिसमें दुनिया भर में विभिन्न देशों और संस्थाओं के बीच आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक और तकनीकी संबंधों में समन्वय बढ़ाने का प्रयास किया जाता है।
- **भारतीय संसद (Indian Parliament):** संसद भारत का सर्वोच्च विधायी निकाय है। भारतीय संसद में राष्ट्रपति तथा दो सदन - राज्य सभा (राज्यों की परिषद) एवं लोकसभा (लोगों का सदन) होते हैं।
- **लोकसभा (Lok Sabha):** भारतीय संविधान के अनुच्छेद 79 के प्रावधान के अनुसार, लोक सभा, लोकसभा संसद का निचला सदन है। लोकसभा वयस्क मताधिकार के आधार पर प्रत्यक्ष चुनाव द्वारा चुने गए लोगों के प्रतिनिधियों से बनी है। संविधान द्वारा परिकल्पित सदन की अधिकतम संख्या 552 है।
- **राज्यसभा (Rajya Sabha):** राज्यों की परिषद यानी राज्य सभा भारतीय संसद का ऊपरी सदन है। राज्य सभा में राज्यों और संघ राज्य क्षेत्रों के प्रतिनिधि और भारत के राष्ट्रपति द्वारा नामित व्यक्ति शामिल होते हैं। भारत का उपराष्ट्रपति राज्य सभा का पदेन सभापति होता है। राज्य सभा अपने सदस्यों में से एक उपसभापति भी चुनती है।

1.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों की जरूरतों को संतुलित करना
2. 2015

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

3. असत्य 4. सत्य 5. असत्य

1.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- Andriantiatsaholiniaina, L. A., Kouikoglou, V. S., & Phillis, Y. A. (2004). ***Evaluating strategies for sustainable development: fuzzy logic reasoning and sensitivity analysis. Ecological Economics***, 48(2), 149–172. https://doi.org/10.1016/j.ecolecon.2003.08.009
- Bhalachandran, G. (2011). ***Kautilya's model of sustainable development***. Humanomics, 27(1), 41–52. https://doi.org/10.1108/08288661111110169
- Chen, H., & Yada, R. (2011). ***Nanotechnologies in agriculture: New tools for sustainable development***. Trends in Food Science & Technology, 22(11), 585–594. https://doi.org/10.1016/j.tifs.2011.09.004
- Dev, R. (n.d.-a). ***Corporate Social Responsibility (CSR) in Indian Banking Sector: An analytical study of ICICI bank limited***.
- Dev, R. (n.d.-b). ***Corporate Social Responsibility in India: Reaching to Unreached?***
- ***India follows a holistic approach towards its 2030 Sustainable Development Goals (SDGs).*** (n.d.). Retrieved February 13, 2020, from https://pib.gov.in/newsite/PrintRelease.aspx?relid=191192
- Kaygusuz, K. (2012). ***Energy for sustainable development: A case of developing countries. Renewable and Sustainable Energy Reviews***, 16(2), 1116–1126. https://doi.org/10.1016/j.rser.2011.11.013
- Oparaocha, S., & Dutta, S. (2011). ***Gender and energy for sustainable development. Current Opinion in Environmental Sustainability***, 3(4), 265–271. https://doi.org/10.1016/j.cosust.2011.07.003
- Smyth, J. C. (1995). ***Environment and Education: a view of a changing scene. Environmental Education Research***, 1(1), 3–120. https://doi.org/10.1080/1350462950010101

1.11 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Useful Text)

- ***Theories of Sustainable Development*** (2015). Edited by Judith C. Enders and Moritz Remig, Routledge, 2 Park Square, Milton Park, Abingdon, Oxon OX14 4RN
- Simon Dresner (2008). ***The Principles of Sustainability***, Earthscan Publication, Dunstan House, 14a St Cross St, London, EC1N 8XA, UK

- Jennifer A. Elliott (2013). ***An Introduction to Sustainable Development***, Routledge, 2 Park Square, Milton Park, Abingdon, Oxon OX14 4RN Island Publishing House, Inc., Philippines

1.12 निबंधात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. सहस्राब्दि विकास से आप क्या समझते हैं? सहस्राब्दि विकास लक्ष्यों की व्याख्या कीजिए।
2. सतत विकास क्या हैं? सतत विकास के इतिहास को विस्तारपूर्वक समझाइए।
3. सतत विकास एवं सहस्राब्दि विकास के बीच अंतर बताइए।

इकाई 2 सतत विकास के सिद्धांत

(Principles of Sustainable Development)

2.1 प्रस्तावना (Introduction)

2.2 उद्देश्य (Objectives)

2.3 सतत विकास के मुख्य सिद्धांत (Main Principles of Sustainable Development)

2.4 सतत विकास दृष्टिकोण: सीमाएं और लाभ (Sustainable Development Approach: Limitations and Advantages)

2.5 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

2.6 सारांश (Summary)

2.7 शब्दावली (Glossary)

2.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)

2.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

2.10 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

2.11 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay type Questions)

2.1 प्रस्तावना (Introduction)

सतत विकास आज की वैश्विक नीति और पर्यावरणीय चर्चा में एक केंद्रीय विषय के रूप में उभरा है. जिसका उद्देश्य आर्थिक विकास को पर्यावरणीय संरक्षण और सामाजिक समानता के साथ संतुलित करना है। यह अवधारणा सार्वभौमिक रूप से महत्वपूर्ण है। इस अध्याय में आप सतत विकास के मुख्य सिद्धांतों और इससे सम्बंधित सीमाओं और लाभों के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन करेगा।

सतत विकास के मुख्य सिद्धांत तीन मुख्य स्तंभों के चारों ओर केंद्रित हैं- पर्यावरणीय संरक्षण, सामाजिक समानता, और आर्थिक व्यवहार्यता। ये सिद्धांत संसाधनों के दोहन को न्यूनतम करने, संसाधनों तक समान पहुँच सुनिश्चित करने और दीर्घकालिक स्थिरता को समर्थन देने वाले आर्थिक प्रथाओं को बढ़ावा देने की बात करते हैं।

2.2 उद्देश्य (Objectives)

इस अध्याय के उपरान्त आप –

- ✓ सतत विकास के मुख्य सिद्धांत को जान सकेंगे।
- ✓ सतत विकास की सीमा और लाभों के विषय में जान सकेंगे।

2.3 सतत विकास के मुख्य सिद्धांत (Main Principles of Sustainable Development)

सतत विकास परिवर्तन की एक प्रक्रिया है जिसमें समान रूप से संसाधनों का शोषण, निवेश की दिशा, तकनीकी विकास और संस्थागत परिवर्तन का अभिविन्यास सुनिश्चित करना है और मानव की दोनों वर्तमान और भविष्य की जरूरतों और आकांक्षाओं को पूरा करने की क्षमता को बढ़ाना है। जबकि सततशीलता एक आदर्श और गुणात्मक अवधारणा है जोकि विकासशील लक्ष्यों में सांस्कृतिक, सामाजिक, पारिस्थितिक और आर्थिक आयामों को एकीकृत करती है ताकि आजीविका की बेहतर आपूर्ति के लिए सामंजस्यपूर्ण संतुलन प्राप्त किया जा सके। मौलिक रूप से यह एक स्थानीय प्रयास है क्योंकि प्रत्येक समुदाय की अपनी विभिन्न सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय आवश्यकताएं और चिंताओं होती हैं। इस के कुछ महत्वपूर्ण सिद्धांत हैं जो सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय व्यवस्थाओं के सही एकीकरण की सुविधा प्रदान कर सकते हैं।

सततशीलता, गतिशील मानव आर्थिक प्रणालियों और धीमी पारिस्थिति की प्रणालियों के बीच का अंतर्संबंध है, जिसके अंतर्गत ***पहला***, मानव जीवन विकसित हो सकता है। ***दूसरा***, मानव का विकास हो सकता है। ***तीसरा***, संस्कृति विकसित हो सकती है। और ***चौथा***, मानव गतिविधियों के प्रभाव को सीमित किया जा सकता है। ताकि जीवन-समर्थन प्रणाली (Life Support Systems) की विविधता, जटिलता और कामकाज को प्रभावित ना हो। पारिस्थितिक तंत्र की क्षमता के भीतर, मानव जीवन की गुणवत्ता में सुधार के लिए ***जैविक प्रणाली*** लक्ष्यों (आनुवंशिक विविधता, प्रतिरोध, जैविक उत्पादकता) के साथ-साथ ***आर्थिक प्रणाली*** के लक्ष्यों (मूलभूत आवश्यकताओं की संतुष्टि, न्यायपरस्ता में वृद्धि, उपयोगी वस्तुओं और सेवाओं में बढ़ोतरी) और ***सामाजिक प्रणाली*** लक्ष्यों (सांस्कृतिक विविधता, संस्थागत सततशीलता, सामाजिक न्याय, भागीदारी) को बढ़ावा देना आवश्यक है।

सतत विकास के मुख्य सिद्धांत इस प्रकारहैं: -

- पारिस्थितिकी तंत्र के संरक्षण का सिद्धांत
- समाज के सतत विकास का सिद्धांत
- जैव विविधता संरक्षण का सिद्धांत
- जनसंख्या नियंत्रण का सिद्धांत
- मानव संसाधन संरक्षण का सिद्धांत
- सार्वजनिक भागीदारी का सिद्धांत
- सांस्कृतिक विरासत संरक्षण का सिद्धांत
- सामाजिक न्याय और एकजुटता
- आर्थिक दक्षता
- भागीदारी और प्रतिबद्धता
- ज्ञान तक पहुंच
- अंतर-सरकारी साझेदारी और सहयोग
- जिम्मेदार उत्पादन और खपत
- प्रदूषक भुगतान करें
- लैंगिक समानता
- पारम्परिक ज्ञान प्रणाली का सम्मान एवं उपयोग
- सावधानी, रोकथाम और मूल्यांकन का सिद्धांत

1. पारिस्थिति की तंत्र के संरक्षण का सिद्धांत (Principle of Conservation of Eco-System)

पारितंत्र या पारिस्थितिक तंत्र एक प्राकृतिक इकाई है जिसमें एक क्षेत्र विशेष के सभी जीवधारी, अर्थात् पौधे, जानवर और अणुजीव शामिल हैं जोकि अपने निर्जीव पर्यावरण के साथ अंतर्क्रिया करके एक सम्पूर्ण जैविक इकाई बनाते हैं। पारिस्थितिक तंत्र संरक्षण का मुख्य कार्य प्रणाली के भीतर संरचना, कार्य और प्रजातियों के संकलन की रक्षा या पुनर्स्थापना करना है। सतत विकास का अंतिम उद्देश्य धरती को संरक्षण देना है। यह पारिस्थितिक तंत्र को सततशील बनाने के लिए है। इस प्रयोजन के लिए स्थलीय और जलीय पारिस्थितिकी तंत्र का संरक्षण आवश्यक है। सतत विकास को प्राप्त करने के लिए, पर्यावरण संरक्षण को विकास प्रक्रिया का एक अभिन्न हिस्सा बनाना चाहिए। राष्ट्रों को अपने संसाधनों का फायदा उठाने का सार्वभौम अधिकार है लेकिन उनकी सीमाओं से परे पर्यावरणीय क्षति पहुंचाए बिना। आज के विकास को वर्तमान और भावी पीढ़ियों के विकास और पर्यावरण की जरूरतों को कमजोर नहीं करना चाहिए। मानव गतिविधियों को पारिस्थितिक तंत्र की समर्थन क्षमता का सम्मान करना चाहिए। मृदा की उत्पादन क्षमता को बढ़ाने में सम्मिलित विकास कार्य पृथ्वी की वहन क्षमता के भीतर होना चाहिए। पृथ्वी पर संसाधन सीमित हैं। पृथ्वी पर सीमित और असीमित संसाधनों के लिए पर्याप्त नहीं हो सकते हैं संसाधनों का अधिक से अधिक दोहन पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। लोग उन सारी चीजों को नहीं प्राप्त कर सकते हैं जिनकी उन्हें पृथ्वी से तुरंत आवश्यकता है।

2. समाज के सतत विकास का सिद्धांत (Principle of Sustainable Development of Society)

समाज पर्यावरण संरक्षण के प्रति प्रेरित हो इसके लिए समाज का स्थिर होना आवश्यक है और समाज की सततशीलता, स्वस्थ निवास, संतुलित आहार, पर्याप्त स्वास्थ्य सेवा, रोजगार और श्रेष्ठ शिक्षा की उपलब्धता पर निर्भर करती है। यदि ये तत्व विकसित होते हैं और समाज में लोगों के लिए उपलब्ध होते हैं तो यह एक सतत समाज बन जाता है। यह प्रकृति और प्राणियों के प्रति अपने सकारात्मक दृष्टिकोण को विकसित करने में सहायता करता है। मानव स्वास्थ्य और जीवन की बेहतर गुणवत्ता सतत विकास की चिंताओं के केंद्र में हैं। लोग प्रकृति के साथ सामंजस्य में स्वस्थ और गुणवत्तापूर्ण जीवन के हकदार हैं। पूरे विश्व से गरीबी उन्मूलन, जीवन स्तर में असमानताओं को कम करने और अधिकांश लोगों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए सतत विकास आवश्यक है।

3. जैव विविधता संरक्षण का सिद्धांत (Principle of Biodiversity conservation)

जैव-विविधता (जैविक-विविधता) जीवों के बीच पायी जाने वाली विभिन्नता है जोकि प्रजातियों में, प्रजातियों के बीच और उनकी पारितंत्रों की विविधता को भी समाहित करती है। सतत विकास, जैव विविधता सरंक्षण पर केंद्रित है तथा इसका संरक्षण जरूरी है। जैव विविधता से मिलने वाली सेवाओं और जैविक संसाधनों के लाभ को निरंतर प्राप्त करने के लिए जैव विविधता का संरक्षण करना चाहिए क्योकि यह पृथ्वी पर मानव जीवन को जीने के लिए आवश्यक हैं। यह दुनिया के सभी जीवित प्राणियों को संरक्षित करने के लिए भी आवश्यक है। जैव विविधता के संरक्षण के लिए राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिए तथा कार्यक्रमों में समन्वय होना चाहिए। जैविक विविधता अतुलनीय लाभ प्रदान करती है और यह लाभ वर्तमान और भावी पीढ़ियों के लिए संरक्षित होना चाहिए। अगर मानव जीवन की गुणवत्ता को बनाए रखना है तो प्रजातियों की सुरक्षा, पारिस्थितिक तंत्र और जीवन को बनाए रखने वाली प्राकृतिक प्रक्रियाएं आवश्यक हैं।

4. जनसंख्या नियंत्रण का सिद्धांत (Principle of Population Control)

मनुष्य पृथ्वी पर पाए गए सीमित साधनों और संसाधनों का उपयोग करके अपने जीवन को बनाए रखते हैं। जनसंख्या वृद्धि के कारण, भोजन, कपड़े, आवास आदि की जरूरतें बढ़ जाती हैं। दुनिया में बढ़ती आबादी की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए उपलब्ध साधनों और संसाधनों को नहीं बढ़ाया जा सकता। स्थायी विकास के लिए जनसंख्या नियंत्रण और प्रबंधन आवश्यक हैं। यह पर्यावरण संतुलन में सहायक होगा।

5. मानव संसाधन संरक्षण का सिद्धांत (Principle of Human Resource Conservation)

पर्यावरण की रक्षा करना और सतत विकास को प्राप्त करना ना केवल तकनीकी और आर्थिक मामलों पर निर्भर करता है बल्कि विचारों, दृष्टिकोणों और व्यक्तिगत व्यवहार में बदलावों पर भी निर्भर करता है। इसमें व्यक्तियों और समुदायों की प्रत्यक्ष भागीदारी आवश्यक है। सभी को अपने पर्यावरण के बारे में पूर्ण जानकारी होनी चाहिए। मनुष्य को अपनी मांगों के साथ-साथ पर्यावरण की सीमाओं को भी जानना चाहिए और उसके अनुसार ही अपनी आदतों और व्यवहार को बदलना चाहिए। पृथ्वी की देखभाल करने के लिए उसके ज्ञान और कौशल को विकसित करना चाहिए। शिक्षा, स्वास्थ्य देखभाल और प्रशिक्षण प्रदान करके मानव संसाधन विकसित किया जाना है। मानव संसाधन, सतत विकास के सिद्धांतों को अपनाने के लिए योगदान देता है।

6. सार्वजनिक भागीदारी का सिद्धांत (Principle of Public Participation)

सतत विकास को व्यक्तिगत तौर पर नहीं रखा जा सकता है। प्रत्येक व्यक्ति का एक संयुक्त प्रयास अनिवार्य है। सतत विकास की अवधारणा को क्रियान्वित करने के लिए सार्वजनिक भागीदारी को बढ़ाया जाना चाहिए। इसलिए सतत विकास के हर कार्यक्रम में जनता के सकारात्मक व्यवहार को विकसित किया जाना चाहिए। अधिकार और जिम्मेदारियों को अधिकार के उचित स्तर तक सौंप दिया जाना चाहिए। जितना संभव हो सके केंद्रों को निर्णय लेने की क्षमता पर्याप्त रूप से संबंधित नागरिकों और समुदायों को सौंप देनी चाहिए। सामाजिक-आर्थिक जीवन और पर्यावरण को प्रभावित करने वाली जानकारी तक पर्याप्त पहुंच सभी को प्रदान की जानी चाहिए। सतत विकास की स्पष्ट नीतियाँ होनी चाहिए और इसके सामाजिक-आर्थिक और पर्यावरणीय प्रभावों के बारे में लोगों का ज्ञान, सतत समाधान और दृष्टिकोण को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। निर्णय लेने में सार्वजनिक भागीदारी को मजबूत किया जाना चाहिए।

7. सांस्कृतिक विरासत संरक्षण का सिद्धांत (Principle of Cultural Heritage Conservation)

संपत्ति, स्थल, परिदृश्य, परंपराओं और ज्ञान से सृजित सांस्कृतिक विरासत, किसी भी समाज की पहचान को प्रदर्शित करती है। यह एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक समाज के मूल्यों से गुजरता है और इस विरासत के संरक्षण से विकास की सततशीलता को बढ़ावा मिलता है। सतत विकास सामाजिक परंपराओं, धार्मिक स्थानों और लोगों के सांस्कृतिक पहलुओं के संरक्षण पर बल देता है। विविध सांस्कृतिक विरासत समाज का अमूल्य योगदान है लेकिन अंधविश्वास से बचा जाना चाहिए। सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित रखना हम सभी का कर्तव्य है और इसका संरक्षण सतत विकास को बढ़ावा देता है। सांस्कृतिक विरासत घटकों को पहचान कर उसको संरक्षित करके उसमें बढ़ोतरी की जानी चाहिए साथ ही उनकी आंतरिक दुर्लभता और नाजुकता को ध्यान में रखना चाहिए।

8. सामाजिक न्याय और एकजुटता (Social Justice and Solidarity)

सामाजिक न्याय की बुनियाद, सभी मनुष्यों को समान मानने के आग्रह पर आधारित है। किसी के साथ सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक पूर्वाग्रहों के आधार पर भेदभाव नहीं होना

चाहिए। किसी भी देश के विकास में वहाँ पर व्याप्त अंतर-पीढ़ीगत न्यायपरस्ता, सामाजिक नैतिकता और एकता की भावना में सामंजस्यता को स्थापित किया जाना चाहिए।

9. आर्थिक दक्षता (Economic Efficiency)

अर्थव्यवस्था और उसके क्षेत्र प्रभावी होने चाहिए जोकि नवाचार और आर्थिक समृद्धि की ओर अग्रसर हो तथा सामाजिक प्रगति और पर्यावरण के प्रति अनुकूल हो। एक खुले अंतरराष्ट्रीय आर्थिक प्रणाली को बढ़ावा देने के लिए राष्ट्रों को सहयोग प्रदान करना चाहिए जिससे सभी देशों में आर्थिक विकास और सतत विकास करना संभव हो सके। पर्यावरणीय नीतियों का उपयोग अंतर्राष्ट्रीय नीतियों को सीमित करने के (एक अनुचित साधन के रूप में) उद्देश्य से उपयोग नहीं किया जाना चाहिए।

10. भागीदारी और प्रतिबद्धता (Participation and Commitment)

विकास की एक ठोस दृष्टि को परिभाषित करने और इसकी पर्यावरणीय, सामाजिक और आर्थिक स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए नागरिकों और नागरिकों के समूहों की भागीदारी और प्रतिबद्धता आवश्यक है। पर्यावरणीय मुद्दों को नियंत्रित करने का सबसे अच्छा तरीका संबंधित क्षेत्रों के नागरिकों की भागीदारी को सुनिश्चित करना आवश्यक है। पर्यावरणीय जानकारी को व्यापक रूप से उपलब्ध कराकर राष्ट्रीय जागरूकता और भागीदारी को प्रोत्साहित कर सकते हैं।

11. ज्ञान तक पहुंच (Access to Knowledge)

शिक्षा के लिए अनुकूल उपाय, सूचना और अनुसंधान तक पहुंच को प्रोत्साहन देने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए ताकि नवीनता को बढ़ावा दिया जा सके, जागरूकता पैदा की जा सके और सतत विकास के कार्यान्वयन में लोगों की प्रभावी भागीदारी सुनिश्चित हो सके। सतत विकास की समस्याओं की बेहतर हेतु वैज्ञानिक समझ की आवश्यकता होती है। सततशीलता के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए राष्ट्रों को ज्ञान और नवीन तकनीकों को साझा करना चाहिए। राष्ट्रों को पर्यावरणीय मामलों और सतत विकास पर अपनी जनसंख्या को बेहतर शिक्षित, सूचित और संवेदनशील बनाने के लिए रणनीतियों को विकसित करना होगा।

12. अंतर-सरकारी के मध्य साझेदारी और सहयोग (partnership and coorperation in between Inter- governmental)

देश के सतत विकास हेतु सरकारों को यह सुनिश्चित करने के लिए सहयोग करना चाहिए कि विकास पर्यावरणीय, सामाजिक और आर्थिक दृष्टिकोण से टिकाऊ हो। किसी सुनिश्चित क्षेत्र में कार्यों के सम्पादन हेतु उसके बाहरी प्रभावों को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए। विश्व के सभी देशों को प्राकृतिक आपदाओं या गतिविधियों के बारे में चेतावनी साझा करनी चाहिए।

13. जिम्मेदार उत्पादन और खपत (Responsible production and consumption)

उत्पादन और खपत के स्वरूप को विशेष रूप से संसाधनों के उपयोग को अपशिष्ट और अनुकूलन करने वाले एक पारिस्थितिक दृष्टिकोण के माध्यम से उत्पादन और खपत को अधिक व्यवहार्य और अधिक सामाजिक और पर्यावरण के लिए जिम्मेदार बनाने के लिए बदलना चाहिए और उचित जनसांख्यिकी नीतियों को बढ़ावा देना चाहिए। निजी और सार्वजनिक क्षेत्र के बीच सहयोग के साथ व्यापार की सामाजिक जिम्मेदारी को मजबूत किया जाना चाहिए।

14. प्रदूषक भुगतान करें (Make the polluter pay)

ऐसे उपक्रम या संस्थाएं जो प्रदूषण फैलते हैं या पर्यावण को किसी अन्य तरह से नुकसान पहुंचाते हैं उन्हें पर्यावरणीय क्षति को रोकने, कम करने और नियंत्रण के उपायों की लागत का अपने हिस्से का भुगतान वहन करना चाहिए। विभिन्न देशों द्वारा अंतरराष्ट्रीय कानून को विकसित करना चाहिए ताकि अपने देश के नियंत्रण के तहत गतिविधियों के कारण अपनी सीमाओं से परे क्षेत्रों में हुए नुकसान के लिए मुआवजे प्रदान किया जा सके। सम्पूर्ण विश्व में, राष्ट्रीय स्तर पर प्रभावी

पर्यावरणीय कानूनों के निर्माण और प्रदूषण के शिकार लोगों और अन्य पर्यावरणीय क्षतियों के लिए देयता के संबंध में राष्ट्रीय कानून विकसित होने चाहिए। सभी राष्ट्रों को प्रस्तावित गतिविधियों के पर्यावरणीय दृष्टिकोण से संभावित प्रतिकूल प्रभावों का आकलन करना चाहिए।

प्रदूषक (Pollutant) को 'प्रदूषण की लागत को वहन करना' सिद्धांत रूप में होना चाहिए। कीमतें, उपभोग और उत्पादन में शामिल गतिविधियों के साथ-साथ प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग की लागत सहित उनके प्रभावों के लिए समाज द्वारा भुगतान की जाने वाली वास्तविक लागत को प्रतिबिंबित करनी चाहिए। पर्यावरण में हानिकारक / प्रदूषण की गतिविधियों में लगे लोगों को मानव स्वास्थ्य या पर्यावरण के कारण होने वाले नुकसान के लिए भुगतान करना चाहिए।

15. लैंगिक समानता (Gender Equality)

लैंगिक समानता ना केवल दुनिया की आधी आबादी हेतु चिंता का विषय है परन्तु यह मानव अधिकारों से भी जुड़ा हुआ है। जब किसी समाज की आबादी के आधे हिस्से को आर्थिक, राजनीतिक या सामाजिक रूप से उपेक्षित किया जाता है तब समाज को विकसित नहीं किया जा सकता। किसी भी देश में सतत विकास को प्राप्त करने के लिए महिलाओं की पूर्ण भागीदारी परम आवश्यक है। राष्ट्रों को देश की संस्कृति, पहचान और स्वदेशी लोगों के हितों को समझ कर उसका समर्थन करना चाहिए।

16. पारम्परिक ज्ञान प्रणाली का सम्मान एवं उपयोग (Respect and use of Traditional Knowledge System)

पारंपरिक ज्ञान, विकास का एक सक्षम घटक है। मानव कल्याण और सतत विकास हेतु पारम्परिक ज्ञान एक प्रमुख भूमिका निभा सकता है तथा आज विश्व को लोगों के पारम्परिक ज्ञान की भी जरूरत है। पारम्परिक ज्ञान प्रणाली, वैश्विक चुनौतियों जैसे जलवायु परिवर्तन, सामाजिक एवं लैंगिक असमानता आदि में सुधार हेतु योगदान दे सकते हैं। सभी राष्ट्रों को अपने-अपने अधिकार क्षेत्रों में पारम्परिक ज्ञान का अभिलेखबद्ध करना चाहिए ताकि इस ज्ञान का सार्वभौमिक उपयोग रचनात्मक कार्यों हेतु किया जा सके तथा भविष्य के लिए भी इसको संरक्षित किया जा सके।

17. सावधानी, रोकथाम और मूल्यांकन का सिद्धांत (Principle of Precaution, Prevention and Evaluation)

सावधानी पूर्वक दृष्टिकोण का अर्थ है कि जहां भी गंभीर या अपरिवर्तनीय क्षति की संभावना महसूस की जाती है, वहां बिना विलम्ब के उस क्षति की रोकथाम के उपायों को अपनाना चाहिए तथा निरंतर मूल्यांकन का सहारा लेना चाहिए ताकि पर्यावरण, पारिस्थिकी तंत्रों एवं मानव स्वास्थ्य को कोई हानि ना पहुंचे यानी कथित खतरे की प्रबलता को ध्यान में रखते हुए कार्रवाई की जानी चाहिए। मानव गतिविधियों को इसी सिद्धांत के साथ नियोजित और निष्पादित किया जाना चाहिए और प्राकृतिक संसाधनों को नुकसान पहुंचा रहे या पर्यावरण को प्रदूषित कर रहे कारकों को जहां तक संभव हो सके रोका जाना चाहिए।

2.4 सतत विकास दृष्टिकोण की सीमाएं और लाभ (Limitations and advantage of Sustainable Development Approach)

पिछले कुछ वर्षों में, 'सततशीलता' का विचार तर्कसंगत रूप से प्रमुख ढांचा बन गया है जिसके माध्यम से पर्यावरणीय चिंता का मुद्दा देखा जाता है। हमारी भूमि और समुद्रों के संरक्षण, व्यापारिक उद्यमों, शहरी नियोजन, खाद्य उत्पादन प्रणाली और वैश्विक जलवायु परिवर्तन इन सभी पर विचार-विमर्श किया जा रहा है और कुछ मामलों में नीति 'सततशीलता' के आधार पर लागू की जा रही है।

अध्याय के इस खण्ड अंतर्गत आप जानेंगे की क्या पर्यावरणीय मुद्दों के लिए सततशीलता एकमात्र एवं सबसे ज्यादा वांछनीय रूपरेखा है? सततशील दृष्टिकोण की सीमाएं और लाभ क्या हैं और किस प्रकार के वैकल्पिक संकल्पनात्मक दृष्टिकोण बेहतर हो सकते हैं?

ब्रुंडलैंड परिभाषा की कमी यह है कि यह व्यावहारिक से अधिक प्रेरणादायक है। यह सटीक और मापनीय नहीं है इसलिए इसके अर्थ से ज्यादातर लोग सहमत नहीं होते है। इसकी परिभाषा पर अक्सर विवाद देखने को मिलता है। वैश्विक गरीबी की समस्या को हल करने सहित, यह परिभाषा भी गुंजाइश के जाल में गिर गई है। यह ऐसे विकास की बात करती है जिसमें विकसित देशों द्वारा उत्पन्न समस्या का हल करने के लिए अविकसित देशों के योगदान की बात की जाती है जिस पर अनेक अविकसित देशों को आपत्ति है। इसकी एक हानि यह भी है कि सतत विकास के संचालन की लागत, गैर पर्यावरणीय अनुकूल तरीकों की लागत से कहीं अधिक होती है। सतत विकास एवं पर्यावरणीय दृष्टि से सुरक्षित सामान और सेवाओं को बनाने के लिए सामान्यत: अधिक खर्चा आता है जिससे उत्पाद और सेवाएं महँगी हो जाती हैं और गरीब आदमी पर आर्थिक भार बढ़ता है।

सतत विकास के कार्यक्रम को चलाने के लिए आवश्यक व्यापक और नए प्रकार के बुनियादी ढांचे का निर्माण करना होगा जिससे कीमतें और बढ़ेंगी। यह किसी विकासशील देश में नए उद्योग या कंपनियों को स्थापित करने में भी अवरोध उत्पन्न कर सकता है क्योंकि कई कंपनियों के लिए, समस्या यह नहीं है कि सतत विकास असंभव है लेकिन यह आर्थिक रूप से कम फायदेमंद है और इसके लिए अधिक काम की आवश्यकता है, जो कंपनी के अस्तित्व के लिए खतरा बन जाती है।

सतत विकास की लाभ-

1. यह स्थानीय लोगों को शामिल करता है और उन्हें रोजगार, आय और शिक्षा प्रदान करता है।
2. सतत विकास आर्थिक लाभों की एक विस्तृत श्रृंखला प्रदान करते हुए प्रणाली की कार्य क्षमता और विविधता को संरक्षित करता है।
3. सतत विकास वन उत्पादों के विविधीकरण को बढ़ावा देता है जिसमें गैर-इमारती लकड़ी वन उत्पाद भी शामिल हैं।
4. जंगलों द्वारा प्रदान की जाने वाली प्राकृतिक सेवाएं सुरक्षित रखता है।
5. आधुनिक मुक्त बाजार व्यवस्था में स्वदेशी लोगों के लिए यह एक जगह उपलब्ध कराता है।

सतत विकास की सीमाएँ-

1. समान रूप से संसाधनों का दोहन, निवेश की दिशा, तकनीकी विकास और संस्थागत परिवर्तन का अभिविन्यास सुनिश्चित करना जटिल कार्य है।
2. लक्ष्य की आपूर्ति समय कम होने के कारण संसाधनों के दोहन का खतरा अधिक है।
3. सतत विकास के लिए गहन अनुसंधान और नियोजन की आवश्यकता है।
4. बाजारों में बुनियादी ढांचे के विकास की आवश्यकता हो सकती है।
5. सतत विकास के लिए संचार के साधनों की आवश्यकता हो सकती है।

2.5 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. ब्रंटलैण्ड रिपोर्ट.................वर्ष में आयी। (1987 **या** 1978)
2. वर्ष 1992 में पृथ्वी शिखर सम्मलेन ....में आयोजित हुआ। (रियो डी जनेरियो **या** भारत)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. सतत विकास की अवधारणा में केवल वर्तमान आवश्यकताएँ ही शामिल नहीं हैं।
2. सतत विकास का लक्ष्य केवल भविष्य की आवश्यताओं की पूर्ति करना है।
3. सतत विकास में लैंगिक समानता का सिद्धांत सम्मिलित है।

2.6 सारांश (Summary)

ब्रंटलैण्ड रिपोर्ट 1987 ने यह रेखांकित किया कि सतत विकास का तात्पर्य है भविष्य को खतरे में डाले बिना वर्तमान की आवश्यकताओं को पूरा करने से था। इसमें पर्यावरणीय, आर्थिक और सामाजिक आयामों का एकीकरण शामिल है। यद्यपि यह महत्वपूर्ण है फिर भी इस अवधारणा को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। उदाहरण के लिए, ब्रंटलैण्ड परिभाषा अक्सर बहुत अमूर्त मानी जाती है और इसके कार्यान्वयन के लिए सटीक मापदंडों की कमी को लेकर आलोचना की जाती है। इसके अतिरिक्त सतत विकास की पहलों की लागत (Initiative Cost) अधिक हो सकती है जहां पर्यावरणीय अनुकूल प्रथाओं के लिए उच्च परिचालन लागत, गरीब समुदायों पर बोझ डाल सकती है। विकासशील देशों के लिए सतत प्रथाओं को अपनाने की वित्तीय चुनौतियां हो सकती हैं क्योंकि नई बुनियादी ढांचे और प्रौद्योगिकियों की लागत बहुत अधिक हो सकती है। इस अध्याय में सतत विकास दृष्टिकोण की सीमाएं और लाभ को आलोचनात्मक रूप से मूल्यांकन किया गया है जबकि इस दृष्टिकोण से कई लाभ जैसे पर्यावरण संरक्षण और सामाजिक न्याय की उम्मीद की जाती है. यह उच्च कार्यान्वयन लागत और वैश्विक सहमति की आवश्यकता जैसी चुनौतियों का भी सामना करता है। इन पहलुओं को समझना सतत विकास लक्ष्यों को प्रभावी ढंग से बढ़ावा देने और नीति और प्रथा में उनकी सफल एकीकरण के लिए महत्वपूर्ण है। जबकि सतत विकास चुनौतियों का सामना करता है इसके समग्र दृष्टिकोण का उद्देश्य देश की प्रगति के लिए एक संतुलित और स्थायी ढांचा तैयार करना है। इसके सीमाओं को नवोन्मेषी समाधान और अंतर्राष्ट्रीय सहयोग के माध्यम से संबोधित किया जा सकता है ताकि सभी के लिए एक अधिक सतत और समान भविष्य प्राप्त किया जा सके।

2.7 शब्दावली (Glossary)

- **सतत विकास (Sustainable Development) -** सतत विकास भविष्य की पीढ़ियों की अपनी जरूरतों को पूरा करने की क्षमता से समझौता किए बिना वर्तमान की जरूरतों को पूरा करता है।
- **ब्रंटलैण्ड आयोग (Brundtland Commission) -** जिसका पूरा नाम पर्यावरण एवं विकास पर संयुक्त राष्ट्र विश्व आयोग (**World Commission on Environment and Development)** या **(WCED)** है, जिसकी अध्यक्षा नार्वे की पूर्व प्रधानमंत्री ग्रो हर्लेम ब्रंटलैण्ड ने की थीं। इस आयोग ने अपनी रिपोर्ट 'हमारा साझा भविष्य' 1987 में जारी किया जिसे ब्रंटलैण्ड रिपोर्ट भी कहा जाता है।
- **पृथ्वी शिखर सम्मेलन (Earth Summit)** - 1992 में रियो डी जेनेरियो, ब्राजील में आयोजित किया गया था। पृथ्वी शिखर सम्मेलन ने पर्यावरण संधियों के कई प्रमुख सिद्धांतों, जैसे एहतियाती सिद्धांत, सामान्य लेकिन विभेदित जिम्मेदारियां, और प्रदूषणकर्ता भुगतान सिद्धांत को फैलाने में प्रभावशाली भूमिका निभाई।
- **कॉर्पोरेट सामाजिक जिम्मेदारी (Corporate Social Responsibility) -** परोपकार और स्वयंसेवी प्रयासों के माध्यम से, व्यवसाय अपने ब्रांड को बढ़ावा देते हुए समाज को लाभ पहुंचा सकते हैं। एक सामाजिक रूप से जिम्मेदार कंपनी खुद और अपने शेयरधारकों के प्रति जवाबदेह होती है। कॉर्पोरेट सामाजिक जिम्मेदारी आमतौर पर बड़ी कंपनियों द्वारा अपनाई जाने वाली रणनीति है।
- **मुक्त बाज़ार (Free Market)**: यह ऐसी आर्थिक व्यवस्था होती है जिसमें माल और सेवाओं की कीमतें खुले बाज़ार में निर्धारित होती हैं।
- **संचालन की लागत (Cost of Operation)-** इससे तात्पर्य व्यवसाय के रखरखाव और प्रशासन से जुड़े दैनिक खर्चों से है। इसे परिचालन लागत के रूप में भी जाना जाता है, इसमें परिचालन और ओवरहेड व्यय के साथ-साथ बेची गई वस्तुओं की लागत भी शामिल है। सामान्य परिचालन लागत के उदाहरण हैं किराया, मशीनरी, पेरोल सेवाएँ, उपयोगिताएँ, वर्दी और कार्यालय की आपूर्ति।

- **वैश्विक गरीबी (Global Poverty)-** विश्व बैंक 2.15 डॉलर प्रतिदिन से कम पर जीवन यापन करने वाले किसी भी व्यक्ति को अत्यधिक गरीबी में रहने वाला मानता है। अत्यधिक गरीबी में रहने वाले लोगों को कभी-कभी निराश्रित के रूप में परिभाषित किया जाता है।
- **लैंगिक समानता (Gender Equality)-** लैंगिक समानता का अर्थ है कि महिलाओं और पुरुषों को जीवन के सभी क्षेत्रों में समान अधिकार, जिम्मेदारियाँ और अवसर प्राप्त हों।
- **आर्थिक दक्षता (Economic Efficiency)-** आर्थिक दक्षता तब होती है जब किसी अर्थव्यवस्था में उत्पादन के सभी सामान और कारकों को उनके सबसे मूल्यवान उपयोगों के लिए वितरित या आवंटित किया जाता है और अपशिष्ट को समाप्त या न्यूनतम किया जाता है। यदि उत्पादन के कारकों का उपयोग उनकी क्षमता के बराबर या उसके करीब के स्तर पर किया जाता है तो एक प्रणाली को आर्थिक रूप से कुशल माना जाता है।

2.8 अभ्यास प्रश्न के उत्तर (Answer for Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. 1987 **2.** रियो डी जनेरियो

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. सत्य **2.** असत्य **3.** सत्य

2.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- Andriantiatsaholiniaina, L. A., Kouikoglou, V. S., & Phillis, Y. A. (2004). ***Evaluating strategies for sustainable development: fuzzy logic reasoning and sensitivity analysis. Ecological Economics***, 48(2), 149–172. https://doi.org/10.1016/j.ecolecon.2003.08.009
- Bhalachandran, G. (2011). ***Kautilya's model of sustainable development***. Humanomics, 27(1), 41–52. https://doi.org/10.1108/08288661111110169
- Chen, H., & Yada, R. (2011). ***Nanotechnologies in agriculture: New tools for sustainable development***. Trends in Food Science & Technology, 22(11), 585–594. https://doi.org/10.1016/j.tifs.2011.09.004
- Dev, R. (n.d.-a). ***Corporate Social Responsibility (CSR) in Indian Banking Sector: An analytical study of ICICI bank limited***.
- Dev, R. (n.d.-b). ***Corporate Social Responsibility in India: Reaching to Unreached?***
- ***India follows a holistic approach towards its 2030 Sustainable Development Goals (SDGs).*** (n.d.). Retrieved February 13, 2020, from https://pib.gov.in/newsite/PrintRelease.aspx?relid=191192

- Kaygusuz, K. (2012). ***Energy for sustainable development: A case of developing countries. Renewable and Sustainable Energy Reviews***, 16(2), 1116–1126. https://doi.org/10.1016/j.rser.2011.11.013
- Oparaocha, S., & Dutta, S. (2011). ***Gender and energy for sustainable development. Current Opinion in Environmental Sustainability***, 3(4), 265–271. https://doi.org/10.1016/j.cosust.2011.07.003
- Smyth, J. C. (1995). ***Environment and Education: a view of a changing scene. Environmental Education Research***, 1(1), 3–120. https://doi.org/10.1080/1350462950010101

2.10 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

- ***Theories of Sustainable Development*** (2015). Edited by Judith C. Enders and Moritz Remig, Routledge, 2 Park Square, Milton Park, Abingdon, Oxon OX14 4RN
- Simon Dresner (2008). ***The Principles of Sustainability***, Earthscan Publication, Dunstan House, 14a St Cross St, London, EC1N 8XA, UK
- Jennifer A. Elliott (2013). ***An Introduction to Sustainable Development***, Routledge, 2 Park Square, Milton Park, Abingdon, Oxon OX14 4RN Island Publishing House, Inc., Philippines

2.11 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay type Questions)

1. जनसंख्या नियंत्रण और मानव संसाधन संरक्षण के सिद्धांत सतत विकास में कितनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं? विस्तार से समझाएँ कि जनसंख्या वृद्धि और मानव संसाधनों का संरक्षण किस प्रकार सतत विकास के लक्ष्यों को प्रभावित करते हैं।
2. सतत विकास के दृष्टिकोण की सीमाएँ क्या हैं और ये सीमाएँ किस प्रकार सतत विकास की प्रक्रिया को प्रभावित करती हैं? उदाहरणों के साथ समझाइए।
3. सतत विकास के प्रमुख सिद्धांत कौन-कौन से हैं और ये सिद्धांत किस प्रकार पर्यावरणीय संरक्षण, सामाजिक समानता और आर्थिक व्यवहार्यता के बीच संतुलन स्थापित करने में मदद करते हैं? इसके सिद्धांतों के प्रमुख बिंदुओं को विस्तार से समझाइए।

इकाई - 3 सतत विकास मापदंड :- प्रगति और सफलता मापन (Sustainable Development Criteria:- Measuring Progress and Success)

3.1 प्रस्तावना (Introduction)

3.2 उद्देश्य (Objectives)

3.3 सतत विकास लक्ष्य (Sustainable Development Goals)

3.4 सतत विकास के मापदंड (Measurement of Sustainable Development)

3.4.1. पर्यावरण संधारणीयता (Environmental Sustainability)

3.4.2. आर्थिक संधारणीयता (Economic Sustainability)

3.4.3. सामाजिक संधारणीयता (Social Sustainability)

3.4.4. संस्थागत संधारणीयता (Institutional Sustainability)

3.5 सतत विकास मापदंड: प्रगति और सफलता मापन (Sustainable Development Criteria - Measuring Progress and Success)

3.6 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

3.7 सारांश (Summary)

3.8 शब्दावली (Glossary)

3.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)

3.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

3.12 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

3.13 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay type Questions)

3.1 प्रस्तावना (Introduction)

सतत विकास, समाज के समग्र विकास को एक नई ऊँचाई पर ले जाने का लक्ष्य रखता है। ये लक्ष्य विभिन्न पहलुओं जैसे गरीबी उन्मूलन, खाद्य सुरक्षा, स्वास्थ्य, शिक्षा, और पर्यावरणीय संरक्षण को सम्मिलित करते हैं और इनका उद्देश्य एक समावेशी और संतुलित समाज का निर्माण करना है।

इस अध्याय में हम सतत विकास के सिद्धांतों और लक्ष्यों की गहराई से जांच करेंगे, जो समग्र विश्व की स्थिरता और समृद्धि को सुनिश्चित करने के लिए डिज़ाइन किए गए हैं। सतत विकास को एक व्यापक दृष्टिकोण से समझना आवश्यक है जिसमें पर्यावरणीय, आर्थिक और सामाजिक पहलुओं के बीच संतुलन बनाए रखना शामिल है। हम इस बात पर ध्यान केंद्रित करेंगे कि सतत विकास लक्ष्य (Sustainable Development Goals) जिनमें 17 मुख्य लक्ष्य शामिल हैं इसमें वैश्विक चुनौतियों का समाधान कैसे प्रस्तुत करते हैं। ये लक्ष्य गरीबी उन्मूलन, खाद्य सुरक्षा, स्वास्थ्य, शिक्षा, लिंग समानता, स्वच्छ जल और जलवायु परिवर्तन जैसे विविध विषयों को शामिल करते हैं।

इस अध्याय में, हम पर्यावरणीय संधारणीयता पर चर्चा करेंगे, जिसमें जैव विविधता, वन आच्छादित संरक्षण और हरी प्रौद्योगिकियों के उपयोग पर जोर दिया जाएगा। आप जानेंगे कि किस प्रकार पर्यावरणीय समस्याओं जैसे जलवायु परिवर्तन और प्रदूषण को कम करने के लिए ठोस नीतियाँ और प्रौद्योगिकियाँ विकसित की जाती हैं। इसके साथ ही, आर्थिक संधारणीयता के पहलुओं पर भी ध्यान दिया जाएगा, जिसमें गरीबी उन्मूलन, आय में वृद्धि और हरित सूक्ष्म उद्यमों (Green Micro Entreprises) को बढ़ावा देना शामिल है। सामाजिक संधारणीयता की भूमिका को भी समझना महत्वपूर्ण है जोकि मानव जीवन की गुणवत्ता को सुधारने, सार्वजनिक स्वास्थ्य को बढ़ावा देने और सामाजिक समानता को सुनिश्चित करने पर केंद्रित है। हम यह भी देखेंगे कि कैसे संस्थागत संधारणीयता, जैसे प्रभावी निगरानी तंत्र और सक्षम जनशक्ति, सतत विकास की दिशा में प्रभावी भूमिका निभाती है।

अंत में, हम सतत विकास के मापदंडों पर ध्यान देंगे और यह जानेंगे कि पारिस्थितिकीय दबाव और जैव विविधता की क्षमता की तुलना कैसे की जाती है। इस अध्याय में, विकासशील देशों की विशिष्ट जरूरतों और चुनौतियों पर भी चर्चा होगी, और यह देखा जाएगा कि कैसे समुचित नीतियों और वैश्विक साझेदारी से इन समस्याओं का समाधान किया जा सकता है। इस अध्याय के माध्यम से, आप सतत विकास के जटिल और बहुआयामी परिदृश्य को समझने में सक्षम होंगे, जो वैश्विक और स्थानीय स्तर पर सकारात्मक परिवर्तन को प्रेरित कर सकते हैं।

3.2 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप -

- ✓ सतत विकास लक्ष्यों को समझा सकेंगे।
- ✓ सतत विकास के मापदंडों को समझ सकेंगे।
- ✓ सतत विकास की प्रगति और सफलता मापन के मापदंडो से अवगत हों सकेंगे।

3.3 सतत विकास लक्ष्य (Sustainable Development Goals)

यहाँ हम सतत विकास लक्ष्योंके विषय में जानेंगे, हम उन महत्वपूर्ण लक्ष्यों की समीक्षा करेंगे जिन्हें वैश्विक रूप से स्थायी विकास और समकालीन चुनौतियों का समाधान सुनिश्चित करने के लिए अपनाया गया है। ये लक्ष्य गरीबी और भूख को समाप्त करने, सभी के लिए अच्छे स्वास्थ्य और गुणवत्ता वाली शिक्षा सुनिश्चित करने, और लिंग समानता को बढ़ावा देने जैसी प्रमुख समस्याओं को शामिल करते हैं। हम पानी और ऊर्जा की सुरक्षा,आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करने और मजबूत अवसंरचना के निर्माण की दिशा में उठाए गए कदमों पर भी ध्यान देंगे। असमानताओं को कम करने, शहरों में जीवन की गुणवत्ता सुधारने और जलवायु परिवर्तन से निपटने की कोशिशों पर चर्चा होगी। इसके अलावा, समुद्री और पारिस्थितिक तंत्रों के

संरक्षण,शांति और न्याय को बढ़ावा देने, और वैश्विक भागीदारी को सुदृढ़ करने पर भी ध्यान केंद्रित किया जाएगा। यह ढांचा समानता, समृद्ध, और सतत भविष्य की दिशा में काम करता है।

गरीबी नहीं
भूख नहीं
उत्तम स्वास्थ्य और कल्याण
स्तरीय शिक्षा
लैंगिक समानता
साफ पानी और स्वच्छता
अक्षय उर्जा
अच्छी नौकरियां और आर्थिक वृद्धि
उद्योग, नवोन्मेष, बुनियादी ढांचा
घटी हुई असमानताएं
सशक्त शहर और समुदाय
जिम्मेदार उपभोग
जलवायु कार्यवाही
पानी के नीचे जीवन
धरती पर जीवन
शांति और न्याय
लक्ष्यों के लिए भागीदारियां

उपरोक्त लक्ष्यों के विषय में आगे विस्तार से चर्चा की गयी है-

1. गरीबी के सभी रूपों को सर्वत्र समाप्त करना।
2. भुखमरी को समाप्त करना, खाद्य सुरक्षा प्राप्त करना और पोषण में सुधार लाना तथा सम्पोषणीय कृषि को बढ़ावा देना।
3. स्वास्थ्य सुनिश्चित करना और हर उम्र में सभी के लिए तंदुरूस्ती को बढ़ावा देना।
4. समावेशी और साम्यपूर्ण स्तरीय शिक्षा सुनिश्चित करना और सबके लिए आजीवन पठन पाठन के अवसरों को बढ़ावा देना।
5. लिंग संबंधी समानता हासिल करना और सभी महिलाओं एवं बालिकाओं का सशक्तिकरण।
6. सबके लिए जल और स्वच्छता की उपलब्धता और स्थायी प्रबंध्न सुनिश्चित करना।
7. सबके लिए वहनीय, विश्वसनीय और आधुनिक ऊर्जा की उपलब्धता सुनिश्चित करना।

8. सबके लिए स्थायी, समावेशी और सतत आर्थिक विकास, पूर्ण एवं लाभकारी तथा उचित रोजगार को बढ़ावा देना।
9. समुत्थानशील अवसंरचना निर्मित करना, समावेशी एवं संपोषणीय औद्योगिकरण को बढ़ावा देना तथा नवोन्मेष को प्रोत्साहित करना।
10. देशों के भीतर और आपस में भी असमानता कम करना।
11. शहरों और मानव बस्तियों को समावेशी, सुरक्षित, समुत्थानशील (Resilient) और सम्पोषणीय बनाना।
12. सम्पोषणीय खपत और उत्पादन पैटर्न सुनिश्चित करना।
13. जलवायु परिवर्तन एवं इसके प्रभावों का मुकाबला करने के लिए तत्काल कार्रवाई करना।
14. सतत विकास के लिए महासागरों, समुद्रों और समुद्री संसाधनो का संरक्षण करना एवं सम्पोषणीय तरीके से उपयोग करना।
15. पृथ्वी के पारिस्थितिकी तंत्रों का संरक्षण, पुनरूद्धार करना एवं उनके सम्पोषणीय उपयोग को बढ़ावा देना।
16. संपोषणीय विकास के लिए शांतिपूर्ण व समावेशी सोसाइटियों का संवर्धन करना, सबके लिए न्याय सुलभ करना और सभी स्तरों पर प्रभावी, जवाबदेही व समावेशी संस्थाओं का निर्माण करना।
17. कार्यान्वियन के तरीके सुदृढ़ करना और सम्पोषणीय विकास हेतु वैश्विक भागीदारी को पुनः सक्रिय करना।

3.4 सतत विकास के मापदंड (Sustainable Development Criteria)

सतत विकास का लक्ष्य कई अंतर-संबंधित मानकों के बीच संयुक्त प्रयास के माध्यम से प्राप्त एक परिणाम है और दोनों लंबवत और क्षैतिज स्तरों पर समन्वय की आवश्यकता है। तीन कुंजी, जैसे पर्यावरण, आर्थिक और सामाजिक मानकों के बीच गतिशील त्रिभुज संबंध मौजूद है।

सामाजिक मापदण्ड पर केंद्रित लोग त्रिकोण के व्यापक आधार को सक्रिय सार्वजनिक भागीदारी के रूप में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। आबादी, पर्यावरण और विकास के बीच अंतरसंबंध जटिल हैं। महत्वपूर्ण कारकों के अलावा, कुशल जनशक्ति क्षमता निर्माण, मजबूत राजनीतिक इच्छाशक्ति और प्रभावी कार्यान्वयन/ निगरानी तंत्र सहित संस्थागत मजबूती, सतत विकास के सफल परिणाम के लिए समान रूप से महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। निम्नलिखित मापदंड पर विचार किया जा सकता है-

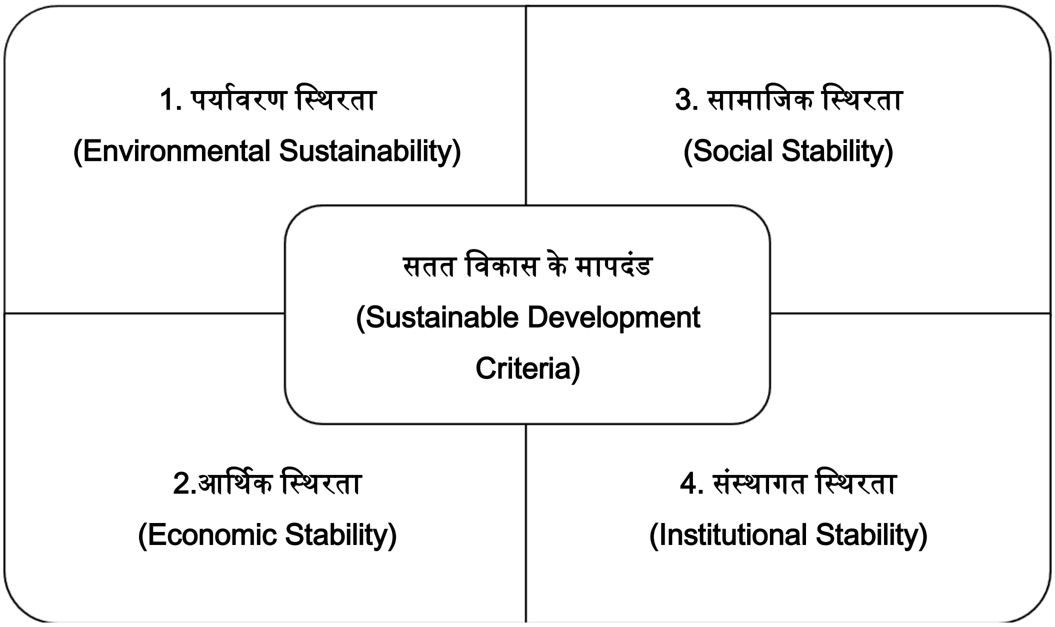

3.4.1. पर्यावरण संधारणीयता (Environmental Sustainability)

पर्यावरण संधारणीयता प्राकृतिक संसाधन आधार और जीवन समर्थन प्रणाली की ले जाने की क्षमता के रखरखाव से संबंधित है। यह जैव विविधता के गर्म स्थानों, वन कवर में वृद्धि, जलसंभर संरक्षण और समग्र दृष्टिकोण को अपनाने के क्षेत्र पर जोर देता है।

पर्यावरणीय खतरों, पर्यावरणीय प्रदूषण में कमी और पर्यावरणीय अनुकूल और प्रौद्योगिकियों का उपयोग वैश्विक स्तर पर पर्यावरणीय समस्याओं जैसेकि जैव विविधता हानि इसका उपयोग अंतर-पीढ़ीगत समानता के परिप्रेक्ष्य से जलवायु परिवर्तन को कम करने के लिए किया जाता है।

3.4.2. आर्थिक संधारणीयता (Economic Sustainability)

आर्थिक संधारणीयता पर्यावरणीय और सामाजिक संधारणीयता को सुरक्षित करने के लिए बैटरी जैसी महत्वपूर्ण ऊर्जा स्रोत प्रदान करती है। यह पर्याप्त बजट, बजट पारदर्शिता और वित्तीय प्रोत्साहन जैसे उपायों के माध्यम से विकास परियोजनाओं के आर्थिक स्व-जीवितता को बढ़ावा देने पर जोर देता है।

फोकस क्षेत्र में शामिल हैं, गरीबी उन्मूलन, प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि, कृषि उत्पादन और हरी सूक्ष्म उद्यमों सहित आय उत्पन्न करने वाली गतिविधियों का प्रचार, लाभ और प्राकृतिक संसाधन लेखांकन के उचित साझाकरण की व्यवस्था की स्थापना।

3.4.3. सामाजिक संधारणीयता (Social Sustainability)

सामाजिक स्थायित्व बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ मानव पर्यावरण की गुणवत्ता की गुणवत्ता को उन्नत करने और सबसे खतरनाक जानवर से सबसे महत्वपूर्ण रचनात्मक संसाधन में बदलने के लिए केंद्रित है। यह स्थानीय समुदायों को संसाधन उपयोग के सतत तरीकों पर अच्छी तरह से सूचित करने पर जोर देता है।

यह विकास के विभिन्न स्तरों पर सक्रिय सार्वजनिक भागीदारी, संरक्षण और विकास गतिविधियों में सहयोगी प्रयासों, सार्वजनिक स्वास्थ्य में सुधार, शिक्षा और बुनियादी आवश्यकता, संसाधन उपयोग पर हितधारकों के बीच संघर्ष में कमी सुनिश्चित करता है। यह सार्वजनिक पर्यावरण जागरूकता, लैंगिक समानता में वृद्धि और स्थानीय समुदाय में आत्मविश्वास के माध्यम से प्राप्त किया जाएगा, जिसमें आर्थिक रूप से वंचित हाशिए के समूहों पर विशेष जोर दिया जाएगा।

3.4.4. संस्थागत संधारणीयता (Institutional Sustainability)

बिना कार्रवाई के योजनाएं और कार्यक्रम व्यर्थ अभ्यास का प्रतिनिधित्व करते हैं। सतत पर्यावरणीय नीतियों, योजनाओं, कानूनों, विनियमों और मानकों की सख्त कार्यान्वयन और निगरानी सतत विकास के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए अनिवार्य है। पर्यावरणीय और सामाजिक स्थायित्व को संबोधित करने के लिए पर्याप्त कुशल, प्रेरित जनशक्ति और मजबूत संस्थागत क्षमता होनी चाहिए।

पर्यावरणीय संरक्षण गतिविधियों में केंद्रित क्षेत्र शामिल होने के लिए अंतर्राष्ट्रीय मानक और सार्वजनिक विश्वास के स्वीकृत स्तर पर कम हवा, पानी, मिट्टी, शोर प्रदूषण जैसे जीवन की पर्यावरणीय गुणवत्ता को प्राप्त करने के लिए निहित है। परियोजना प्रबंधन की संस्थागत मजबूती स्थानीय, राष्ट्रीय, क्षेत्रीय से वैश्विक स्तर के महत्व और कानूनी रूप से बाध्यकारी विश्व सम्मेलनों और संधि सहित पर्यावरणीय समस्याओं से निपटने के लिए प्रभावी होनी चाहिए।

3.5 सतत विकास मापदंड - प्रगति और सफलता मापन (Sustainable Development Criteria - Measuring Progress And Success)

सतत विकास के संदर्भ में वैश्विक सीमाओं को पारिस्थितिकीय प्रभाव के संदर्भ से समझा जा सकता है, जो उस दबाव का परिचायक है, जो मानवीय कार्यकलाप पारिस्थितिकी तंत्र पर डालते है। उनकी तुलना जब जैव क्षमता (उपयोगी जैव सामग्री सृजित करने और मानव द्वारा सृजित अपशिष्ट पदार्थों को खपाने की पारिस्थितिकी तंत्र की क्षमता का पैमाना) से की जाती है तो हमें पता चलता है कि हम लाभ कमा रहे हैं या घाटा उठा रहे हैं। आंकड़े बताते हैं कि विश्व पारिस्थितिकीय अतिक्रमण की स्थिति में रह रही है। **लिंविंग प्लेनेट रिपोर्ट (Living Planet Report)** 2014 के अनुसार वर्ष 2010 में वैश्विक पारिस्थितिकीय फुटप्रिंट 18.1 बिलियन वैश्विक हैक्टेयर (Global Hectare – GHA) अथवा प्रति व्यक्ति 2.6 (Global Hectare – GHA) था और पृथ्वी की कुल जैव क्षमता 12 बिलियन (Global Hectare – GHA) अथवा प्रतिव्यक्ति 1.3 (Global Hectare – GHA) थी। जैव क्षमता विश्व भर में समान रूप से व्याप्त नहीं है। दुर्भाग्यवश कम आय वाले देशों का सबसे छोटा फुटप्रिंट होता है लेकिन वे सबसे बड़ी पारिस्थितिकीय हानियों को झेलते हैं। संयुक्त राष्ट्र के सामान्य परिदृश्य यह इंगित करते हैं कि यदि वर्तमान आबादी और खपत की प्रवृत्ति जारी रहती है तो वर्ष 2030 तक हमें अपने भरण-पोषण के लिए दो पृथ्वी की जरूरत पड़ेगी।

मेकिन्जी रिपोर्ट के अनुसार, भारत शहरी दावानल की दहलीज पर खड़ा है। भारतीय शहरों की आबादी 2008 में 340 मिलियन से बढ़कर वर्ष 2030 तक 590 मिलियन हो जाएगी। 2030 के दशक में भारत के सबसे बड़े शहर बहुत से बड़े-बड़े देशों से भी अधिक बड़े होंगे। जैसे-जैसे आबादी बढ़ेगी, प्रत्येक मुख्य सेवा की मांग में पांच से सात गुना बढ़ोत्तरी हो जाएगी। गरीबी उन्मूलन, खाद्य और ऊर्जा सुरक्षा, शहरी अपशिष्ट प्रबंधन और पानी की कमी मौजूदा चुनौतियों के साथ मिलकर के प्रवृत्तियां हमारे निर्मित संसाधनों पर और अधिक दबाव डालेंगी। यदि इन दोनों घटकों को और अधिक अलग नहीं किया गया तो इसके परिणामस्वरूप ऊर्जा की जरूरतों में बढ़ोत्तरी होगी और उत्सर्जनों में वृद्धि होगी। लेकिन साथ ही इस चुनौती में बड़े अवसर छिपे बैठे हैं। बहुत से देशों के विपरीत, भारत की अधिकांश जनसंख्या में युवा है और इसलिए जनसांख्यिकीय लाभांश जनसंख्या से लाभ उठाए जा सकते हैं। वर्ष 2030 के भारत का आधा से अधिक हिस्सा अभी निर्मित किया जाना शेष होने के चलते, हमारे पास मौका है कि हम जीवाश्म ईंधन पर आधारित ऊर्जा प्रणालियों और कार्बन लॉकइन पर अत्यधिक निर्भर होने से बचें, जिसका सामना आज बहुत से औद्योगीकृत देश कर रहे हैं। एक सजग नीतिगत रूपरेखा, जिसमें विकास संबंधी जरूरतों और पर्यावरणीय मुद्दों, दोनों का ध्यान रखा जाए, इन चुनौतियों को अवसरों में बदल सकता है।

सितम्बर 2015 में समझौता निष्पादन के लिए निर्धारित 2015 के बाद विकास एजेंडा की तरफ राजनीतिक हलचल बढ़ती जा रही है। इसी दिशा में रियो में जून 2012 में आयोजित सतत विकास संबंधी संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन (रियो +20) के परिणाम दस्तावेज **The Future We Want** (हम जो भविष्य चाहते हैं) द्वारा अधिदेशित तीस सदस्यीय खुले कार्यदल ने 17 सतत विकास लक्ष्य निर्धारित किए। इन सतत विकास लक्ष्यों में व्यापक स्तर पर सम्पोषीय विकास के मुद्दे शामिल हैं और इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए एक व्यापक उद्देश्य के तौर पर कार्यान्वियन के साधनों पर भी ध्यान केन्द्रित किया गया है। इन लक्ष्यों को संयुक्त राष्ट्र के 2015 विकास के बाद की स्थिति में समेकित किए जाने की संभावना है। वर्तमान में, 2015 के बाद एजेंडा और सतत विकास लक्ष्यों की प्रक्रियाएं इस वर्ष अपने समापन की ओर तेजी से बढ रही हैं।

संक्षेप में, जलवायु परिवर्तन और सतत विकास के मुद्दे पर अंतर्राष्ट्रीय और घरेलू मोर्चे पर राजनीतिक जागरूकता काफी बढ़ गई है। भारत समेत अनेक विकासशील देशों में जलवायु परिवर्तन की समस्याओं का समाधन करने में उल्लेखनीय प्रगति की गई है। वर्ष 2015 में, पेरिस करार से पहले अनेक कार्यक्रम आयोजित किए जाने की संभावना है। आज जबकि हम जलवायु परिवर्तन पर 2015 करार के बाद

की स्थितियों के लिए मिलकर कार्य कर रहे हैं, यह सुनिश्चित करना बेहद जरूरी है कि नया समझौता, व्यापक सन्तुलित, साम्यपूर्ण और व्यवहारिक हो। इस समझौते में, भारत जैसे विकासशील देशों की वास्तविक जरूरतों का समाधान किया जाना चाहिए। इस समझौते में, उनके लिए साम्यपूर्ण विकास की गुंजाइश होनी चाहिए ताकि वे सतत विकास कर सके और गरीबी मिटा सकें।

यह हासिल करने के लिए जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र का फ्रेमवर्क कन्वेंशन (United Nations Framework Conventionon Climate Change) के सिद्धान्तों और उपबंधों का पालन करना अति आवश्यक है। अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि वैश्विक जलवायु संबंधी कार्रवाई, कार्यान्वियन के तरीकों विशेषकर वित्त साधनों और प्रौद्योगिकी पर बहुत अधिक निर्भर है, जिसके लिए इस करार में पर्याप्त ध्यान दिए जाने की जरूरत है। जैसा कि **प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी** ने सितम्बर 2014 **में संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा** में कहा **"हमें इन चुनौतियों का सामना करने में अपनी जिम्मेदारियां उठाने में ईमानदार होना चाहिए। विश्व समुदाय सामूहिक कार्रवाई के खूबसूरत संतुलन पर सहमत हुआ है साझी लेकिन अलग-अलग जिम्मेदारियां। यही सतत कार्रवाई का आधार भी होना चाहिए।"**

3.7 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. लिविंग प्लेनेट रिपोर्ट 2014 के अनुसार वर्ष 2010 में वैश्विक पारिस्थितिकीय फुटप्रिंट.................. बिलियन जीएचए था। (10.5 **या** 18.1)
2. 2030 तक भारत की शहरी आबादी .... मिलियन होने की संभावना है। (590 **या** 700)
3. जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र का फ्रेमवर्क कन्वेंशन (United Nations Framework Conventionon Climate Change) का मुख्यालय ....में स्थित है। (बर्लिन **या** जिनेवा)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. वैश्विक पारिस्थितिकीय अतिक्रमण मानव गतिविधियों द्वारा पारिस्थितिकी तंत्र पर डाले गए दबाव का संकेत दर्शाता है।
2. पेरिस करार के संदर्भ में प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने वैश्विक जलवायु संबंधी कार्रवाई की आवश्यकता को रेखांकित किया।

3.8 सारांश (Summary)

इस अध्याय में आपने सतत विकास की अवधारणा को समझा जिसे 1987 में संयुक्त राष्ट्र को अपनी रिपोर्ट में पर्यावरण और विकास (ब्रुंडलैंड आयोग) पर विश्व आयोग ने अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए भविष्य की पीढ़ी की क्षमता समझौता किए बिना वर्तमान की जरूरतों को पूरा करने के रूप में टिकाऊ विकास के रूप में परिभाषित किया। हमने सतत विकास लक्ष्य के 17 लक्ष्यों पर चर्चा की, जो गरीबी उन्मूलन, खाद्य सुरक्षा, स्वास्थ्य, शिक्षा, और जलवायु परिवर्तन जैसे महत्वपूर्ण मुद्दों को संबोधित करते हैं।

इस अध्याय में यह भी चर्चा की गयी है कि विभिन्न नीतियों के माध्यम से किस प्रकार पारिस्थितिकी चिंताओं को विकास प्रक्रिया में समाहित किया गया है ताकि पर्यावरण को अधिक क्षति पहुंचाए बगैर आर्थिक विकास किया जा सकता है। इस अध्याय में, हमने सतत विकास के प्रमुख सिद्धांतों और लक्ष्यों के बारे में सीखा। सतत विकास का मतलब है कि हम पर्यावरण, आर्थिक और सामाजिक क्षेत्रों में संतुलन बनाए रखें ताकि भविष्य के लिए बेहतर दुनिया बना सकें।

पर्यावरणीय संधारणीयता पर ध्यान केंद्रित करते हुए, हमने देखा कि प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा और जैव विविधता का संरक्षण कितना महत्वपूर्ण है। पर्यावरणीय समस्याओं जैसे जलवायु परिवर्तन और प्रदूषण को कम करने के लिए नई और हरी प्रौद्योगिकियों का उपयोग करना चाहिए। आर्थिक संधारणीयता

पर चर्चा करते हुए, यह समझा कि विकास परियोजनाओं को आर्थिक रूप से मजबूत और स्व-निर्भर बनाना आवश्यक है। इसमें गरीबी उन्मूलन, आय बढ़ाना, हरित उद्यमों को बढ़ावा देना शामिल है। इसके लिए सही बजट और वित्तीय योजनाओं की भी जरूरत है। सामाजिक संधारणीयता की ओर, हमने सीखा कि सभी लोगों की बुनियादी जरूरतों जैसे शिक्षा और स्वास्थ्य को पूरा करना आवश्यक है। समाज के हर वर्ग की भागीदारी और सहयोग से संसाधनों का सही ढंग से उपयोग किया जा सकता है। संस्थागत संधारणीयता पर ध्यान देते हुए, यह महत्वपूर्ण है कि पर्यावरण और समाज से जुड़ी नीतियों और योजनाओं का सही तरीके से कार्यान्वयन और निगरानी की जाए। इसके लिए सक्षम और प्रेरित टीमों की जरूरत होती है।

यह भी जाना कि जनसंख्या, पर्यावरण और विकास के बीच अंतर संबंध जटिल है। महत्वपूर्ण कारकों के अलावा, कुशल जनशक्ति क्षमता निर्माण, मजबूत राजनीतिक इच्छा शक्ति और प्रभावी कार्यान्वयन निगरानी तंत्र सहित संस्थागत मजबूती, सतत विकास के सफल परिणाम के लिए समान रूप से महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

3.9 शब्दावली (Glossary)

- **सतत विकास (Sustainable Development)** - यह वर्तमान पीढ़ी की जरूरतों को पूरा करने के साथ-साथ भविष्य की पीढ़ियों की जरूरतों को पूरा करने की क्षमता को समझौता किए बिना करना है।
- **ब्रुंडलैंड आयोग(Brundtland Commission)** - 1987 में संयुक्त राष्ट्र द्वारा स्थापित आयोग, जिसने टिकाऊ विकास की परिभाषा प्रस्तुत की।
- **एजेंडा 21 (Agenda21)** - 1992 में रियो डी जेनेरो में आयोजित पृथ्वी शिखर सम्मेलन के दौरान अपनाया गया एक वैश्विक कार्य योजना, जो सतत विकास के तरीके पर एक नीला प्रिंट प्रदान करता है।
- **सतत विकास लक्ष्य (Sustainable Development Goals - SDGs)** - संयुक्त राष्ट्र द्वारा निर्धारित 17 वैश्विक लक्ष्यों का सेट जो 2030 तक वैश्विक सतत विकास को प्रोत्साहित करता है।
- **पर्यावरण संधारणीयता (Environmental Sustainability)** - प्राकृतिक संसाधनों और जीवन समर्थन प्रणाली की संजीवनी शक्ति को बनाए रखने से संबंधित।
- **आर्थिक संधारणीयता (Economic Sustainability)** - विकास परियोजनाओं की आर्थिक स्व-जीवितता को बढ़ावा देने के लिए बजट पारदर्शिता और वित्तीय प्रोत्साहन को सुनिश्चित करना।
- **सामाजिक संधारणीयता (Social Sustainability)** - बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति और मानव पर्यावरण की गुणवत्ता में सुधार पर केंद्रित है।
- **संस्थागत संधारणीयता (Institutional Sustainability)** - सतत विकास के लिए नीतियों, योजनाओं, कानूनों और मानकों की प्रभावी कार्यान्वयन और निगरानी की आवश्यकता।
- **पारिस्थितिकीय अतिक्रमण (Ecological Overshoot)** - जब मानव गतिविधियाँ पारिस्थितिकी तंत्र की क्षमताओं को पार कर जाती हैं जिससे संसाधनों का अत्यधिक उपयोग और जैव विविधता का नुकसान होता है।
- **जैव क्षमता (Biocapacity)** - जैविक क्षमता को जनसंख्या की अप्रतिबंधित वृद्धि द्वारा वर्णित किया जाता है जिसके परिणामस्वरूप उस जनसंख्या की अधिकतम वृद्धि होती है। जैविक क्षमता किसी प्रजाति का उच्चतम संभव महत्वपूर्ण सूचकांक है इसलिए जब प्रजाति की जन्म दर सबसे अधिक और मृत्यु दर सबसे कम होती है। ।

- **वैश्विक हेक्टेयर (Global Hectare – gha) -** लोगों या गतिविधियों के पारिस्थितिक पदचिह्न और पृथ्वी या उसके क्षेत्रों की जैव क्षमता के लिए एक माप इकाई है।
- **जनसांख्यिकीय लाभांश (Demographic Dividend) -** किसी देश की जनसंख्या की संरचना में बदलाव के कारण होने वाली आर्थिक वृद्धि है, जो आमतौर पर प्रजनन और मृत्यु दर में गिरावट का परिणाम है। जनसांख्यिकीय लाभांश तब आता है जब कामकाजी आबादी की उत्पादकता में वृद्धि होती है, जिससे प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि होती है।
- **लिविंग प्लेनेट रिपोर्ट (Living Planet Report)** - वैश्विक पारिस्थितिकी तंत्र की स्थिति और जैव विविधता के रुझानों पर रिपोर्ट, जो पर्यावरणीय प्रभावों का आकलन करती है।
- **पेरिस करार (Paris Agreement)** - 2015 में जलवायु परिवर्तन के खिलाफ अंतरराष्ट्रीय समुदाय द्वारा किए गए एक महत्वपूर्ण समझौते का नाम।
- **साम्यपूर्ण कार्बन (Equitable Carbon)** - जलवायु परिवर्तन की कार्रवाई में विकसित और विकासशील देशों के बीच न्यायपूर्ण वितरण और जिम्मेदारी का सिद्धांत।
- **जनशक्ति (Manpwer) -** उन लोगों की कुल संख्या है जो किसी काम को पूरा करने के लिए काम कर सकते हैं। जनशक्ति शब्द का अर्थ 'श्रम बल', 'कार्यबल', 'श्रमिक', या 'लोग' हो सकता है और यह पुरुषों और महिलाओं दोनों पर लागू होता है।
- **गरीबी उन्मूलन (Poverty Eradication)-** गरीबी को कम करने या खत्म करने के उद्देश्य से किए जाने वाले प्रयासों, रणनीतियों और नीतियों को संदर्भित करता है।
- **खाद्य सुरक्षा (Food Security)-** किसी व्यक्ति की पौष्टिक और पर्याप्त मात्रा में भोजन तक पहुँचने की क्षमता का माप है। खाद्य सुरक्षा की कुछ परिभाषाएँ निर्दिष्ट करती हैं कि भोजन को व्यक्ति की खाद्य प्राथमिकताओं और सक्रिय और स्वस्थ जीवन शैली के लिए आहार संबंधी ज़रूरतों को भी पूरा करना चाहिए।
- **लैंगिक समानता (Gender Equality) -** महिलाओं और पुरुषों के प्रति निष्पक्ष होने की प्रक्रिया है। निष्पक्षता सुनिश्चित करने के लिए, महिलाओं के ऐतिहासिक और सामाजिक नुकसान की भरपाई के लिए अक्सर रणनीतियाँ और उपाय उपलब्ध होने चाहिए जो महिलाओं और पुरुषों को समान स्तर पर काम करने से रोकते हैं। समानता से समानता आती है।
- **स्वच्छ जल (Clean Water) –** इसे पीने योग्य पानी अथवा पीने का पानी भी कहा जाता है, सतही और ज़मीनी स्रोतों से आता है और इसे ऐसे स्तरों पर उपचारित किया जाता है जो उपभोग के लिए राज्य और संघीय मानकों को पूरा करते हैं। प्राकृतिक स्रोतों से प्राप्त पानी को सूक्ष्मजीवों, बैक्टीरिया, विषैले रसायनों, वायरस और मल पदार्थों के लिए उपचारित किया जाता है।
- **जलवायु परिवर्तन (Climate Change) -** जलवायु परिवर्तन का मतलब तापमान और मौसम के पैटर्न में दीर्घकालिक बदलाव से है। ऐसे बदलाव प्राकृतिक हो सकते हैं, जो सूर्य की गतिविधि में बदलाव या बड़े ज्वालामुखी विस्फोटों के कारण हो सकते हैं।
- **हरित उद्यमी (Green Entrepreneur) -** टिकाऊ व्यावसायिक प्रथाओं, पर्यावरणीय मुद्दों, सामाजिक न्याय और पर्यावरण के अनुकूल उत्पादों को बढ़ावा देने पर ध्यान केंद्रित करते हैं। उनका उद्देश्य अर्थव्यवस्था, समुदाय और पर्यावरण पर सकारात्मक प्रभाव डालना है।
- **हरित सूक्ष्म उद्यमों (Green Micro Entreprises) -** वे उद्योग हैं जिनमें काम करने वालों की संख्या एक सीमा से कम होती है तथा उनका वार्षिक उत्पादन (turnover) भी एक सीमा के अन्दर रहता है। किसी भी देश के विकास में इनका महत्वपूर्ण स्थान है। जैसे – बैटरी इलैक्ट्रिक वाहन ई-रिक्शा, संपीड़ित वायु वाहन, सौर ऊर्जा गैजेट, पॉली हाउस।
- **सार्वजनिक स्वास्थ्य (Public Health) –** यह लोगों और उनके समुदायों के स्वास्थ्य की रक्षा और सुधार का विज्ञान है। यह कार्य स्वस्थ जीवन शैली को बढ़ावा देने, बीमारी और चोट की रोकथाम

पर शोध करने और संक्रामक रोगों का पता लगाने, उन्हें रोकने और उनका जवाब देने के द्वारा प्राप्त किया जाता है।

- **जलसंभर (Watershed)-** जलसंभर या द्रोणी उस भौगोलिक क्षेत्र को कहते हैं जहाँ वर्षा अथवा पिघलती बर्फ़ का पानी नदियों, नहरों और नालों से बह कर एक ही स्थान पर एकत्रित हो जाता है। उस स्थान से या तो एक ही बड़ी नदी में पानी जलसंभर क्षेत्र से निकास कर के आगे बह जाता है या फिर किसी सरोवर, सागर, महासागर या दलदली इलाक़े में जाकर मिल जाता है।

3.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. 18.1   2. 590   3. जिनेवा

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. सत्य   2. सत्य

3.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- Andriantiatsaholiniaina, L. A., Kouikoglou, V. S., & Phillis, Y. A. (2004). ***Evaluating strategies for sustainable development: fuzzy logic reasoning and sensitivity analysis. Ecological Economics***, 48(2), 149–172. https://doi.org/10.1016/j.ecolecon.2003.08.009
- Bhalachandran, G. (2011). ***Kautilya's model of sustainable development***. Humanomics, 27(1), 41–52. https://doi.org/10.1108/08288661111110169
- Chen, H., & Yada, R. (2011). ***Nanotechnologies in agriculture: New tools for sustainable development***. Trends in Food Science & Technology, 22(11), 585–594. https://doi.org/10.1016/j.tifs.2011.09.004
- Dev, R. (n.d.-a). ***Corporate Social Responsibility (CSR) in Indian Banking Sector: An analytical study of ICICI bank limited***.
- Dev, R. (n.d.-b). ***Corporate Social Responsibility in India: Reaching to Unreached?***
- ***India follows a holistic approach towards its 2030 Sustainable Development Goals (SDGs).*** (n.d.). Retrieved February 13, 2020, from https://pib.gov.in/newsite/PrintRelease.aspx?relid=191192
- Kaygusuz, K. (2012). ***Energy for sustainable development: A case of developing countries. Renewable and Sustainable Energy Reviews***, 16(2), 1116–1126. https://doi.org/10.1016/j.rser.2011.11.013

- Oparaocha, S., & Dutta, S. (2011). ***Gender and energy for sustainable development. Current Opinion in Environmental Sustainability***, 3(4), 265–271. https://doi.org/10.1016/j.cosust.2011.07.003
- Smyth, J. C. (1995). ***Environment and Education: a view of a changing scene. Environmental Education Research***, 1(1), 3–120. https://doi.org/10.1080/1350462950010101

3.12 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

- ***Theories of Sustainable Development*** (2015). Edited by Judith C. Enders and Moritz Remig, Routledge, 2 Park Square, Milton Park, Abingdon, Oxon OX14 4RN
- Simon Dresner (2008). ***The Principles of Sustainability***, Earthscan Publication, Dunstan House, 14a St Cross St, London, EC1N 8XA, UK
- Jennifer A. Elliott (2013). ***An Introduction to Sustainable Development***, Routledge, 2 Park Square, Milton Park, Abingdon, Oxon OX14 4RN Island Publishing House, Inc., Philippines

3.13 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay type Questions)

1. सतत विकास का उद्देश्य एक समावेशी और संतुलित समाज का निर्माण करना है सतत विकास के सिद्धांत और लक्ष्यों की व्यापक समीक्षा कीजिए।
2. सतत विकास के चार प्रमुख मापदंडों-पर्यावरणीय संधारणीयता, आर्थिक संधारणीयता, सामाजिक संधारणीयता, और संस्थागत संधारणीयता का विस्तृत से विश्लेषण कीजिए ।
3. सतत विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए प्रभावी नीतियों और वैश्विक साझेदारी की आवश्यकता पर विस्तृत चर्चा कीजिए।

इकाई 4 सतत विकास के प्रारूप
(Models of Sustainable Development)

4.1 प्रस्तावना (Introduction)
4.2 उद्देश्य (Objectives)
4.3 सतत विकास प्रारूपों की आवश्यकता (Need for Sustainable Development Models)
4.4 सतत विकास के विभिन्न प्रारूप (Different Models of Sustainable Development)
4.4.1 तीन स्तंभ प्रारूप (Three Pillar Model)
4.4.2 पूंजी स्टॉक प्रारूप (Capital Stock Model)
4.4.3 प्रिज्म प्रारूप (Prism Model)
4.4.4 अंडा प्रारूप (The Egg Model)
4.4.5 एटकिसन का पिरामिड प्रारूप (Atkisson’s Pyramid Model)
4.4.6 अमीबा प्रारूप (Amoeba Model)
4.4.7 तीन पैरों वाला तिपाई प्रारूप (Three-Legged Stool Model)
4.4.8 दो-स्तरीय संधारणीयता संतुलन प्रारूप (Two-Tier Sustainability Equilibrium Model)
4.5 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)
4.6 सांराश (Summary)
4.7 शब्दावली (glossary)
4.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)
4.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
4.10 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Useful Text)
4.11 निबंधात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

4.1 प्रस्तावना (Introduction)

सतत विकास के सन्दर्भ में यह चौथी इकाई हैं, इससे पहले की इकाई में आपने सतत विकास के बारे में अध्ययन किया किया और जाना कि सतत विकास परिवर्तन की एक प्रक्रिया है जिसमें समान रूप से संसाधनों का शोषण, निवेश की दिशा, तकनीकी विकास और संस्थागत परिवर्तन का अभिविन्यास सुनिश्चित करना है और मानव की दोनों वर्तमान और भविष्य की जरूरतों और आकांक्षाओं को पूरा करने की क्षमता को बढ़ाना है।

साथ ही आपने जाना सतत विकास के लक्ष्यों के बारें में अध्ययन किया हैं और जाना कि सतत विकास ,समाज के समग्र विकास को एक नई ऊँचाई पर ले जाने का लक्ष्य रखता है। ये लक्ष्य विभिन्न पहलुओं जैसे गरीबी उन्मूलन ,खाद्य सुरक्षा ,स्वास्थ्य, शिक्षा ,और पर्यावरणीय संरक्षण को सम्मिलित करते हैं और इनका उद्देश्य एक समावेशी और संतुलित समाज का निर्माण करना है।

आपने जाना कि दुनिया भर से गरीबी और अन्य बुराइयों को मिटाने के लिए सहस्राब्दि विकास लक्ष्य को विश्व नेताओं द्वारा अपनी राजनीतिक सीमाओं के भीतर आठ सामाजिक और आर्थिक चिंताओं से निपटने के लिए अपनाया गया था। ये लक्ष्य वैश्विक दृष्टि और व्यक्तिगत जिम्मेदारी के साथ तय किए गए थे।

प्रस्तुत इकाई में आप पढेंगे की किस प्रकार सतत विकास के लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सकता हैं। कुछ अर्थशास्त्री एवं वैज्ञानिकों ने कुछ प्रारूप तैयार किए हैं जिनकी सहायता से हम अपनी अर्थव्यवस्था को गति प्रदान कर सकते हैं एवं साथ ही पृथ्वी और पर्यावरण का ध्यान भी रख सकते हैं। इस इकाई में आप एक-एक करके इन सभी प्रारूपों को विस्तार से पढ़ेगें एवं साथ ही जानेंगे कि किसी देश में सतत विकास के लिए इन प्रारूपों को महत्व क्यों दिया जाता हैं।

4.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- ✓ सतत विकास प्रारूप के महत्व को जानेंगे।
- ✓ सतत विकास के अलग अलग प्रारूप को पढेंगे।
- ✓ सतत विकास के तीन स्तंभ प्रारूप को पढेंगे।
- ✓ सतत विकास के प्रिज्म प्रारूप को जानेंगे।
- ✓ सतत विकास के अंडा प्रारूप को पढेंगे।
- ✓ सतत विकास के पूंजी स्टॉक प्रारूप को जानेंगे।
- ✓ सतत विकास के एटकिसन का पिरामिड प्रारूप को पढेंगे।
- ✓ सतत विकास के अमीबा प्रारूप को जानेंगे।
- ✓ सतत विकास के तीन पैरों वाला तिपाई प्रारूप को पढेंगे।
- ✓ दो-स्तरीय संधारणीयता संतुलन प्रारूप को जानेंगे।

4.3 सतत विकास प्रारूपों की आवश्यकता (Need for Sustainable Development Models)

आर्थिक प्रारूप (Economic model), वास्तविकता का एक सरलीकृत विवरण है जिसे आर्थिक व्यवहार के बारे में परिकल्पनाएँ प्रदान करने के लिए डिज़ाइन किया गया है और जिसका परीक्षण किया जा सकता है। आर्थिक प्रारूप (Economic model) की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि यह मूलत: व्यक्तिपरक प्रकृति का है क्योंकि यह आर्थिक परिणामों का कोई वस्तुनिष्ठ माप नहीं हैं। एक आर्थिक प्रारूप (Economic model) में मान्यताएं एवं आलोचनाएं भी शामिल होती हैं जो उस प्रारूप (model) की सीमाओं को दर्शाती हैं। इस इकाई में आप विभिन्न प्रारूपों(models) के माध्यम से सतत विकास का

अध्ययन करेंगे। सतत विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए, ये प्रारूप (model) एक रूपरेखा का कार्य करते हैं।

4.4 सतत विकास के विभिन्न प्रारूप (Different Models of Sustainable Development)

सतत विकास, मानव विकास लक्ष्यों को पूरा करने के लिए संगठित सिद्धांत है। यह प्राकृतिक प्रणालियों द्वारा प्राकृतिक संसाधनों और पारिस्थितिकी तंत्र सेवाएं प्रदान करने की क्षमता को बनाए रखने पर जोर देता है। सतत विकास की अवधारणा आर्थिक विकास, पर्यावरण की गुणवत्ता एवं सामाजिक समानता के बीच संबंधों की खोज करती है। सतत विकास तक पहुँचने के लिए हमें कुछ प्रारूप (model) की आवश्यकता पड़ती हैं जिनका अनुसरण करके हम सतत विकास को प्राप्त कर सकते हैं। यह दिए हुए प्रारूप (model) एक मानचित्र हैं जिनकी मदद से हम विकास के साथ-साथ पर्यावरण का भी ख्याल रख सकते हैं एवं संसाधनों को बचा सकते हैं। इन प्रारूप (model) में बताया गया हैं की किसी भी देश में किस तरह पर्यावरण एवं संसाधनों का इष्टतम उपयोग किया जाए जिससे अर्थव्यवस्था के साथ-साथ पृथ्वी का भी ध्यान रखा जा सके। इकाई में आगे आप सतत विकास के लिए दिए गए प्रारूप (model) को एक-एक कर विस्तार से पढेंगे।

4.4.1 तीन स्तंभ प्रारूप (Three Pillar Model)

अर्थव्यवस्था, समाज और पर्यावरण को संधारणीयता के तीन स्तंभ माना जाता है।

सामाजिक संधारणीयता (Social Sustainability) में पर्यावरण न्याय, मानव स्वास्थ्य, शिक्षा आदि सम्मिलित हैं। अगर हम सामाजिक संधारणीयता (Social Sustainability) को बढ़ाने के लिए प्रयास करते हैं तो इससे पर्यावरण को भी लाभ हो सकता है। उदाहरण के लिए, हमारे आहार विकल्पों का प्रभाव पर्याप्त मात्रा में मानव के स्वास्थ्य और पर्यावरण के स्वास्थ्य पर पड़ सकता है इसलिए स्वस्थ भोजन (healthy Food) की पक्षपोषित करने (advocating) से पर्यावरण को भी लाभ हो सकता है।

आर्थिक संधारणीयता (Economic Sustainability) में रोजगार सृजन, नवाचार, रोजगार और इष्टतम (Optimal) लागत-लाभ विश्लेषण (Cost-Benefit Analysis) के लिए पारिस्थितिकी तंत्र की सेवाओं का उचित लेखा-जोखा सम्मिलित है। शोध से पता चलता है कि रोजगार की उच्च दर से अर्थव्यवस्था और लोगों की सामाजिक भलाई दोनों को संसाधन सुरक्षा के माध्यम (Means of resource Protection) से लाभ पहुँचाती हैं। आप जानते ही होंगे कि आज की गिग अर्थव्यवस्था (Gig Economy) सामाजिक संधारणीयता (Social Sustainability) और आर्थिक संधारणीयता (Economic Sustainability) दोनों को एक दूसरे के साथ जोड़ देती है। गिग अर्थव्यवस्था (Gig Economy) के कारण कई लोग कंपनियों की आर्थिक संधारणीयता (Economic Sustainability) में योगदान करते हैं परन्तु बदले में उन्हें रोज़गार के ज़रिए मिलने वाली सामाजिक सुरक्षा प्राप्त होती। कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artifical Intelligence), रोबोटिक्स (Robotics) के विकास जैसी तकनीक कई लोगों को बेरोज़गार बना सकती है। इसलिए आर्थिक संधारणीयता (Economic Sustainability) बनाने के लिए नवाचार को रोज़गार के समानांतर होना चाहिए।

पर्यावरण एवं प्रकृति ही सब कुछ है। पर्यावरण के बिना, हम कुछ भी नहीं हैं। **पर्यावरणीय संधारणीयता** (Environmental Sustainability) मुख्य रूप से पर्यावरण की भलाई पर केंद्रित है। आजकल, हम पर्यावरण प्रदूषण, ग्रीन हाउस प्रभाव, जलवायु परिवर्तन आदि के कारण विभिन्न

प्रकार की समस्याओं का सामना कर रहे हैं। पर्यावरण की रक्षा करने से लोगों को भी लाभ होता है क्योंकि पर्यावरण ही मनुष्य के लिए भोजन, आवास, पानी आदि का मुख्य स्रोत है।

यह प्रारूप (model) अर्थव्यवस्था, समाज और पर्यावरण का एक साथ संतुलन बनानें एवं इन तीनों तत्वों पर ध्यान देने की बात करता हैं। सतत विकास के लिए हमें इन तीनों तत्वों को साथ लेकर ही चलना होगा और साथ ही तीनों पर ध्यान भी देना होगा, इस प्रारूप (model) को आप नीचे दिए गये चित्र की मदद से भी समझ सकते हैं।

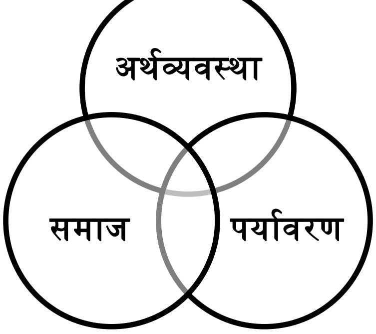

चित्र 4.1 तीन स्तंभ प्रारूप

4.4.2 पूंजी स्टॉक प्रारूप (Capital Stock Model)

विश्व बैंक के एक अध्ययन समूह ने वर्ष 1994 में, 'सतत विकास का पूंजी स्टॉक' (Capital Stock of Sustainable Development) नामक प्रारूप विकसित किया था। पर्यावरणीय स्टॉक, आर्थिक स्टॉक और सामाजिक स्टॉक इसका मुख्य हिस्सा है। इसका मूल विचार यह था कि जब हम केवल ब्याज पर जीते हैं और पूंजी पर नहीं, तब समृद्धि का आधार बना रहता है। हालाँकि यदि हम पदार्थ का उपभोग करते हैं तो लंबे समय में, हमारे अस्तित्व के साधन (means of Survival) खतरे में पढ़ जाते हैं।

पारिस्थितिक पूंजी की परिभाषा में नियोजन प्रक्रिया के लिए जैव-विविधता, भू-दृश्य, खनिज संसाधन, स्वच्छ हवा और स्वस्थ पानी सम्मिलित हैं। मानव और सामाजिक पूंजी की परिभाषा में स्वास्थ्य, सामाजिक सुरक्षा, सामाजिक सामंजस्य, स्वतंत्रता, न्याय, अवसर की समानता और शांति सम्मिलित हैं।

$$\text{सतत विकास का पूंजी स्टॉक } (\textbf{Capital Stock of Sustainable Development}) = \sum \text{पर्यावरणीय स्टॉक} + \text{आर्थिक स्टॉक} + \text{सामाजिक स्टॉक}$$

4.4.3 प्रिज्म प्रारूप (Prism Model)

प्रिज्म प्रारूप वर्ष 2001 में, **स्टेनबर्ग (Stenberg)** द्वारा प्रस्तावित किया गया था। जिसे 'सतत विकास का प्रिज्म' प्रारूप और कभी कभी चार स्तंभ प्रारूप सतत विकास के चार आयामों के बारे में बताता है। **स्टेनबर्ग (Stenberg)** और **बोनियट (Bonnet)** (1998) से अनुकूलित 'सतत विकास का प्रिज्म' या कभी-कभी 'चार स्तंभ प्रारूप' (Four Pillar Model) भी कहा जाता है। यह प्रारूप (Model) मुख्यत: चार आयामों के बारे में बात करता है जोकि इस प्रकार है ***पहला***, आर्थिक आयाम, ***दूसरा***, पर्यावरणीय आयाम, ***तीसरा***, संस्थागत आयाम और ***चौथा*** , सामाजिक आयाम।

आर्थिक आयाम (Economic Dimension) का तात्पर्य मानव निर्मित पूंजी (man-made Capital) से है। **पर्यावरणीय आयाम** (Environmental Dimension) का तात्पर्य प्राकृतिक पूंजी (Natural Capital) से है। **सामाजिक आयाम** (Social Dimension) का तात्पर्य

मानव पूंजी (Human Capital) से है। **संस्थागत आयाम** (Institutional Dimension) का तात्पर्य सामाजिक पूंजी से है।

सतत विकास के प्रिज्म के प्रत्येक आयाम में अनिवार्यताएँ हैं। सतत विकास के इस प्रिज्म की आलोचना करते हुए, **कैन (Cenn)** तर्क देते हैं कहते है कि ***'आर्थिक आयाम में सभी चार आयामों से निकलने वाली संपत्तियाँ शामिल होती हैं, इस प्रकार विवरण और विश्लेषण में भ्रम पैदा होता है।'*** परिणामस्वरूप, वही लेखक 'सतत विकास का मुख्य प्रिज्म' को प्रस्तावित करता है।

इस प्रारूप में, उन्होंने प्रिज्म को सामाजिक और आर्थिक जैसे भावों के बोझ से मुक्त करने के लिए मन, कलाकृति, संस्थान और प्रकृति की शर्तों का इस्तेमाल किया जोकि व्याख्यात्मक होने की तुलना में अधिक भ्रामक प्रतीत होते हैं। **कैन (Cenn)** के मुख्य प्रिज्म प्रारूप को सामान्य प्रिज्म प्रारूप के साथ मिलाकर हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि **पर्यावरणीय आयाम (प्रकृति)** में सभी प्राकृतिक पूंजी सम्मिलित है जिसे गैर-नवीकरणीय और नवीकरणीय संसाधनों के स्टॉक में विभाजित किया जा सकता है। **आर्थिक आयाम (कलाकृतियाँ)** सभी मानव निर्मित भौतिक संपत्तियों, इमारतों और सड़कों जैसे संसाधनों का प्रतिनिधित्व करता है। **सामाजिक आयाम (मन)** को व्यक्तिगत विषय (वैश्विक नजरिया, ज्ञान एवं अनुभव) की जागरूकता के रूप में माना जा सकता है। **संस्थागत आयाम (सामाजिक पूंजी)** हमारे समाज के संगठन और लोगों के बीच संबंधों को सम्मिलित करता है, जिसे आप नीचें दिए गए चित्र की सहायता से भी समझ सकते हैं।

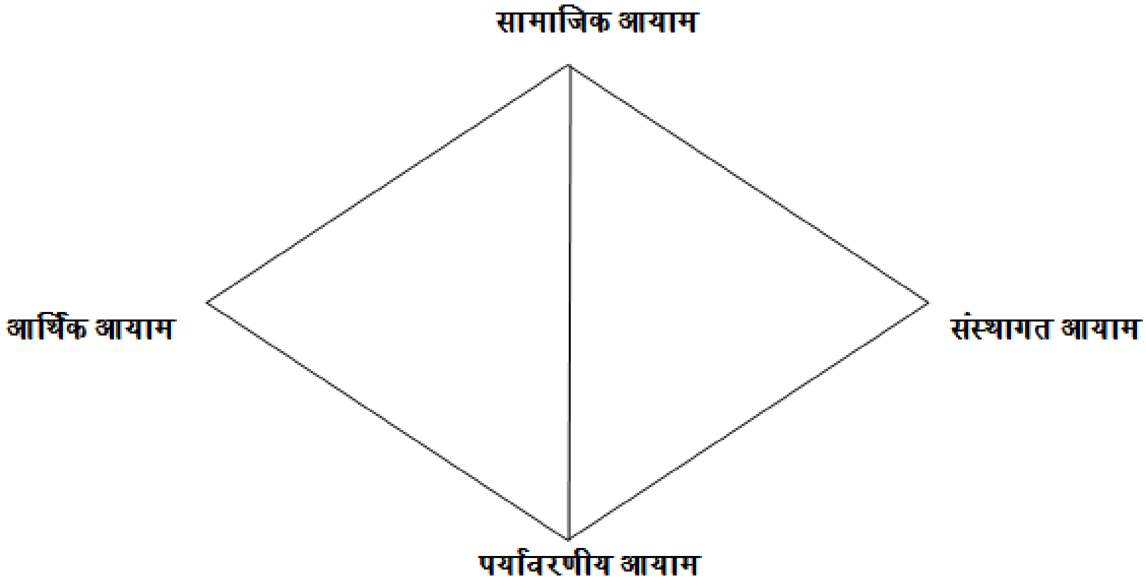

चित्र 4.2 प्रिज्म प्रारूप

4.4.4 अंडा प्रारूप (The Egg Model)

प्रिज्म प्रारूप की आलोचना की जा सकती है कि वे पर्यावरणीय आयाम (प्राकृतिक पूंजी) पर बहुत कम ध्यान देते हैं। अधिकांश लोगों के लिए, पर्यावरण मानव कल्याण के विकास के लिए पूर्व शर्त है। इस दृष्टिकोण के लिए संधारणीयता के एक ऐसे प्रारूप की आवश्यकता है जोकि पर्यावरण को केंद्र में रखता हो।

अंतर्राष्ट्रीय विकास अनुसंधान केंद्र (International Development Research Centre) ने वर्ष 1997 में 'संधारणीयता का अंडा' प्रस्तावित किया था। जिसे मूल रूप से प्रकृति

संरक्षण के लिए अंतर्राष्ट्रीय संघ (International Union for the Conservation of Nation - IUCN) द्वारा वर्ष 1994 में डिजाइन किया गया था।

सतत विकास = मानव कल्याण + पारिस्थितिकी तंत्र कल्याण

'संधारणीयता का अंडा' लोगों और पारिस्थितिकी तंत्र के मध्य के रिश्ते को एक घेरे के अंदर दूसरे घेरे (Circle) के रूप में प्रदर्शित करता है। उदाहरण के रूप में जिस प्रकार अंडे की जर्दी होती हैं। इसका तात्पर्य यह है कि लोग, पारिस्थितिकी तंत्र के भीतर हैं और दोनों ही एक दूसरे पर पूरी तरह से निर्भर रहते है। जिस तरह एक अंडा तभी अच्छा होता है जब उसका सफेद भाग और जर्दी दोनों अच्छे हों, उसी तरह एक समाज तभी अच्छा और संधारणीय होता है जब लोग और पारिस्थितिकी तंत्र दोनों अच्छे हों। किसी देश में सामाजिक और आर्थिक विकास तभी संभव हो सकता है जब पर्यावरण आवश्यक संसाधन प्रदान करता है, जैसे - कच्चा माल, नए उत्पादन स्थलों (Production Sites) के लिए जगह और नौकरियों, संवैधानिक गुण (मनोरंजन, स्वास्थ्य आदि)। इसलिए पारिस्थितिकी तंत्र को त्रिभुज या प्रिज्म प्रारूप के अन्य आयामों के लिए एक उच्चकोटी की प्रणाली (Superordinated System) के रूप में माना जाना चाहिए, जिसमें सामाजिक, आर्थिक और संस्थागत सम्मिलित होते है। बाद में यह केवल तभी समृद्ध हो सकते हैं जब वह पर्यावरण वहन क्षमता (Environmental carring Capacity) की सीमाओं के अनुकूल खुद को ढाल लें।

बुश-लुथी (Busch-Luthy) द्वारा वर्ष 1995 में, स्वतंत्र रूप से समरूप से एक अंडा प्रारूप प्रस्तावित किया गया था, जिसमें जर्दी में 'लोगों' के स्थान पर 'अर्थव्यवस्था' और 'समाज' को रखा गया था। हम सभी जानते हैं कि पारिस्थितिकी तंत्र के कल्याण के बिना सामाजिक और आर्थिक कल्याण संभव नहीं होगा और प्रारूप (Model) में, इसी तर्क का पालन करते हुए, उन अंडों में पारिस्थितिकी तंत्र को केंद्र में रखा था। हालाँकि दिखाए गए सभी प्रारूप (Model) वास्तविकता से बहुत सरल सारग्रहण (Abstractions) हैं लेकिन विकास के विकल्पों पर बहस करने और उनका बचाव करने के लिए स्थानिक नियोजन में उनका व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है।

स्थानिक विकास के भविष्य पर बहस में आजकल 'संधारणीयता' शब्द का बोलबाला है, जो (सतत) स्थानिक विकास के लिए दिशा-निर्देशों की ओर ले जाने वाली अवधारणाओं और रणनीतियों के लिए शुरुआती बिंदु है।

इसके अलावा, यह देखना आश्चर्यजनक है कि 'नई बात' के शीर्ष पर कूदने के लिए किस प्रकार 'अर्थव्यवस्था' (यानी निवेशक, निर्णयकर्ता, प्रमोटर आदि) का विपणन अपने हितों को बढ़ावा देने के लिए संधारणीयता की शर्तों को आत्मसात कर रहा है। ऐसा करने से आर्थिक हितों का प्रतिनिधित्व करते हुए वे उसी शब्दावली और तर्क-वितर्क का उपयोग करते हैं जिसका उपयोग पर्यावरणविदों द्वारा पहले भी पारिस्थितिकी तंत्र पर आर्थिक विकास के बढ़ते प्रभाव को रोकने के लिए विकसित किया गया था।

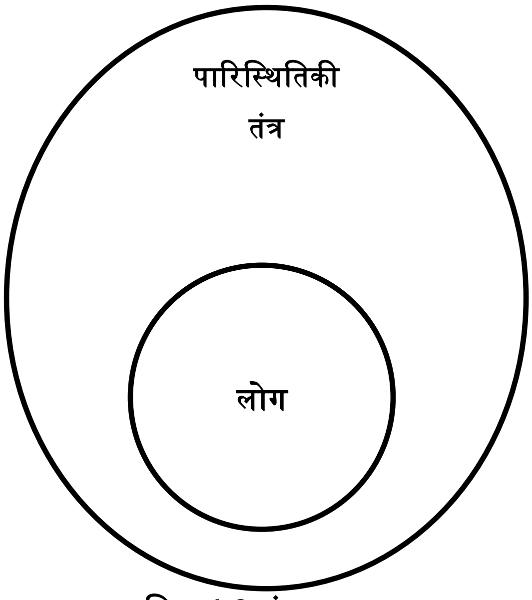

चित्र 4.3 अंडा प्रारूप

अंत में, अर्थशास्त्रियों और उद्यमियों द्वारा सतत विकास की अवधारणा को अपनाने से सतत विकास के कई आयामों के बीच समानता आई है जिससे प्राकृतिक मूल्यों और प्राथमिक संसाधनों के अधिक गहन संरक्षण और संवर्धन की आवश्यकता प्रबल हो गई है। दूसरे शब्दों में, पर्यावरण की गरज (thunder) चुरा ली गई है एवं कम से कम पारिस्थितिकीविदों के अगले दौर तक अदूरदर्शी भौतिक सुख के लिए प्रयास जारी रह सकते हैं। यही एक कारण है कि सतत विकास की वर्तमान अवधारणा की समीक्षा की जानी चाहिए एवं उस पर सवाल भी उठाए जाने चाहिए।

4.4.5 एटकिसन का पिरामिड प्रारूप (Atkisson's Pyramid Model)

हम इस प्रारूप को सतत विकास के लिए एक ख़ाका (Blue Print) के रूप में मान सकते हैं। 'पिरामिड' की संरचना पहले एक मजबूत आधार बनाने की प्रक्रिया के माध्यम से मार्गदर्शन करती है फिर जो महत्वपूर्ण, प्रभावी, करने योग्य और कुछ ऐसा है उस पर ध्यान केंद्रित कर सीमित करती है जिस पर हर कोई सहमत हो सकता है। इस प्रारूप (Model) के अनुसार समाज, पर्यावरण और आर्थिक विकास के बीच समझौते के रूप में अंतर सांस्कृतिक संबंध के द्वारा संधारणीयता विकसित की जा सकती हैं।

इस प्रारूप (model) में पिरामिड में पाँच स्तर हैं जिसमें ***पहला*** स्तर ***'क्या हो रहा है?'*** को दर्शाता हैं जिसकों मापने के लिए 'रुझानों/ प्रवृत्तियों को मापना' सूचक (indicators) का प्रयोग किया जाता हैं। ***दूसरा*** स्तर ***'ऐसा क्यों हो रहा है?'*** को दर्शाता हैं जिसके लिए 'कारणों, प्रभावों और फायदा उठाने के बिंदुओं के बीच संबंध बनाना' प्रणाली (Systems) का प्रयोग किया जाता हैं। ***तीसरा*** स्तर ***'हम क्या कर सकते हैं?'*** को दर्शाता हैं जिसके लिए 'ऐसे विचार जो फर्क लाते हैं' इस प्रकार के नवाचार का प्रयोग किया जाता हैं। ***चौथा*** स्तर ***'यह कैसे करें?'*** को दर्शाता हैं जिसके लिए 'विचार से वास्तविकता तक' इस प्रकार की रणनीतियों का प्रयोग किया जाता हैं। ***पांचवा एवं अंतिम*** स्तर ***'चलो इसे करते हैं!'*** को दर्शाता हैं जिसके लिए 'कार्यशाला से वास्तविक दुनिया तक' इस प्रकार की कार्यों या समझौतों का प्रयोग किया जाता हैं।

इस प्रारूप (model) को आप नीचें दिए गए चित्र से समझ सकते हैं:

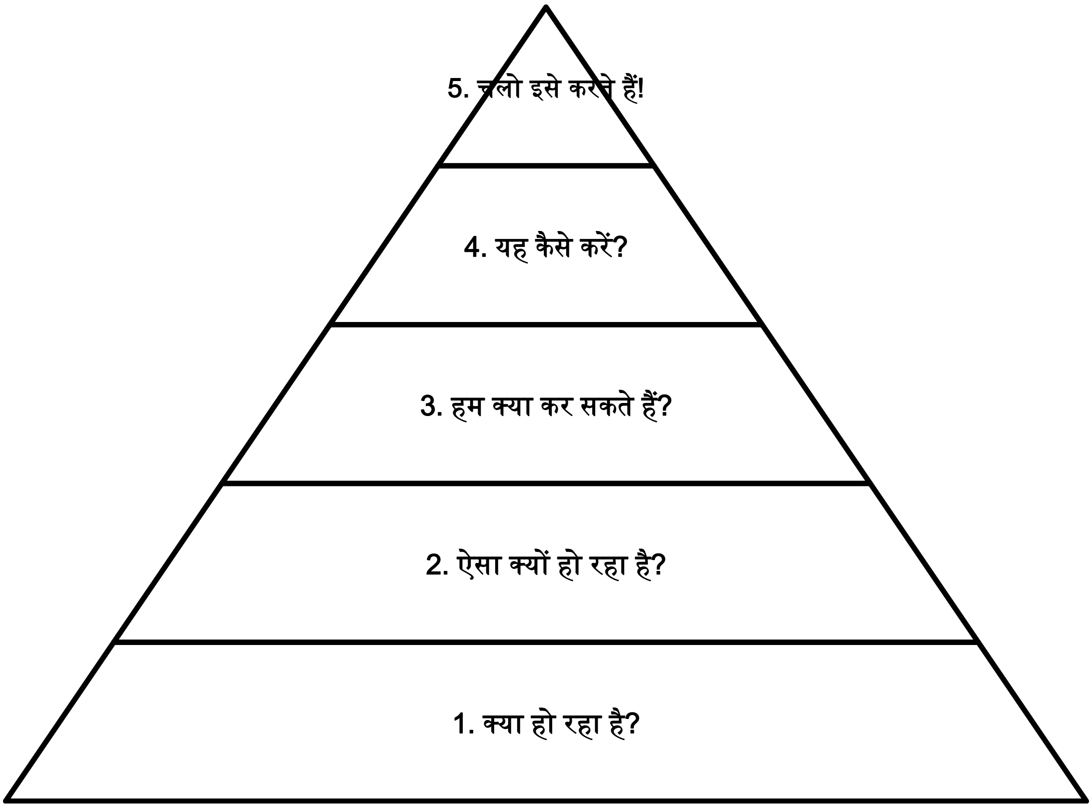

चित्र 4.4 एटकिसन का पिरामिड प्रारूप

4.4.6 अमीबा प्रारूप (Amoeba Model)

डच भाषा में अमीबा का तात्पर्य पारिस्थितिकी तंत्र के विवरण और मूल्यांकन के लिए सामान्य विधि से है। संधारणीयता की डिग्री का न्याय करने के लिए सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता संदर्भ मूल्यों का अस्तित्व है। अमीबा दृष्टिकोण का उपयोग किसी प्रणाली (system) की स्थिति को इष्टतम स्थिति (optimal condition) के सापेक्ष दृष्टिगत रूप से आंकने के लिए किया जाता है। यह प्रारूप (model) गोलाकार है जिसके बाहरी भाग में विभिन्न संकेतक लगे हुए हैं। किसी संकेतक की प्रभावशीलता उसकी स्पष्टता पर निर्भर करती है। उदाहरण के लिए जहाँ वैज्ञानिकों को मुख्य रूप से सांख्यिकीय रूप से उपयोगी और संभवतः कच्चे आंकड़ों में रुचि रखते हैं। वहीँ राजनीतिक निर्णय निर्माताओं को आंकड़ों के कुछ संक्षेपण (condensation) की आवश्यकता होती है और साथ ही आंकड़ों को राजनीतिक लक्ष्यों और मानदंडों से जोड़ना भी होता है। जनता स्पष्ट कथन और एक मूल्य के संक्षेपण (condensation) को पसंद करती है। आंकड़ों के सम्बन्ध में यहाँ आपको पता होना चाहिए कि किसी एक आदमी के लिए जो अपशिष्ट (waste) है वहीँ दूसरे आदमी के लिए खजाना हो सकता है।

अमीबा दृष्टिकोण एक ऐसा उपकरण हो सकता है जो पारिस्थितिकी तंत्र को राजनीतिक निर्णय निर्माताओं और जनता के लिए अधिक समझने योग्य बनाने में मदद करता है। संबंधित अमीबा संकेतकों की तुलना करके नीति विकल्पों का मूल्यांकन किया जा सकता है जोकि इस प्रकार हैं।

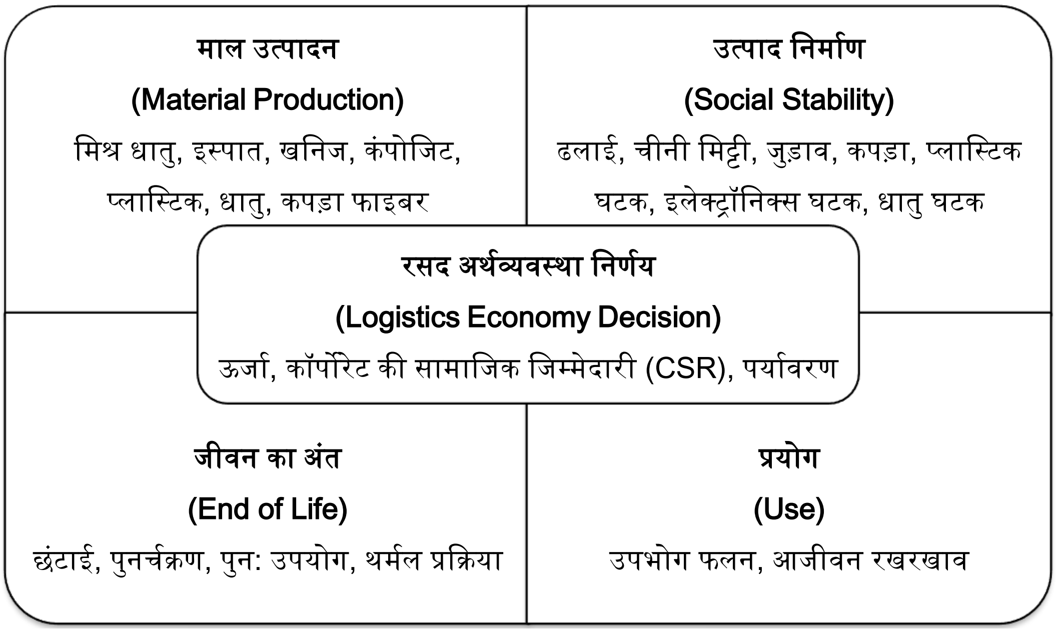

चित्र 4.5 संधारणीयता का अमीबा प्रारूप

4.4.7 तीन पैरों वाला तिपाई प्रारूप (Three-Legged Stool Model)

तीन पैरों वाला तिपाई (Stool) प्रारूप को 'तिहरा नीचे की कड़ी - ट्रिपल बॉटम लाइन' (Triple bottom Line) परिप्रेक्ष्य के रूप में भी जाना जाता है।

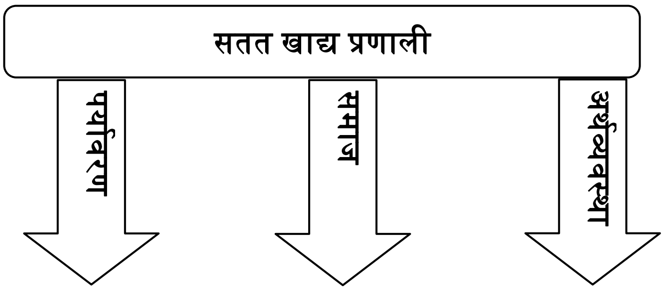

चित्र 4.6 तीन पैरों वाला तिपाई प्रारूप

यह सतत विकास को दर्शाने का बहुत सरल तरीका है। तिपाई (Stool) के तीन अलग-अलग पैरों द्वारा यह पर्यावरण, अर्थव्यवस्था और समाज का प्रतिनिधित्व करते है। यदि एक पैर दूसरे की तुलना में अधिक या कम महत्वपूर्ण है (यानी, छोटा या लंबा), तो तिपाई (Stool) अस्थिर होगा (लेकिन शायद अभी भी कम से कम कुछ समय के लिए उपयोग करने योग्य होगा)। यदि कोई पैर गायब है तो तिपाई (Stool) काम नहीं करेगा। लेकिन अगर तीनों पैर एक ही लंबाई के हैं (यानी, पर्यावरण, आर्थिक और सामाजिक विचारों को समान महत्व दिया गया है), तो परिणाम एक अच्छी तरह से संतुलित तिपाई (Stool) होगा जो अनिश्चित काल तक अपने उद्देश्य को पूरा करेगा जिसको **स्कॉटिश पर्यावरण संरक्षण एजेंसी** ने वर्ष 2002 में एक टिकाऊ तिपाई (Stool) की संज्ञा दी गयी थी।

तिपाई (Stool) के पहले पाँव ***पर्यावरण*** को पर्यावरणीय प्रदूषण और अपशिष्ट को कम करके, नवीकरणीय ऊर्जा का उपयोग करके, संरक्षण एवं पुनर्स्थापन द्वारा सतत बनाया जाना चाहिए। इसके दुसरे पाँव ***समाज*** में सामुदायिक और सामाजिक स्थिरता को बनाने के लिए काम करने की अच्छी स्थितियाँ, स्वास्थ्य देखभाल, शिक्षा, समुदाय और संस्कृति पर कार्य करना चाहिए। इसके तीसरे पाँव ***अर्थव्यवस्था*** को सतत बनाने के लिए बेहतर रोजगार, लाभदायक उद्यम, अधोसंरचना,

निष्पक्ष व्यापार एवं सुरक्षा पर कार्य करना चाहिए। तीनों ही पाँवों पर एक समान ध्यान दिया जाना चाहिए ताकि विकास में संधारणीयता का गुण भी निहित हो सके।

4.4.8 दो-स्तरीय संधारणीयता संतुलन प्रारूप (Two-Tier Sustainability Equilibrium Model)

यह सबसे उभरते प्रारूपों (models) में से एक है और इसकी सबसे कम आलोचना की गई है। इस प्रारूप (model) के अनुसार, समय के साथ संधारणीयता प्राप्त करने का अर्थ यह है कि हमें सतत विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए हमारी वर्तमान सभी गतिविधि को पहचानना होगा जिसको इस प्रारूप (model) में एक आदर्श सिलेंडर (Ideal Cylinder) के रूप में में दर्शाया गया है।

यह प्रारूप (model) यह भी दर्शाता है कि सतत विकास एक गतिशील प्रक्रिया है जिसमें डोनट (Donut) आकार या टोरस बनाने के लिए, समय आयाम (Time Dimension) को अपनी ओर वापस झुकने की आवश्यकता होती है। यह इस धारणा का प्रतिनिधित्व करता है कि वर्तमान में संधारणीय विकास पर लिए जाने वाले निर्णय ही भविष्य में संधारणीय विकास के निर्णयों की उपलब्धता को तैयार करते हैं।

इसको निम्नलिखित चित्रों के माध्यम से भी समझा जा सकता हैं।

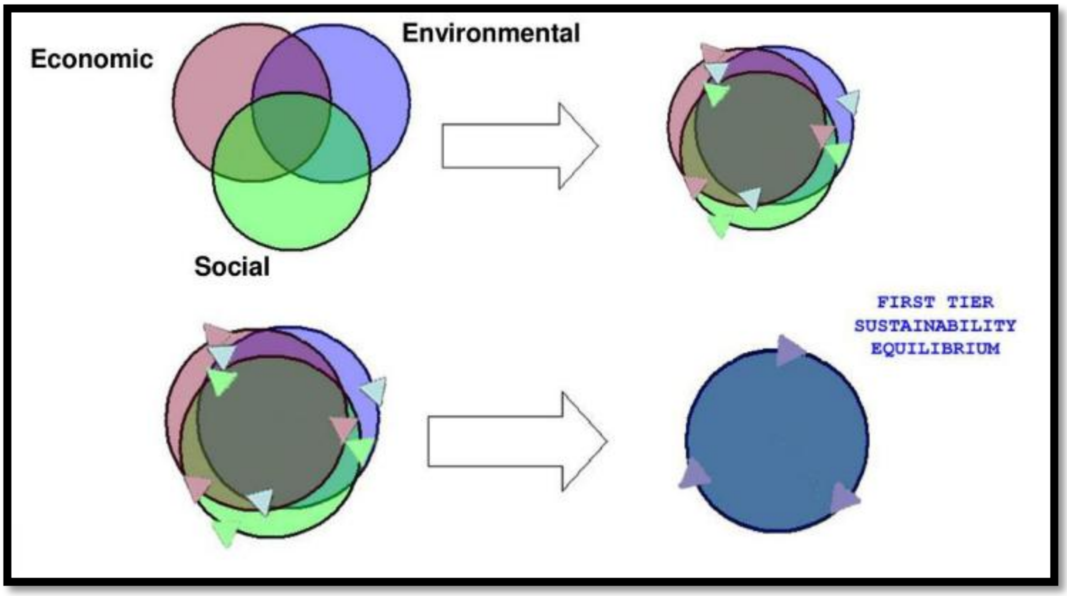

चित्र 4.7 प्रथम स्तरीय संधारणीय संतुलन (venn diagram के माध्यम से)

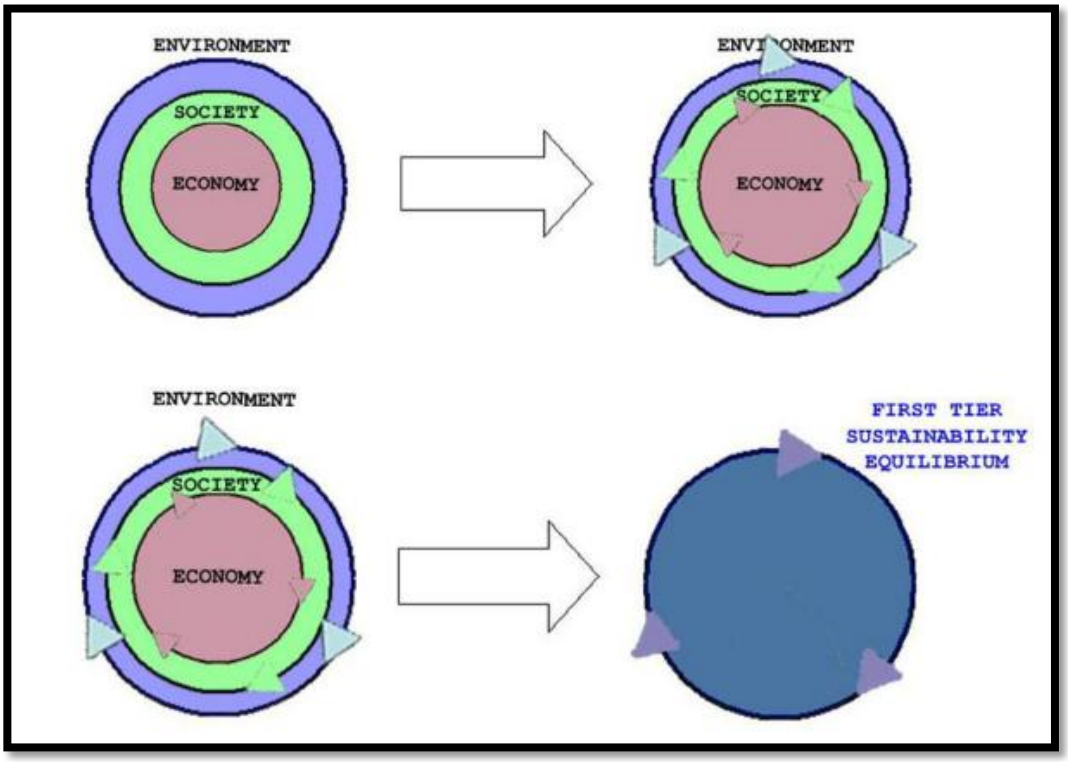

चित्र 4.8 प्रथम स्तरीय संधारणीय संतुलन (Concentric Circles के माध्यम से)

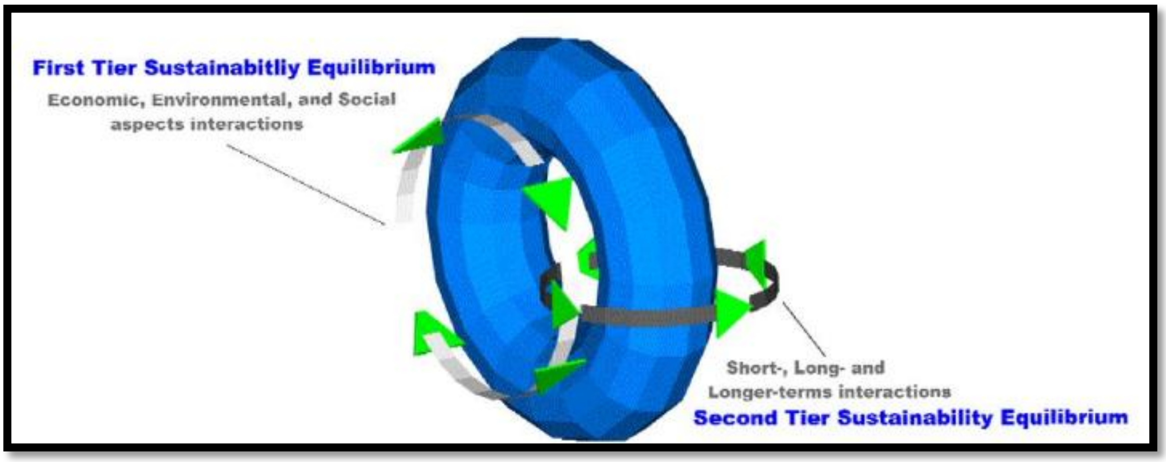

चित्र 4.9 द्वितीय स्तरीय संधारणीय संतुलन (Concentric Circles के माध्यम से)

लोज़ानो का (Lozano)तर्क है कि संकेंद्रित वृत्त प्रारूप (model) अत्यधिक मानवकेंद्रित है और आर्थिक उप-प्रणाली को इसके केंद्र में रखता है। इसके बजाय, पहले चरण में यह तर्क दिया जाता है कि वास्तविक सतत विकास के लिए संकेंद्रित वृत्त/तीन वृत्त पूरी तरह से अधिव्यापन (overlap)होने चाहिए; इसे '**प्रथम स्तरीय संधारणीय संतुलन**' के रूप में जाना जाता है। यह पहला चरण समय में एक बिंदु (आमतौर पर वर्तमान) पर परस्पर निर्भरता को दर्शाता है। दूसरे चरण में, प्रथम स्तरीय संधारणीय संतुलन को एक आदर्श सिलेंडर के रूप में चित्रित करके समय आयाम (Time Dimension) को शामिल किया गया है। यदि वर्तमान या भविष्य पर बहुत अधिक जोर दिया जाता है तो सिलेंडर एक शंकु की तरह दिखेगा (यानी शंकु उस बिंदु पर सबसे चौड़ा होगा जहां जोर दिया गया है)।

4.5 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. प्रिज्म प्रारूप 2001 में .... द्वारा प्रस्तावित किया गया था। (स्टेनबर्ग **या** एटकिसन)
2. एटकिसन के पिरामिड प्रारूप में............ स्तर हैं। (दो **या** पाँच)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. तीन स्तंभ प्रारूप के अंतर्गत अर्थव्यवस्था, समाज एवं पर्यावरण आते हैं।
2. प्रिज्म प्रारूप में पर्यावरणीय आयाम (प्राकृतिक पूंजी) पर बहुत अधिक ध्यान दिया गया हैं।
3. अंडा प्रारूप के अंतर्गत यह बताया गया हैं की लोग एक दूसरे पर निर्भर नहीं है।

4.6 सांराश (Summary)

प्रस्तुत इकाई में आप प्रारूपों (models) के माध्यम से सतत विकास का अध्ययन कर चुके हैं और समझ चुके हैं की यह प्रारूप सतत विकास के लक्ष्यों को प्राप्त करने की एक रूपरेखा हैं। सतत विकास के कई लक्ष्य हैं जिन्हें प्राप्त करने के लिए हमें इन प्रारूपों की आवश्यकता पड़ती हैं। यह प्रारूप बहुत सोच विचार कर बनाए गए हैं जिनका अनुसरण करके हम सतत विकास की ओर बढ़ सकते हैं। इकाई में आपने कुल आठ प्रारूपों के बारे में जाना जोकि अलग-अलग पहलुओं एवं आयामों की बात करते हैं लेकिन फिर भी सभी प्रारूपों का लक्ष्य सतत विकास की तरफ केन्द्रित हैं।

इकाई में सबसे पहले आपने तीन स्तंभ प्रारूप के बारे में पढ़ा जिसमें आपने जाना की अर्थव्यवस्था, समाज और पर्यावरण को संधारणीयता के तीन स्तंभ माना जाता है। सामाजिक संधारणीयता में पर्यावरण न्याय, मानव स्वास्थ्य, शिक्षा आदि शामिल हैं। अगर हम सामाजिक संधारणीयता को बढ़ाने के लिए प्रयास करते हैं तो इससे पर्यावरण को भी लाभ हो सकता है। यह प्रारूप तीन महत्वपूर्ण स्तंभों को दर्शाता हैं।

इकाई में दूसरा प्रारूप हैं स्टेनबर्ग और बोनियट द्वारा दिया गया प्रिज्म प्रारूप जिसे चार स्तंभ प्रारूप भी कहा जाता है क्योकि यह चार आयामों (आर्थिक, पर्यावरणीय, सामाजिक एवं संस्थागत) के बारे में बात करता है। इकाई में आगे आपने अंडा प्रारूप के बारे में पढ़ा जोकि प्रिज्म प्रारूप की आलोचना के बाद आया। प्रिज्म प्रारूप में पर्यावरणीय आयाम पर बहुत कम ध्यान दिया गया जबकि कई लोगों के लिए पर्यावरण मानव कल्याण के विकास के लिए पूर्व शर्त है। इस दृष्टिकोण के लिए संधारणीयता के एक प्रारूप की आवश्यकता को महसूस करते हुए यह प्रारूप बना जो पर्यावरण को केंद्र में रखता है। संधारणीयता का अंडा लोगों एवं पारिस्थितिकी तंत्र के बीच के रिश्ते को एक चक्र के अंदर दूसरे चक्र के रूप में दर्शाता है, जैसे अंडे की जर्दी। इसका तात्पर्य यह है कि लोग पारिस्थितिकी तंत्र के भीतर हैं एवं अंतत: एक दूसरे पर पूरी तरह से निर्भर है।

पूंजी स्टॉक प्रारूप जोकि वर्ष 1994 में दिया गया था यह कहता हैं की यदि हम केवल ब्याज पर जीते हैं और पूंजी पर नहीं, तो समृद्धि का आधार बना रहता है। हालाँकि, यदि हम पदार्थ का उपभोग करते हैं, तो हमारे अस्तित्व के साधन लंबे समय में खतरे में पढ़ जाते हैं। इकाई में अगला प्रारूप हैं पिरामिड प्रारूप जिसे एटकिसन ने दिया था। इस प्रारूप को सतत विकास के लिए एक ख़ाका माना जा सकता हैं। इस प्रारूप के अनुसार, समाज, पर्यावरण और आर्थिक विकास के बीच सहमति के रूप में अंतर सांस्कृतिक संबंध संधारणीयता विकसित कर सकते हैं। पिरामिड में पाँच स्तर हैं पहला *संकेतक*, प्रवृत्ति को मापना दूसरा *प्रणाली*, कारणों, प्रभावों और उत्तोलन बिंदुओं के बीच संबंध बनाना, तीसरा *नवाचार*: विचार जो बदलाव लाते हैं, चौथा *रणनीतियाँ*: विचार से वास्तविकता तक और पाँचवा *कार्य या समझौते*: कार्यशाला से वास्तविक दुनिया तक।

इकाई में आगे आपने अमीबा प्रारूप के बारे में पढ़ा और समझा की यह एक ऐसा उपकरण है जो पारिस्थितिकी तंत्र को राजनीतिक निर्णय निर्माताओं और जनता के लिए अधिक समझने योग्य बनाने में मदद करता है। संबंधित अमीबा संकेतकों की तुलना कर के नीति विकल्पों का मूल्यांकन किया जा सकता है।

अगला प्रारूप अपने पढ़ा तीन पैरों वाला तिपाई प्रारूप, यह तिपाई के तीन अलग-अलग पैरों द्वारा जैसे पहला पर्यावरण, दूसरा अर्थव्यवस्था और तीसरा समाज का प्रतिनिधित्व करता है। यदि एक पैर दूसरों की तुलना में अधिक या कम महत्वपूर्ण है (छोटा या लंबा), तो तिपाई अस्थिर होगा। इकाई में आखिरी प्रारूप हैं दो-स्तरीय संधारणीयता संतुलन प्रारूप जोकि सबसे उभरते हुए प्रारुपों में से एक है एवं इसकी आलोचना भी कम की जाती है। इस प्रारूप के अनुसार, समय के साथ संधारणीयता प्राप्त करने का अर्थ है सतत विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए हमारी वर्तमान गतिविधि को पहचानना, जिसे एक आदर्श सिलेंडर में दर्शाया गया है।

4.7 शब्दावली (Glossary)

- **इष्टतम उपयोग (Optimum Utilization):** संसाधनों के इष्टतम उपयोग से तात्पर्य सीमित संसाधनों (जैसे पूंजी और श्रम) का सर्वोत्तम संभव उपयोग करने से है ताकि न्यूनतम संभव लागत पर अधिकतम लाभ प्राप्त किया जा सके।
- **सामाजिक संधारणीयता (Social Sustainability):** सामाजिक स्थिरता एक स्वस्थ समुदाय के निर्माण में मदद करती है जो वर्तमान और साथ ही भविष्य की पीढ़ियों की जरूरतों को पूरा कर सके। इसमें पर्यावरण न्याय, मानव स्वास्थ्य, शिक्षा आदि सम्मिलित हैं।
- **संस्थागत आयाम (Institutional Dimension):** विकास के संस्थागत आयाम को संगठनों के बीच स्थापित सामाजिक पूंजी द्वारा दर्शाया जाता है, जिसे संबंधपरक संपत्तियों के एक समूह के रूप में समझा जाता है जो किसी संगठन की उत्पादक क्षमता को प्रभावित कर सकता है।
- **नवीकरणीय संसाधन (Renewable Energy):** नवीकरणीय संसाधन प्राकृतिक स्रोतों से प्राप्त ऊर्जा है, जिसकी खपत की तुलना में अधिक दर पर पुन: पूर्ति की जाती है।
- **नवाचार (Innovation):** नवाचार का अर्थ है किसी उत्पाद, प्रक्रिया या सेवा में छोटा या बड़ा परिवर्तन करना।
- **सामाजिक सामंजस्य (Social Cohesion):** सामाजिक सामंजस्य जिसे सामाजिक संबंधों की गुणवत्ता और समुदायों में विश्वास, पारस्परिक दायित्वों और सम्मान के अस्तित्व के रूप में परिभाषित किया जाता है।
- **आर्थिक प्रारूप (Economic Model):** किसी प्रारूप में निहित चरों के बीच एक तार्किक / संख्यात्मक सम्बन्ध है। प्रारूपों का उपयोग करके इस बात की जाँच की जा सकती है आर्थिक प्रक्रिया के किसी चर को बदलने पर अर्थतन्त्र पर क्या प्रभाव होगा।
- **प्राकृतिक संसाधन (Natural Resources):** यह ऐसे संसाधन हैं जो प्रकृति से लिए गए हैं और कुछ संशोधनों के साथ उपयोग किए जाते हैं। इसमें वाणिज्यिक और औद्योगिक उपयोग, सौंदर्य मूल्य, वैज्ञानिक रुचि और सांस्कृतिक मूल्य जैसी मूल्यवान विशेषताओं के स्रोत शामिल हैं। पृथ्वी पर, इसमें सौर प्रकाश, वायुमंडल, जल, भूमि, सभी खनिज के साथ-साथ सभी वनस्पति और पशु जीवन शामिल हैं।
- **पारिस्थितिकी (Ecology):** यह जीव-विज्ञान तथा भूगोल की एक शाखा है जिसमें जीव समुदायों का उसके वातावरण के साथ पारस्परिक संबंधों का अध्ययन करतें हैं। प्रत्येक जन्तु या वनस्पति एक निश्चित वातावरण में रहता है। पारिस्थितिज्ञ इस तथ्य का पता लगाते हैं कि जीव आपस में और पर्यावरण के साथ किस तरह क्रिया करते हैं और वह पृथ्वी पर जीवन की जटिल संरचना का पता लगाते हैं।

- **सामाजिक समानता (Social Equality):** सामाजिक सन्दर्भों में समानता का अर्थ किसी समाज की उस स्थिति से है जिसमें उस समाज के सभी लोग समान अधिकार या प्रतिष्ठा रखते हैं। समानता का अधिकार एक अत्यंत महत्वपूर्ण अधिकार है और इसका तात्पर्य यह है की प्रत्येक क्षेत्र में व्यक्ति को व्यक्ति होने के नाते सम्मान और महत्त्व प्राप्त होना चाहिए जिसके अन्तर्गत सुरक्षा, मतदान का अधिकार, भाषण की स्वतंत्रता, एकत्र होने की स्वतंत्रता, सम्पत्ति अधिकार, सामाजिक वस्तुओं एवं सेवाओं पर समान पहुँच आदि आते हैं। सामाजिक समानता में स्वास्थ्य समानता, आर्थिक समानता तथा अन्य सामाजिक सुरक्षा भी आतीं हैं।
- **समाज (society):** समाज शब्द का अर्थ व्यक्तियों के समूह से ना हो करके उनके बीच में पाए जाने वाले संबंधों की व्यवस्था से है। और इस व्यवस्था का निर्माण अनेक सामाजिक संबंधों के कारण होता है।
- **अर्थव्यवस्था (Economy):** यह उत्पादन, वितरण और उपभोग की एक प्रणाली है। यह एक विशेष अवधि की होती है।
- **पर्यावरण (Environment):** यह हमारे जीवन को प्रभावित करने वाले सभी जैविक और अजैविक तत्वों, तथ्यों और प्रक्रियाओं का योग है।
- **गिग इकॉनमी(The gig economy)-** यह एक मुक्त बाज़ार प्रणाली है जिसमें अस्थायी पद सामान्य होते हैं और संगठन अल्पकालिक कार्यों के लिए स्वतंत्र श्रमिकों के साथ अनुबंध करते हैं।
- **जैव विविधता (Biodiversity):** यह पृथ्वी पर जीवन की विविधता और परिवर्तनशीलता है। इसे विभिन्न स्तरों पर मापा जा सकता है। उदाहरण के लिए आनुवंशिक परिवर्तनशीलता, प्रजाति विविधता और पारिस्थितिकी तंत्र विविधता। पृथ्वी पर विविधता समान रूप से वितरित नहीं है। भूमध्य रेखा के पास के क्षेत्र में गर्म जलवायु और उच्च प्राथमिक उत्पादकता के परिणामस्वरूप यह उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में अधिक है।
- **अवसर की समानता (Equality of Opportunity):** अवसर की समानता का अर्थ है राज्य द्वारा जाति, धर्म, वर्ग, रंग, लिंग और नस्ल आदि के आधार पर बिना किसी भेदभाव के नागरिकों को समान सुविधाएं और रोजगार के अवसर प्रदान करना।

4.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. स्टेनबर्ग 2. पाँच

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. सत्य 2. असत्य 3. असत्य

4.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- H.E. Daly. (1996). ***Beyond growth: the economics of sustainable development***, Beacon Press. Boston, MA.
- C. Durham, (1997). ***The First Three Years of Sustainability in Action***, County Durham Local Agenda, 21.
- M. Grubb. (1993). ***The Earth Summit agreements: a guide and assessment; an analysis of the Rio'92***, UN Conference on Environment and Development.

Earthscan and the Energy and Environmental Programme of the Royal Institute of International Affairs.

- Daly HE. ***Sustainable development: definitions, principles, policies.*** Washington, DC: World Bank; 2002.

4.10 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Useful Text)

- Hardi, P. and Zdan, T.J. (1997): ***Assessing sustainable development—Principles in practice***. International Institute for Sustainable Development. Winnipeg.
- International Development Research Centre IDRC (1997): ***Assessment tools***. Ottawa.
- Kain, J.-H. (2000): ***Urban support systems—Social and technical, socio-technical or socio technical***. Gothenburg.
- WCED (The World Commission on Environment and Development; 1987): ***Our common future.*** Oxford.
- Keiner, Marco (2005): ***History, definition(s) and models of sustainable development,*** Available from : <<https://www.researchcollection.ethz.ch/handle/20.500.11850/53025>>
- Lozano. R. (2008): ***Envisioning sustainability three-dimensionally***. Journal of Cleaner Production. Vol 16 (17), 1838-1846. Available from <<https: // pdfs.semanticscholar.org/7255/a360e76d1c71fd7ed0166c03dd4c03f14fe3.pdf >>

4.11 निबंधात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. स्टेनबर्ग द्वारा दिए गये प्रिज्म प्रारूप को चित्र सहित समझाइए।
2. एटकिसन के पिरामिड प्रारूप को विस्तार से लिखिए।
3. सतत विकास क्या हैं? सतत विकास में प्रारूप की क्या आवश्यकता हैं? सतत विकास के किसी एक प्रारूप को विस्तार से लिखिए।

इकाई 5 पर्वतीय क्षेत्रों में विकास के मुद्दे एवं चुनौतियाँ
(Issues and Challenges of Development in Hilly Areas)

5.1 प्रस्तावना (Introduction)
5.2 उदेश्य (Objective)
5.3 पर्वतीय क्षेत्रों में विकास (Development in Hilly Areas)
5.4 पर्वतीय क्षेत्रों में विकास के मुद्दे एवं चुनौतियाँ (Issues and Challenges of Development in Hilly Areas)
5.5 पर्वतीय क्षेत्रों के विकास में आने वाली चुनौतियों का समाधान (Solution to the Challenges in Development of Hilly Areas)
5.6 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)
5.7 सांराश (Summary)
5.8 शब्दावली (Glossary)
5.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)
5.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
5.11 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Useful Text)
5.12 निबंधात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

5.1 प्रस्तावना (Introduction)

प्रस्तुत इकाई में आप पर्वतीय क्षेत्रों में विकास करते समय आने वाले मुद्दे एवं चुनौतियों को विस्तार से पढेंगे। जैसा की आप जानते हैं की किसी भी देश के विकास में उस देश के सम्पूर्ण हिस्से का विकास किया जाता हैं, मैदानी क्षेत्रों में विकास करना इतना कठिन नहीं हैं एवं वहाँ विकास में इतनी चुनौतिया नहीं हैं। पर्वतीय क्षेत्रों की भौगोलिक स्थितियाँ बहुत अलग होती हैं एवं साथ ही पर्वतीय क्षेत्र उचाई पर होते हैं जिसके वजह से वहाँ बहुत कठिनाइयाँ होती हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में कभी भी भूकंपीय गतिविधि हो सकती हैं एवं इसके साथ ही वहाँ पहाड़ गिरना और मिट्टी खिसकना भी बहुत आम बात हैं, इन सभी चुनौतियों के कारण पर्वतीय क्षेत्रों में विकास या निर्माण करना कठिन हैं। इकाई में आप इन्ही कठिनाइयों एवं चुनौतियों को पढेंगे एवं साथ ही यह भी जानेंगे की इन चुनौतियों का समाधान किस प्रकार किया जा सकता हैं।

5.2 उदेश्य (Objective)

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप:

- ✓ पर्वतीय क्षेत्रों में विकास किस प्रकार होता हैं यह समझेंगे।
- ✓ पर्वतीय क्षेत्रों में विकास की चुनौतियों को समझ सकेंगे।
- ✓ पर्वतीय क्षेत्रों में आने वाली चुनौतियों के समाधान को समझेंगे।

5.3 पर्वतीय क्षेत्रों में विकास (Development in Hilly Areas)

विकास का मतलब आप सब भली-भांति जानते हैं। विकास को एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जाता है जिसके परिणामस्वरूप विकास, प्रगति, सकारात्मक परिवर्तन या किसी मौजूदा प्रणाली या पर्यावरण में भौतिक, आर्थिक, पर्यावरणीय, सामाजिक और जनसांख्यिकीय घटकों का जुड़ाव होता है। इससे पहले की इकाईयों में आप विकास को विस्तार से पढ़ चुके हैं, आइए अब बात करते हैं पर्वतीय क्षेत्रों में विकास की। जैसा की हम सब जानते हैं पर्वतीय क्षेत्रों की भौगोलिक स्थितियाँ मैदानी क्षेत्रों से अलग होती हैं जिसके कारण वहाँ विकास में बहुत सी चुनौतियों का सामना करना पड़ता हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में पहाड़ बहुत नाजुक होते हैं एवं वहाँ रास्ते भी बहुत संकरे होते हैं, पहाड़ों में हर वक्त यह डर रहता हैं की कही पहाड़ या पत्थर गिर ना जाए। क्योंकि पहाड़ों के रास्ते संकरे होते हैं इस कारणवश वहाँ समान पहुँचाना एक जोखिम भरा काम हैं, अत: पर्वतीय क्षेत्रों में मैदानी क्षेत्रों के मुकाबले बहुत कम संसाधन पाए जाते हैं।

पर्वतीय क्षेत्रों में विकास करना मैदानी क्षेत्रों में विकास के मुकाबले कठिन हैं, मैदानी क्षेत्रों में भौगोलिक स्थितियाँ काफी सरल होती हैं एवं रास्ते सीधे होते हैं जिनमें जोखिम नहीं होता हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में विकास सरकार के लिए एक बहुत बड़ी चुनौती रही हैं एवं इसमें खर्चा भी ज्यादा आता हैं। परन्तु इसका यह अर्थ नहीं हैं की पर्वतीय क्षेत्रों में विकास इन चुनौतियों के कारण रोक दिया जाए। किसी भी देश के विकास के लिए उस देश के हर क्षेत्र का विकास होना आवश्यक हैं फिर चाहे वह पर्वतीय क्षेत्र ही क्यों ना हो। अगर हम केवल मैदानी क्षेत्रों का विकास करे एवं पर्वतीय क्षेत्रों को पीछे छोड़ दे तो वह विकास केवल एक तरफ़ा विकास कहलाया जाएगा। जैसा की हम सब जानते हैं की किसी क्षेत्र में विकास करने से अर्थ हैं उस क्षेत्र में रहने वाले लोगो को सभी प्रकार की सुविधाए प्राप्त कराना जैसे शिक्षा के लिए स्कूल एवं कॉलेज, नौकरी, पक्की सड़क, बैंक, राशन की दूकान इत्यादि। पर्वतीय क्षेत्रों में इन सभी सुविधाओं को लोगों तक पहुँचाना एवं पर्वतीय क्षेत्रों में निर्माण करना ही विकास हैं।

पर्वतीय क्षेत्रों में निर्माण करना बहुत मुश्किल हैं क्योंकि पहाड़ नाजुक होते हैं एवं वह अधिकाँश भार नहीं झेल सकते हैं। पहाड़ों की भौगोलिक स्थिति ही केवल एक चुनौती नहीं हैं विकास में, जैसा की हम सभी जानते हैं की पहाड़ में पूँजी की एवं श्रम की भी कमी होती हैं, पर्वतीय क्षेत्रों में निर्माण के लिए यह दोनों कारक भी बहुत आवशयक हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में निर्माण के लिए पहले यह आवश्यक हैं की पहाड़ों में निर्माण के लिए सभी उत्पादन का कारक को पहाड़ों तक पहुँचाया जाए। पूँजी एवं श्रम की कमी के साथ-

साथ ऐसे बहुत से मुद्दे हैं जो पर्वतीय क्षेत्रों में विकास के दौरान देखने को मिलते हैं। अब आप इन सभी मुद्दे एवं चुनौतियों को विस्तार से पढेंगे।

5.4 पर्वतीय क्षेत्रों में विकास के मुद्दे एवं चुनौतियाँ (Issues and Challenges of Development in Hilly Areas)

पर्वतीय क्षेत्रों में विकास इन क्षेत्रों की भौगोलिक, पर्यावरणीय और सामाजिक-आर्थिक स्थितियों के कारण चुनौतियों का एक अनूठा समूह प्रस्तुत करता है। पर्वतीय क्षेत्रों में विकास के कुछ प्रमुख मुद्दे और चुनौतियाँ शामिल हैं, अब आप इन सभी चुनौतियों को विस्तार से पढेंगे।

1. **भौगोलिक और भू-भाग संबंधी चुनौतियाँ (Geographical and Terrain related Challenges):** पर्वतीय क्षेत्रों में विकास के दौरान सबसे पहले चुनौती पहाड़ की भौगोलिक संरचना होती हैं जिसके कारण पहाड़ तक पहुँचाना ही मुस्किल भरा कार्य होता हैं। आइए इसके अंतर्गत आने वाली तीन मुख्य चुनौतियों को विस्तार से पढ़ते हैं।
    1. **कठिन पहुँच (Difficult Access):** पर्वतीय क्षेत्रों में खड़ी और असमान भूभाग के कारण अक्सर सड़क, पुल और रेलवे जैसे निर्माण एवं परिवहन बुनियादी ढांचे को बनाना एक चुनौती रहती हैं क्यों की वहाँ भूमि समान नहीं होती एवं साथ ही बहुत नाजुक होती हैं। इसके साथ ही पर्वतीय क्षेत्रों में निर्माण महंगा भी पड़ता हैं क्योंकि उसमें परिवहन लागत (Transportation Cost) भी लगती हैं।
    2. **सीमित भूमि उपलब्धता (Limited Land Availability): पर्वतीय** क्षेत्रों में ऊबड़-खाबड़ परिदृश्य के कारण, उपयोग योग्य भूमि दुर्लभ या कम होती हैं जिसके कारण आवास, कृषि और औद्योगिक गतिविधियों के लिए स्थान सीमित हो जाता हैं एवं किसी भी निर्माण से पहले भूमि का मिलना कठिन हो जाता हैं।
    3. **सीमित भूमि उपलब्धता, अलगाव (Isolation):** कई दूरदराज के पर्वतीय क्षेत्र अलग-थलग (Isolated) हैं जिन तक पहुँचाना संभव नहीं हैं। इन पर्वतीय क्षेत्रों में स्वास्थ्य देखभाल, शिक्षा और बाजारों जैसी आवश्यक सेवाओं तक पहुँच का अभाव है।
2. **पर्यावरण के मुद्दें (Environmental Issues):** पर्वतीय क्षेत्रों में विकास करते समय सरकार को पर्यावरण को भी साथ लेकर चलना होता हैं, पर्वतीय क्षेत्रों में बहुत से ऐसे वन पाए जाते हैं जिनमें मिलने वाली जड़ी-बूटी चिकित्सा प्रयोजन के बहुत काम आती हैं। इसके अलावा पहाड़ नाजुक होते हैं जो कभी भी गिर सकते हैं तो निर्माण के समय इस बात का भी बहुत ध्यान रखना पड़ता हैं। आइए इसके अंतर्गत आने वाली तीन मुख्य चुनौतियों को विस्तार से पढ़ते हैं।
    1. **मृदा अपरदन और भूस्खलन (Soil Erosion and Landslides):** पर्वतीय क्षेत्रों में मृदा अपरदन, भूस्खलन और हिमस्खलन का खतरा रहता है जोकि वहाँ होने वाले निर्माण कार्य को और कठिन बनाती हैं। यह घटनाएं बुनियादी निर्माण, घरों और कृषि भूमि को नुकसान पहुँचा सकती हैं।
    2. **वनों की कटाई (Deforestation):** पहाड़ों के कुछ क्षेत्रों में, कटाई, कृषि या शहरीकरण के कारण वनों की कटाई से पर्यावरणीय गिरावट बढ़ रही हैं जिससे भूस्खलन एवं बाढ़ का खतरा भी बढ़ जाता है।
    3. **जलवायु परिवर्तन (Climate Change):** पर्वतीय क्षेत्र जलवायु परिवर्तन के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होते हैं, मौसम के बदलते मिजाज के कारण अप्रत्याशित वर्षा, सूखा

और कृषि उत्पादकता में कमी आती है जिससे पर्वतीय क्षेत्रों में विकास और कठिन हो जाता हैं।

3. **बुनियादी ढांचे का विकास (Infrastructure Development):** किसी भी क्षेत्र में विकास करने के लिए वहाँ बुनियादी ढांचे का विकास सबसे पहले किया जाता हैं। बुनियादी ढांचे के विकास के अंतर्गत सड़क, स्कूल, कॉलेज, चिकित्सा, बैंक, दूकान इत्यादि शामिल होते हैं। आइए अब बुनियादी ढांचे के विकास करते समय आने वाली मुख्य तीन चुनौतियों को विस्तार से पढ़ते हैं।
    1. **उच्च लागत (High Cost):** पर्वतीय क्षेत्रों की भौगोलिक स्थितियाँ काफी कठिन होती हैं यहाँ भूमि असमान होती हैं एवं पहाड़ नाजुक होते हैं जिसके कारण सड़कों, पुलों और इमारतों के निर्माण के लिए विशेष तकनीकों और महंगी सामग्रियों की आवश्यकता होती है, जिससे निर्माण और रखरखाव की लागत अधिक हो जाती है।
    2. **बिजली और जल आपूर्ति (Electricity and Water Supply):** पर्वतीय क्षेत्रों में स्थलाकृति और केंद्रीय आपूर्ति नेटवर्क से दूरी के कारण इन क्षेत्रों में लगातार बिजली, पानी और सीवेज सिस्टम प्रदान करना अधिक चुनौतीपूर्ण है। अभी भी पहाड़ों में बहुत से ऐसे क्षेत्र हैं जहाँ बिजली की सुविधा नहीं हैं।
    3. **संचार (Communication):** पर्वतीय क्षेत्रों में सीमित बुनियादी ढांचे और उचाई के कारण मोबाइल और इंटरनेट कनेक्टिविटी सहित विश्वसनीय संचार नेटवर्क सुनिश्चित करना मुश्किल हो सकता है। पर्वतीय क्षेत्रों में बहुत कम क्षेत्र ऐसे हैं जहाँ इंटरनेट कनेक्टिविटी हो एवं नेटवर्क की सुविधा हो।
4. **कृषि बाधाएँ (Agriculture Difficulties):** पर्वतीय क्षेत्रों में लोगो का मुख्य व्यवसाय कृषि ही होता हैं परन्तु भूमि के उचाई पर होने के कारण एवं असमान होने के कारण पहाड़ पर खेती करना भी मुस्किल हो जाता हैं। आइए अब पर्वतीय क्षेत्रों में कृषि सम्बंधित चुनौतीयों को विस्तार से पढ़तें हैं।
    1. **सीमित कृषि योग्य भूमि (Limited Agricultural Land):** पर्वतीय क्षेत्रों में कृषि अक्सर समतल भूमि की कमी के कारण बाधित होती है, जिससे बड़े पैमाने पर खेती करना मुश्किल हो जाता है।
    2. **वर्षा आधारित कृषि पर निर्भरता (Depend on Rainfall):** कई पर्वतीय क्षेत्र वर्षा आधारित कृषि पर निर्भर हैं, जो जलवायु में उतार-चढ़ाव और पानी की कमी के प्रति संवेदनशील है। जब वर्षा नहीं होती हो या कम हो तब कृषि में बाधा आती हैं।
    3. **मिट्टी की उर्वरता में गिरावट (Decline in soil fertility):** पर्वतीय क्षेत्रों या ढलान वाले इलाकों में लगातार खेती करने से मिट्टी की कमी हो सकती है और कृषि उपज कम हो सकती है। जिससे कृषि में दिक्कत आती हैं और फसल कम होती हैं।
5. **सामाजिक-आर्थिक चुनौतियाँ (Socio-Economic Challenges):** विकास में आने वाली कई चुनौतियों में से एक सामाजिक-आर्थिक चुनौतियाँ भी हैं। आइए अब पर्वतीय क्षेत्रों में इन चुनौतियों को समझते हैं।
    1. **गरीबी और बेरोजगारी (Poverty and Unemployment):** कई पर्वतीय क्षेत्र आर्थिक रूप से अविकसित हैं, यहाँ औद्योगिक या सेवा क्षेत्र के अवसर सीमित हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में बेरोजगारी पाई जाती हैं लोग केवल कृषि पर ही निर्भर रहते हैं जिसके वजह से गरीबी

और बढ़ जाती हैं। रोजगार की कमी के कारण शहरी क्षेत्रों की ओर पलायन होता है एवं पहाड़ खाली होने लगते हैं।

2. **युवा प्रवासन (Youth Migration):** पर्वतीय क्षेत्र में युवा अक्सर बेहतर शिक्षा और रोजगार के अवसरों की तलाश में शहरों की ओर पलायन करते हैं, जिससे पर्वतीय क्षेत्र में पीछे बढ़ती आबादी और कुशल श्रमिकों की कमी हो जाती है।
3. **शिक्षा और स्वास्थ्य देखभाल तक सीमित पहुँच (Limited Access to Education and Healthcare):** सुदूर पर्वतीय क्षेत्रों में, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा और स्वास्थ्य देखभाल तक पहुँच अक्सर सीमित होती है, जो सामाजिक विकास और कल्याण में बाधा डालती है। अधिक ऊंचाई पर होने के कारण पर्वतीय इलाकों में इसका निर्माण करना कठिन होता है। ऐसे बहुत कम पर्वतीय इलाके हैं जहां अस्पताल और स्कूल हैं। पहाड़ों में रहने वाले लोग किसी भी बीमारी के इलाज के लिए मैदानी इलाकों में जाते हैं।

6. **राजनीतिक एवं प्रशासनिक चुनौतियाँ (Political and Administrative Challenges):** किसी भी क्षेत्र का विकास वहाँ की राजनीति पर बहुत हद तक निर्भर करता हैं। शासन कैसा हैं, राजनीतिक नेता कैसे हैं, यह सभी कारक भी विकास को प्रभावित करते हैं।
   1. **शासन के मुद्दे (Governance Issues):** पर्वतीय क्षेत्रों में समुदायों की दूरदर्शिता और बिखरी हुई प्रकृति शासन में चुनौतियों का कारण बन सकती है, जिससे सरकारों के लिए सेवाएं प्रदान करना, नीतियों को लागू करना या निर्णय लेने में स्थानीय समुदायों की भागीदारी सुनिश्चित करना कठिन हो जाता है।
   2. **संसाधनों पर संघर्ष (Conflict over Resources):** पर्वतीय क्षेत्रों में अक्सर समृद्ध प्राकृतिक संसाधन होते हैं, जिससे उनके दोहन पर संघर्ष हो सकता है, खासकर जब बाहरी व्यावसायिक हित शामिल हों। संसाधनों की कमी के कारण विकास में बहुत बाधा आती हैं जिससे विकास की दर कम हो जाती हैं।
7. **प्राकृतिक आपदाएँ और कमजोरियाँ (Natural Disaster and Vulnerabilities):** जैसा की हम जान गए हैं की पर्वतीय क्षेत्रों में भूमि असमान होती हैं एवं पहाड़ बहुत नाजुक होते हैं जिसके कारण पर्वतीय क्षेत्रों में प्राकृतिक आपदाएँ बहुत आती हैं। भूकंप और बाढ़ दों ऐसी प्राकृतिक आपदाएँ हैं जो पहाड़ों में बहुत देखने को मिलती हैं, आइए अब इन्हें विस्तार से पढ़ते हैं।
   1. **भूकंपीय गतिविधि (Seismic Activity):** कई पर्वतीय क्षेत्र भूकंपीय रूप से सक्रिय क्षेत्रों में स्थित हैं, जिससे भूकंप और संबंधित आपदाओं का खतरा बढ़ जाता है। ऐसे में विकास करना मुस्किल हो जाता हैं क्योंकि भूकंप वाले क्षेत्रों में निर्माण करना नुक्सान होता हैं, यहाँ भूकंप के कारण कभी भी इमारत या घर गिर सकते हैं।
   2. **बाढ़ (Flood):** पर्वतीय क्षेत्र में वनों की कटाई होने से खड़ी ढलानें तेजी से पानी के बहाव का कारण बन सकती हैं, जिससे भारी वर्षा के दौरान बाढ़ आ सकती हैं।
8. **संस्कृतिक और सामाजिक बाधाएँ (Cultural and Social Barriers):** पर्वतीय क्षेत्र में रहने वाले लोगो की संस्कृतिक बहुत अलग होती हैं एवं वह अपनी संस्कृतिक को बहुत महत्व देते हैं, जो कभी कभी विकास में बाधा भी बन जाती हैं।

1. **पारंपरिक प्रथाएँ बनाम आधुनिक विकास (Traditional Practices versus Modern Development):** पर्वतीय क्षेत्रों में समुदायों का अक्सर भूमि से मजबूत पारंपरिक और संस्कृतिक संबंध होता है। संस्कृतिक पहचान खोने के डर और बाहरी हस्तक्षेप के प्रभाव के कारण आधुनिक विकास का परिचय देने पर विरोध का सामना करना पड़ सकता है।
2. **सामुदायिक भागीदारी का अभाव (Lack of Community Participation):** विकास परियोजनाएं कभी-कभी स्थानीय समुदायों को पर्याप्त रूप से शामिल करने में विफल हो जाती हैं, जिसके परिणामस्वरूप अप्रभावी या अस्थिर परिणाम हो सकते हैं।

9. **पर्यटन (Tourism):** पर्यटन के होने से पर्वतीय क्षेत्रों में विकास होना शुरु होता हैं एवं साथ ही आय बढती हैं। पर्यटन का होना विकास के लिए बेहतर साबित होता हैं।
    1. **पर्यटन दबाव (Tourism Pressure):** जबकि पर्यटन आर्थिक विकास का एक स्रोत हो सकता है, यह पर्यावरण और बुनियादी ढांचे पर भी दबाव डाल सकता है, खासकर संवेदनशील पर्वतीय पारिस्थितिकी तंत्र में। अनियमित पर्यटन से भीड़भाड़, पर्यावरण का क्षरण और स्थानीय संस्कृतियों में व्यवधान हो सकता हैं।

10. **स्वास्थ्य और अच्छाई (Health and Wellbeing):** किसी भी क्षेत्र में विकास के लिए वहाँ के लोगो के स्वास्थ्य के उप्पर ध्यान देना बहुत आवशयक होता हैं, अगर स्वास्थ्य ठीक रहे तो आय का सही उपयोह होता हैं एवं लोग अपना कार्य भी गति से करते हैं।
    1. **स्वास्थ्य संबंधी मुद्दे (Health related Issues):** स्वास्थ्य सुविधाओं तक पहुँच की कमी और चिकित्सा आपूर्ति के परिवहन में कठिनाई के कारण, पर्वतीय क्षेत्रों के निवासियों को समय पर चिकित्सा देखभाल प्राप्त करने में चुनौतियों का सामना करना पड़ सकता हैं।
    2. **कुपोषण (Malnutrition):** खराब कृषि पद्धतियों और विविध खाद्य पदार्थों तक पहुँच की कमी के कारण विशेष रूप से दूरदराज के क्षेत्रों में पोषण संबंधी कमी हो सकती हैं।

इन चुनौतियों से निपटने के लिए पर्वतीय क्षेत्रों में सतत विकास हासिल करने के लिए बुनियादी ढांचे के विकास, पर्यावरण संरक्षण, सामाजिक-आर्थिक सशक्तिकरण और संस्कृतिक संवेदनशीलता के संयोजन के साथ एक व्यापक दृष्टिकोण की आवश्यकता है।

5.5 पर्वतीय क्षेत्रों के विकास में आने वाली चुनौतियों का समाधान (Solution to the Challenges in Development of Hilly Areas)

पर्वतीय क्षेत्रों में विकास में कई प्रकार की चुनौतियाँ उत्पन्न होती हैं, जिन्हें प्रभावी तरीके से सामना करने के लिए विभिन्न रणनीतियाँ अपनाई जा सकती हैं। इन चुनौतियों को समाधान करने के लिए निम्नलिखित कदम उठाए जा सकते हैं:

1. **भौगोलिक चुनौतियों का समाधान (Solution to Geographical Challenges)**
    1. सड़क और परिवहन नेटवर्क का सुधार किया जाए, जिससे इन क्षेत्रों की संपर्कता बेहतर हो सके।
    2. हेलीकॉप्टर सेवाओं और स्थिर एयर कनेक्टिविटी की योजना बनाई जा सकती है।
    3. पर्वतीय क्षेत्रों में भूमि उपयोग की योजना को ध्यान में रखते हुए निर्माण कार्य किया जाए।
2. **जलवायु और पर्यावरणीय चुनौतियों का समाधान (Solution to Climate and Environmental Challenges)**

1. पर्यावरणीय संरचना को बढ़ावा देने के लिए हरित क्षेत्रों को बढ़ावा दिया जाए।
2. भूस्खलन और बर्फबारी से सुरक्षा हेतु उपयुक्त निर्माण और बुनियादी ढांचे तकनीकों का उपयोग किया जाए।
3. जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को ध्यान में रखते हुए सख्त पर्यावरणीय नियम लागू किए जाएं।

3. संसाधनों का प्रबंधन की चुनौतियों का समाधान (Solution to Management of Resources Challenges)

1. सतत विकास की दिशा में कार्य करते हुए संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग किया जाए।
2. जल, जंगल और ज़मीन के पुनरुद्धार के लिए योजनाएँ बनाई जाएं।
3. स्थानीय पारिस्थितिकी तंत्र के संरक्षण के लिए ठोस उपाय किए जाएं।

4. स्वास्थ्य और शिक्षा की चुनौतियों का समाधान (Solution to Health and Education Challenges)

1. मोबाइल स्वास्थ्य और शिक्षा सेवाओं का विस्तार किया जाए।
2. स्थानीय समुदायों को स्वास्थ्य और शिक्षा से संबंधित प्रशिक्षण प्रदान किया जाए।
3. बेहतर सरकारी और निजी साझेदारी से इन सेवाओं को पर्वतीय क्षेत्रों में पहुँचाया जाए।

5. आवश्यक संसाधनों की कमी की चुनौतियों का समाधान (Solution to Challenges of Lack of Natural Resources)

1. नवीकरणीय ऊर्जा (सौर और पवन ऊर्जा) का अधिकतम उपयोग किया जाए।
2. जल संचयन तकनीकों और वर्षा जल संचयन योजनाओं को बढ़ावा दिया जाए।
3. स्थानीय समुदायों के लिए स्वरोजगार योजनाएं और छोटे उद्योगों की स्थापना की जाए।

6. सामाजिक और संस्कृतिक चुनौतियाँ का समाधान (Solution to Social and Cultural Challenges)

1. स्थानीय समुदायों के साथ संवाद और सहयोग को बढ़ावा दिया जाए।
2. विकास योजनाओं में स्थानीय संस्कृति और जीवनशैली को सम्मानित किया जाए।
3. महिलाओं और बच्चों के अधिकारों की सुरक्षा पर ध्यान केंद्रित किया जाए।

7. प्रौद्योगिकी का उपयोग की चुनौतियों का समाधान (Solution to Challenges of Use of Technology)

1. डिजिटल शिक्षा और कृषि तकनीक को पर्वतीय क्षेत्रों में बढ़ावा दिया जाए।
2. स्मार्ट तकनीक का उपयोग करके जलवायु परिवर्तन, कृषि और पर्यावरण प्रबंधन में सुधार किया जाए।
3. ग्रामीण इलाकों में इंटरनेट और संचार सुविधाओं की पहुँच बढ़ाई जाए।

इन रणनीतियों के माध्यम से पर्वतीय क्षेत्रों में विकास को स्थिर और संतुलित रूप से बढ़ावा दिया जा सकता है, जिससे वहाँ के निवासियों के जीवन स्तर में सुधार हो और विकास के लाभ समान रूप से पहुँच सकें।

5.6 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. पर्वतीय क्षेत्रों में विकास करना मैदानी क्षेत्रों में विकास के मुकाबले.....................हैं। (सरल **या** कठिन)
2. पर्वतीय क्षेत्रों में निर्माण महंगा भी पड़ता हैं क्योंकि उसमें.................भी लगती हैं। (परिवहन लागत **या** महगाई भत्ता)
3. पर्वतीय क्षेत्र में............ वर्षा पर निर्भर रहती हैं। (कृषि **या** उद्योग)
4. पर्वतीय क्षेत्र में रोजगार की कमी के कारण............. क्षेत्रों की ओर पलायन होता हैं। (शहरी **या** ग्रामीण)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. पर्यावरणीय संरचना को बढ़ावा देने के लिए हरित क्षेत्रों को बढ़ावा दिया जाए।
2. किसी भी क्षेत्र का विकास वहाँ की राजनीति पर बहुत हद तक निर्भर करता हैं।
3. पर्यटन पर्यावरण एवं बुनियादी ढांचे पर बिलकुल भी दबाव नहीं डाल सकता हैं।
4. पर्वतीय क्षेत्रों में सीमित बुनियादी ढांचे और उचाई के कारण मोबाइल और इंटरनेट कनेक्टिविटी सहित विश्वसनीय संचार नेटवर्क सुनिश्चित करना मुश्किल हो सकता है।

5.7 सारांश (Summary)

प्रस्तुत इकाई में आपने पर्वतीय क्षेत्रों में विकास करते समय आने वाली चुनौतियों को विस्तार से पढ़ा और जाना की पर्वतीय क्षेत्रों में विकास करना मैदानी क्षेत्रों में विकास के मुकाबले कठिन हैं, मैदानी क्षेत्रों में भौगोलिक स्थितियाँ काफी सरल होती हैं एवं रास्ते सीधे होते हैं जिनमें जोखिम नहीं होता हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में विकास सरकार के लिए एक बहुत बड़ी चुनौती रही हैं एवं इसमें खर्चा भी ज्यादा आता हैं। विकास करते समय पर्वतीय क्षेत्रों में आने वाली चुनौतियों में मुख्य दस चुनौतियाँ हैं जिसमें सबसे ***पहली*** चुनौती हैं, भौगोलिक और भू-भाग संबंधी चुनौतियाँ जिसके अंतर्गत तीन कठिनाइयां हैं पहली कठिन पहुँच, दूसरी सीमित भूमि उपलब्धता और तीसरी अलगाव। ***दूसरी*** चुनौती हैं, पर्यावरण के मुद्दें जिसके अंतर्गत तीन कठिनाइयां हैं पहली मृदा अपरदन और भूस्खलन, दूसरी वनों की कटाई, और तीसरी जलवायु परिवर्तन। ***तीसरी*** चुनौती हैं, बुनियादी ढांचे का विकास जिसके अंतर्गत तीन कठिनाइयां हैं पहली उच्च लागत, दूसरी बिजली और जल आपूर्ति और तीसरी संचार। ***चौथी*** चुनौती हैं कृषि बाधाएँ, जिसके अंतर्गत तीन कठिनाइयां हैं पहली सीमित कृषि योग्य भूमि, दूसरी वर्षा आधारित कृषि पर निर्भरता और तीसरी मिट्टी की उर्वरता में गिरावट। ***पाँचवी*** चुनौती हैं सामाजिक-आर्थिक चुनौतियाँ इसके अंतर्गत पहली कठिनाइयां हैं गरीबी और बेरोजगारी, दूसरी हैं युवा प्रवासन और तीसरी हैं शिक्षा और स्वास्थ्य देखभाल तक सीमित पहुँच। ***छठी*** चुनौती हैं राजनीतिक एवं प्रशासनिक चुनौतियाँ जिसके अंतर्गत मुख्य दों चुनौतियाँ हैं पहली शासन के मुद्दे और दूसरी संसाधनों पर संघर्ष। ***सातवी*** चुनौती हैं प्राकृतिक आपदाएँ और कमजोरियाँ जिसके अंतर्गत मुख्य दों चुनौतियाँ हैं पहली भूकंपीय गतिविधि और दूसरी बाढ़। विकास के लिए ***आठवी*** चुनौती हैं संस्कृतिक और सामाजिक बाधाएँ, जिसके अंतर्गत मुख्य दों चुनौतियाँ हैं पहली पारंपरिक प्रथाएँ बनाम आधुनिक विकास और दूसरी सामुदायिक भागीदारी का अभाव। ***नवी*** चुनौती हैं पर्यटन और आखिरी ***दसवी*** चुनौती हैं स्वास्थ्य और अच्छाई जिसके अंतर्गत मुख्य दों चुनौतियाँ हैं पहली स्वास्थ्य संबंधी मुद्दे और दूसरी कुपोषण।

इन सभी चुनौतियों को विस्तार से पढ़ने के बाद आपने इन चुनौतियों के समाधान के लिए उठाए गए कदमों को पढ़ा जिसके अंतर्गत आपने भौगोलिक चुनौतियों का समाधान, जलवायु और पर्यावरणीय चुनौतियों का समाधान, संसाधनों का प्रबंधन की चुनौतियों का समाधान, स्वास्थ्य और शिक्षा की चुनौतियों का समाधान, आवश्यक संसाधनों की कमी की चुनौतियों का समाधान, सामाजिक और संस्कृतिक चुनौतियाँ का समाधान और आखिरी प्रौद्योगिकी का उपयोग की चुनौतियों का समाधान। इस इकाई को

पढने के बाद आप पर्वतीय क्षेत्रों में विकास की चुनौतियों को समझ गये हैं एवं साथ ही इन चुनौतियों के समाधान को भी आप जान गए हैं।

5.8 शब्दावली (Glossary)

- **परिवहन लागत (Transportation Cost):** परिवहन लागत का अर्थ किसी वस्तु या सेवा को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने में होने वाला व्यय है।
- **अलग-थलग (Isolated):** दूसरों से अलग रखा जाना या अलग रखा जाना या महसूस होना, जब कोई व्यक्ति या कोई क्षेत्र बाकि सबसे अलग रहे तो उसे अलग-थलग रहा जाता हैं।
- **मृदा अपरदन (Soil Erosion):** मृदा अपरदन का अर्थ है पानी, हवा या जुताई जैसे कारकों द्वारा मिट्टी की ऊपरी परत का तेजी से हटना। यह एक क्रमिक प्रक्रिया है, जिससे मिट्टी का क्षरण होता है। मृदा अपरदन के कारण मिट्टी की उर्वरता नष्ट हो जाती है और वह बंजर हो जाती है।
- **गरीबी (Poverty):** गरीबी का मतलब है, किसी व्यक्ति या परिवार के पास भोजन, कपड़े, आश्रय, स्वास्थ्य सेवा, शिक्षा और परिवहन जैसी बुनियादी ज़रूरतों को पूरा करने के लिए पर्याप्त संसाधन न होना।
- **बेरोजगारी (Unemployment):** बेरोजगारी का अर्थ है जब कोई व्यक्ति काम करने को इच्छुक और सक्षम है परन्तु उसके पास भुगतान वाली नौकरी नहीं है।
- **कुपोषण (Malnutrition):** कुपोषण का अर्थ है किसी व्यक्ति के शरीर में ऊर्जा और पोषक तत्वों की कमी, अधिकता या असंतुलन। कुपोषण विकास, शारीरिक स्वास्थ्य, मनोदशा, व्यवहार और शरीर के अन्य कार्यों को प्रभावित करता है।
- **संसाधन (Resources):** संसाधन हमारे पर्यावरण में उपलब्ध सभी सामग्रियों को संदर्भित करते हैं जो तकनीकी रूप से सुलभ, आर्थिक रूप से व्यवहार्य और संस्कृतिक रूप से टिकाऊ हैं और हमारी जरूरतों और इच्छाओं को पूरा करने में हमारी मदद करते हैं।
- **भूकंपीय गतिविधि (Seismic Activity):** भूकंपीय गतिविधि का तात्पर्य पृथ्वी पर बार-बार होने वाली गड़बड़ी से है, जिसमें भूकंप, ज्वालामुखी विस्फोट और सूक्ष्म भूकंप जैसी घटनाएं शामिल हैं। ऐसा टेक्टोनिक हलचलों या ज्वालामुखी गतिविधि के कारण होता हैं।
- **बुनियादी ढांचे (Infrastructure):** बुनियादी ढांचे का अर्थ है किसी देश, संगठन या व्यवसाय के संचालन के लिए आवश्यक अंतर्निहित प्रणालियाँ और सेवाएँ। बुनियादी ढांचे में कई तरह की चीजें शामिल होती हैं।
- **मिट्टी की उर्वरता (Soil fertility):** मिट्टी की उर्वरता का मतलब है कि मिट्टी में पौधों के बढ़ने के लिए पोषक तत्व और सही रासायनिक, भौतिक और जैविक परिस्थितियाँ हैं।
- **प्रौद्योगिकी (Technology):** ज्ञान की वह शाखा जो तकनीकी उपकरणों के निर्माण और उपयोग तथा जीवन, समाज और पर्यावरण के साथ उनके अंतर्संबंधों से संबंधित हैं।
- **सतत विकास (Sustainable Development):** सतत विकास का अर्थ है वर्तमान पीढ़ी की जरूरतों को पूरा करते हुए यह सुनिश्चित करना कि भावी पीढ़ियां भी अपनी जरूरतों को पूरा कर सकें। सतत विकास को टिकाऊ विकास या टिकाऊ विकास भी कहा जाता है। सतत विकास के तीन स्तंभ हैं: आर्थिक, पर्यावरणीय, सामाजिक।

- **बाढ़ (Flood):** किसी जल निकाय का उत्थान और प्रवाह, विशेषकर शुष्क भूमि पर। बाढ़ के कारण पूरा इलाका जलमग्न हो गया।
- **संस्कृति (Culture):** संस्कृति का अर्थ है किसी समाज में प्रचलित गुणों का समग्र रूप। यह समाज के सोचने, विचारने और कार्य करने के तरीके में अंतर्निहित है। संस्कृति में कई चीजें शामिल होती हैं।
- **पर्यटन (Tourism):** पर्यटन का अर्थ है किसी के सामान्य वातावरण से बाहर किसी मुख्य गंतव्य की यात्रा करना। यह एक सामाजिक, संस्कृतिक और आर्थिक घटना है।

5.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. कठिन 2. परिवहन लागत 3. कृषि 4. शहरी

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. सत्य 2. सत्य 3. असत्य 4. सत्य

5.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- Andriantiatsaholiniaina, L. A., Kouikoglou, V. S., & Phillis, Y. A. (2004). ***Evaluating strategies for sustainable development: fuzzy logic reasoning and sensitivity analysis. Ecological Economics***, 48(2), 149–172. https://doi.org/10.1016/j.ecolecon.2003.08.009
- Bhalachandran, G. (2011). ***Kautilya's model of sustainable development***. Humanomics, 27(1), 41–52. https://doi.org/10.1108/08288661111110169
- Chen, H., & Yada, R. (2011). ***Nanotechnologies in agriculture: New tools for sustainable development***. Trends in Food Science & Technology, 22(11), 585–594. https://doi.org/10.1016/j.tifs.2011.09.004
- Dev, R. (n.d.-a). ***Corporate Social Responsibility (CSR) in Indian Banking Sector: An analytical study of ICICI bank limited***.
- Dev, R. (n.d.-b). ***Corporate Social Responsibility in India: Reaching to Unreached?***
- ***India follows a holistic approach towards its 2030 Sustainable Development Goals (SDGs).*** (n.d.). Retrieved February 13, 2020, from https://pib.gov.in/newsite/PrintRelease.aspx?relid=191192
- Kaygusuz, K. (2012). ***Energy for sustainable development: A case of developing countries. Renewable and Sustainable Energy Reviews***, 16(2), 1116–1126. https://doi.org/10.1016/j.rser.2011.11.013

- Oparaocha, S., & Dutta, S. (2011). ***Gender and energy for sustainable development. Current Opinion in Environmental Sustainability***, 3(4), 265–271. https://doi.org/10.1016/j.cosust.2011.07.003
- Smyth, J. C. (1995). ***Environment and Education: a view of a changing scene. Environmental Education Research***, 1(1), 3–120. https://doi.org/10.1080/1350462950010101

5.11 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Useful Text)

- ***Theories of Sustainable Development*** (2015). Edited by Judith C. Enders and Moritz Remig, Routledge, 2 Park Square, Milton Park, Abingdon, Oxon OX 14 4RN
- Simon Dresner (2008). ***The Principles of Sustainability***, Earthscan Publication, Dunstan House, 14a St Cross St, London, EC1N 8XA, UK
- Jennifer A. Elliott (2013). ***An Introduction to Sustainable Development***, Routledge, 2 Park Square, Milton Park, Abingdon, Oxon OX4 14RN Island Publishing House, Inc., Philippines

5.12 निबंधात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. पर्वतीय क्षेत्रों में विकास किस प्रकार किया जाता हैं समझाइए।
2. पर्वतीय क्षेत्रों में विकास के मुद्दे एवं चुनौतियों को विस्तार से समझाइए।
3. पर्वतीय क्षेत्रों में विकास में आने वाली चुनौतियों के समाधान को बताइए।

इकाई 6 सतत विकास और स्थानीय समुदायों के लिए अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन एवं ढाँचे International Conventions and Framework for Sustainable Development and Local Communities

6.1 परिचय (Introducation)
6.2 उद्देश्य (Objectives)
6.3 सतत विकास के उद्गम के लिए हुई अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन एवं ढाँचे (International Conventions and Framework for the emergence of Sustainable Development)
6.3.1 स्टॉकहोम सम्मेलन (Stockholm Conference, 1972)
6.3.2 विश्व संरक्षण रणनीति (World Conservation Strategy, 1980)
6.3.3 नैरोबी शिखर सम्मेलन (Nairobi Summit, 1982)
6.3.4 पर्यावरण और विकास पर विश्व आयोग (World Commission on Environment and Development, 1984)
6.3.5 रियो शिखर सम्मेलन (Rio Summit, 1992)
6.3.6 जोहान्सबर्ग शिखर सम्मेलन (Johannesburg Summit, 2002)
6.3.7 संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन -2012 (United Nations Conference, 2012)
6.3.8 संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन -2015 (United Nations Conference, 2015)
6.4 स्थानीय समुदाय के लिए पर्यावरण और विकास की चुनौतियाँ (Challenges of Environment and Development for the Local Communities)
6.5 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)
6.6 सारांश (Summary)
6.7 शब्दावली (Glossary)
6.8 अभ्यास प्रश्न के उत्तर (Answer for Practice Questions)
6.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
6.10 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)
6.11 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

6.1 परिचय (Introducation)

संयुक्त राष्ट्र के व्यापक लक्ष्यों में सतत विकास भी शामिल है। सतत विकास की अवधारणा का विकास 1987 में ब्रटलैंड कमीशन रिपोर्ट में हुआ था जिसमें इसे ***"ऐसा विकास जो वर्तमान की जरूरतों की इस तरह पूर्ति करें कि भावी पीढ़ियों की जरूरतों की पूर्ति में दिक्कतें पेश नहीं आयें"***, बताया गया। सतत विकास के चार आयाम हैं- समाज, पर्यावरण, संस्कृति और अर्थव्यवस्था जोकि परस्पर जुड़े हुये हैं। सततता वस्तुत: एक उदाहरण है जिसमें माना जाता है कि पर्यावरणीय, सामाजिक, आर्थिक आवश्यकताओं का संतुलन बना रहता है जो जीवन की गुणवत्ता में सुधार करता है। उदाहरण के लिये एक समृद्ध समाज भोजन, स्वच्छ पेयजल, शुद्ध हवा एवं अन्य संसाधनों के लिये स्वस्थ पर्यावरण पर निर्भर करता है।

इस इकाई में आप सतत विकास के उद्धव का अध्ययन करेगें। वर्तमान में विभिन्न देश इस बात पर सहमत हुये कि विकास सतत होना चाहिये। यानी देश सकारात्मक आर्थिक एवं सामाजिक लक्ष्यों को प्राप्त करें और इस प्रक्रिया में पर्यावरण को किसी तरह का नुकसान नहीं पहुंचे। इसके साथ ही यह भी सुनिश्चित किया जाना चाहिये कि इन दोनों लक्ष्यों को प्राप्त करने के दौरान यह बिन्दु ध्यान में रहे कि भावी पीढ़ियों के अधिकार और अवसर सुनिश्चित रहें।

6.2 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप -

- ✓ सतत विकास के उद्धव के लिए हुई अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन एवं ढाँचे को समझ सकेंगे।
- ✓ स्थानीय समुदाय के लिए पर्यावरण और सतत विकास की चुनौतियों से अवगत हों सकेंगे।

6.3 सतत विकास के उद्गम के लिए हुई अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन एवं ढाँचे (International Conventions and Framework for the emergence of Sustainable Development)

सतत विकास की अवधारणा को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर औपचारिक पहचान वर्ष 1992 में **रियो डी जेनेरियो,** ब्राजील में पर्यावरण और विकास पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन (United Nations Conference on Environment and Development- UNCED) में मिली। तथापि, इसकी बुनियाद 1950-1960 से ही पड़ गयी थी जब विकसित देशों में त्वरित (rapid) औद्योगिक विकास के कारण पर्यावरण को हो रहे नुकसान की चिन्ता और जागरूकता उभरी। 1952-53 में लंदन में धुंध (London Smog) की घटना ने प्रदूषण के खतरों को स्पष्ट किया। **रशेल कार्सन (Rachel Carson)** ने 1962 में अपनी पुस्तक **'Silent Spring'** में औद्योगिक गतिविधियों के नकारात्मक प्रभावों की ओर लोगों का ध्यान खींचा।

यूनाइटेड किंगडम और यूनाइटेड स्टेट्स ऑफ अमेरिका के बाहर अन्य विकसित क्षेत्रों में भी इसी तरह की पर्यावरणीय जागरूकता इसी दौर में उभर रही थी। जापान में **मिनामाटा रोग** (Minamata Disease) (मिनामाटा शहर में मरकरी की वजह से फैला रोग) ने भारी औद्योगिक विकास के खतरनाक पहलू को सामने रखा। लगातार सामने आ रही समस्याओं और जनता की परेशानियों को ध्यान में रखते हुये अमेरिका में 1 जनवरी 1970 को कांग्रेस ने विशेष कानून **राष्ट्रीय पर्यावरण नीति अधिनियम** (National Environmental Policy Act - NEPA) लागू किया। **राष्ट्रीय पर्यावरण नीति अधिनियम** (NEPA) का लक्ष्य संघीय शासन-प्रशासन को पर्यावरणीय प्रभावों और कार्यों के प्रति जिम्मेदार बनाना था। अब तक दुनियाभर के सौ से अधिक देशों में पर्यावरणीय प्रभावों के मूल्यांकन के लिये इसी तरह की व्यवस्था और प्रक्रिया अपनायी जा चुकी है। इसके करीब 20 साल बाद सतत विकास की ब्रंटलैंड अवधारणा में भी पर्यावरण और विकास में संतुलन पर जोर दिया गया।

विश्व में हुई विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों के द्वारा सतत विकास की उत्पत्ति के क्रम को आइए समझते हैं।

- स्टॉकहोम सम्मेलन, 1972
- विश्व संरक्षण रणनीति, 1980
- नैरोबी शिखर सम्मेलन,1982
- पर्यावरण और विकास पर विश्व आयोग, 1984
- रियो शिखर सम्मेलन, 1992
- जोहान्सबर्ग शिखर सम्मेलन, 2002
- संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन, 2012
- संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन, 2015

6.3.1 स्टॉकहोम सम्मेलन (Stockholm Conference, 1972)

औद्योगिक देशों द्वारा सामना की जाने वाली पर्यावरणीय समस्याओं और इस एहसास के जवाब में कि ये समस्याएँ स्टॉकहोम देशों की सीमाओं तक ही सीमित नहीं हैं, संयुक्त राष्ट्र ने 1972 में स्टॉकहोम में मानवीय पर्यावरण पर सम्मेलन का आयोजन किया। सम्मेलन में पारिस्थितिकी एकीकरण, जैविक जैव-विविधता, मानव स्वास्थ्य और विकास के लिये पारिस्थितिकी एवं संसाधनों की सीमा जैसे मुद्दों को प्रमुखता से रखा गया। सम्मेलन में जहरीले पदार्थों की वजह से सामने आ रही समस्याओं पर विमर्श किया गया लेकिन इस चिंतन का लक्ष्य 70 के दशक में सिर्फ राष्ट्रीय स्तर की नीतियों और प्रावधानों पर ही रहा। 70 के दशक के अंत तक ओजोन परत को नुकसान और ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन से उभरी दिक्कतों को लेकर अंतर्राष्ट्रीय सामुदायिक विमर्श प्रारंभ हुआ। 1980 तक ओजोन परत को नुकसान से बचाने के लिये और 1990 तक वैश्विक जलवायु परिवर्तन को लेकर कदम बढ़ाने की शुरुआत हुई।

स्टॉकहोम सम्मेलन को दो महत्वपूर्ण बिन्दुओं के लिए जाना जाता है। सबसे ***पहला,*** इसने सभी देशों में राष्ट्रीय पर्यावरण नीतियों के अनिवार्य निर्माण का आह्वान किया। ***दूसरा*** इस सम्मेलन के माध्यम से वैश्विक समुदाय को सतत जीवन में स्वस्थ जैव विविधता के महत्व और पोषण संबंधी भूमिका के बारे में जानकारी दी गई और पर्यावरण के लिए उनके संरक्षण की आवश्यकता व्यक्त की गई। स्टॉकहोम सम्मेलन ही संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (United Nations Environment Programme) की स्थापना की बुनियाद बना, जिसने संयुक्त राष्ट्र को स्टॉकहोम एक्शन प्लान की सिफारिशों के समन्वय और कार्यान्वयन के लिए संस्थागत क्षमता प्रदान की।

6.3.2 विश्व संरक्षण रणनीति (World Conservation Strategy, 1980)

प्रकृति और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के लिए अंतर्राष्ट्रीय संघ (International Union for Conservation of Nature and Natural Resources) 1980 और विश्व संरक्षण रणनीति (World Conservation Strategy) को सतत विकास की बुनियाद माना जाता है। विश्व संरक्षण रणनीति, विकास प्रक्रिया में पर्यावरण संरक्षण को लेकर दशकों दशकों से चली आ रही वैश्विक, सामुदायिक चर्चा का एक संश्लेषण है। विश्व संरक्षण रणनीति (WCS) में विकास को समझाने के लिये सतत शब्द का प्रयोग किया गया, जिसका अर्थ सजीव व निर्जीव संसाधनों के आधार के सामाजिक, आर्थिक, पारिस्थितिक कारकों तथा वैकल्पिक क्रियाओं के लाभ-हानि के जरिये विकास को तय करना था। विश्व संरक्षण रणनीति (WCS) का सुझाव था कि आर्थिक और सामाजिक विकास को एकसाथ होना चाहिए ताकि सजीव संसाधनों का संरक्षण और सतत विकास हो सके। हालांकि, विश्व संरक्षण

रणनीति (WCS) विकास और पर्यावरण की चिंताओं को पूरी तरह एकीकृत नहीं कर सका, लेकिन इसकी सतत विकास अवधारणा ने पर्यावरण और विकास पर विश्व आयोग (World Commission on Environment and Development) की रिपोर्ट तैयार करने में मदद की, जिसके जरिये 1992 की संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन में भविष्य के मुद्दों को समझने और एकीकृत करने का विचार उभरकर आया।

6.3.3 नैरोबी शिखर सम्मेलन (Nairobi Summit, 1982)

स्टॉकहोम सम्मेलन के दस साल बाद संयुक्त राष्ट्र ने नैरोबी में शिखर सम्मेलन की जिसमें स्टॉकहोम कार्य योजना की प्रगति और **राष्ट्रीय पर्यावरण नीति अधिनियम** (National EnvironmentalPolicy Act - NEPA) के लिये पर्यावरणीय मसलों पर भावी सुझाव दिये गये। सम्मेलन से पहले संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (United Nations Environment Programme) की ओर से तैयार की गयीं रिपोर्ट और नैरोबी घोषणाओं से यह स्पष्ट संदेश दिया गया कि कई राष्ट्रों में पर्यावरण संरक्षण की दिशा में बेहतर काम हुआ है लेकिन यह कार्य पर्यावरण को अब तक हो चुके नुकसान को वापस लौटा पाने में सक्षम नहीं थे। नैरोबी शिखर सम्मेलन में विकासशील देशों में स्वास्थ्य, जनकल्याण और पर्यावरण संरक्षण में आर्थिक विकास की भूमिका को भी उभारा गया। इसकी वजह यह थी कि पर्यावरणीय समस्याएं विकासशील देशों के लिये चुनौती बने हुये थे।

6.3.4 पर्यावरण और विकास पर विश्व आयोग (World Commission on Environment and Development, 1984)

इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि जनसंख्या और आर्थिक विकास बढ़ने के बावजूद दुनिया भर में पर्यावरण की स्थिति बिगड़ती जा रही है, संयुक्त राष्ट्र महासभा ने पर्यावरणीय मुद्दों पर एक विशेष और स्वतंत्र आयोग की स्थापना की। इसका मकसद सतत विकास के लिये दीर्घकालिक पर्यावरणीय रणनीति तैयार करने के साथ विकसित और विकासशील देशों, लोगों, संसाधनों, पर्यावरण और विकास में अंतर्संबंध स्थापित करना था। संक्षेप में कहें तो आयोग का लक्ष्य विकास की नयी दृष्टि को विकसित करना था। इसके कुछ समय बाद ही नार्वे (Norway) के पूर्व प्रधानमंत्री **ग्रो हार्लेम ब्रंटलैंड (Gro Harlem Brundtland)** की अध्यक्षता में **पर्यावरण और विकास पर विश्व आयोग (World Commission on Environment and Development)** जिसे **ब्रंटलैंड कमीशन** के नाम से भी जाना जाता है उसका भी गठन किया गया, जिसकी पहली शिखर सम्मेलन अक्टूबर 1984 में स्विट्जरलैंड के जेनेवा (Geneva) में हुयी। 1984 से 1987 के बीच ने दुनियाभर से हजारों लोगों, संस्थाओं और संगठनों से सुझाव, परामर्श, समर्थन हासिल किया। इस आयोग ने पर्यावरण और विकास के मुद्दों पर प्रत्यक्ष अनुभव के लिये दुनिया के कई हिस्सों की यात्रा की। 11 दिसंबर 1987 को आयोग के 'वर्ष 2000 और भविष्य के लिये पर्यावरण दृष्टिकोण' को संयुक्त राष्ट्र महासभा ने अवधारित किया, इसी साल **'हमारा साझा भविष्य (Our Common Future)'** नाम से आयोग की रिपोर्ट भी प्रकाशित हुई। सतत विकास के मसले पर करीब एक दशक तक बहस, विमर्श को बढ़ावा देते हुये ब्रंटलैंड ने पर्यावरणीय सुरक्षा के साथ सामाजिक और आर्थिक विकास को प्रभावी रूप से एकीकृत करने की दिशा में प्रयास किये।

6.3.5 रियो शिखर सम्मेलन (Rio Summit, 1992)

विश्व के साझा भविष्य की चिंताओं के साथ संयुक्त राष्ट्र महासभा ने वर्ष 1992 में ब्राजील के रियो डि जेनेरियो (Rio de Janeiro) में **पर्यावरण और विकास पर विश्व आयोग (World Commission on Environment and Development)** का आयोजन किया, जिसे **रियो शिखर सम्मेलन (Rio Summit)** के नाम से भी जाना जाता है। सम्मेलन में 178 देशों के प्रतिनिधि शामिल हुये, जिनमें 110 देशों के राष्ट्रप्रमुख भी थे। इस लिहाज से यह अपनी तरह का पहला सम्मेलन था। सम्मेलन ने सतत विकास के विचार को आकार देने के लिये केन्द्रीय भूमिका के तौर पर दो अधिकृत अवधारणाएं- पर्यावरण एवं विकास की रियो घोषणा और एजेंडा 21 दी। रियो घोषणा में जहां सतत विकास की

दृष्टि विकसित की, वहीं एजेंडा 21 ने इस लक्ष्य को पाने के लिये संयुक्त राष्ट्र, विभिन्न सरकारों, प्रमुख समूहों मे समन्वय, संयुक्त एकीकृत योजना और कार्यशैली के तरीकों की जानकारी दी गयी। सम्मेलन में जलवायु परिवर्तन, जलवायु संबंधी नीतियों को लेकर अंतर्राष्ट्रीय कार्यढांचा और कानून भी तय किये गये। ब्रंटलैंड समिति की अवधारणाओं को आगे बढ़ाते हुये रियो घोषणा और एजेंडा-21 ने विकास के पुराने दृष्टिकोण को समाप्त करने के बजाय उन्हें पुनर्निर्धारित करने पर जोर दिया।

1990 से पूर्व अंतर्राष्ट्रीय समुदाय द्वारा प्रोत्साहित पारंपरिक विकास मॉडल में चार विषय समाविष्ट थे- ***पहला***, सुरक्षा और शांति ***दूसरा***, आर्थिक विकास, ***तीसरा***, सामाजिक विकास और ***चौथा*** शांति और विकास की रक्षा करने वाला राष्ट्रीय शासन, ब्रंटलैंड कमीशन और रियो शिखर सम्मेलन ने पारंपरिक विकास मॉडल को पर्यावरणीय चिंताओं के साथ जोड़ने पर जोर दिया। रियो घोषणा के तीसरे और चौथे सिद्धांत में इस लक्ष्य की जानकारी दी गयी है। ***तीसरा सिद्धांत*** में विकास का अधिकार की पूर्ति वर्तमान और भविष्य के विकास और पर्यावरणीय जरूरतों के लिहाज से की जानी चाहिये। ***चौथा सिद्धांत*** सतत विकास का लक्ष्य हासिल करने के लिये पर्यावरणीय संरक्षा को विकास प्रक्रियाओं के साथ एकीकृत किया जाना चाहिये।

6.3.6 जोहान्सबर्ग शिखर सम्मेलन (Johannesburg Summit, 2002)

रियो शिखर सम्मेलन के बाद से हुयी प्रगति की समीक्षा के लिये वर्ष 2002 में जोहान्सबर्ग शिखर सम्मेलन आयोजित की गयी। रियो शिखर सम्मेलन के दस साल बाद, दुनिया ने विकास, उपभोग और जीवनशैली पर आधारित आर्थिक विकास के एक नए चरण का अनुभव किया, जो अमीर और गरीब देशों के बीच की खाई को पाटता है। जोहान्सबर्ग घोषणा में कहा गया, ***'बाजारों के त्वरित एकीकरण, पूंजी की गतिशीलता और निवेश का बहाव दुनियाभर में बना रहता है जो सतत विकास की नयी चुनौतियों और अवसर खुलने की वजह बनता है।'*** सतत विकास के प्रति दृढ़निश्चय को बनाये रखने के लिये जोहान्सबर्ग ने विशेष रूप से विकसित देशों के लिये व्यापक लक्ष्य की प्राप्ति के लिये अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सहमति बनाकर काम करने पर जोर दिया। जोहान्सबर्ग शिखर सम्मेलन के बाद अंतर्राष्ट्रीय समुदाय ने वैश्विक जलवायु परिवर्तन पर चिंता प्रारंभ की। वर्ष 2007 में नोबल पुरस्कार (शांति) प्राप्त **अल गोर (Al Gore)** की वृत्तचित्र (Documentary) **'An Inconvenient Truth'** के बाद विभिन्न सरकारों द्वारा जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त पैनलों का गठन किया गया, जिसने वैश्विक रूप से जागरूकता में बढ़ावा आया। इसी तरह 30 अक्टूबर 2006 को **यूनाइटेड किंगडम ट्रेजरी** (United Kingdom Treasury) ने जलवायु परिवर्तन का अर्थशास्त्र: स्टर्न समीक्षा (The Economics of Climate Change: The Stern Review) का प्रकाशन किया। हालांकि, जलवायु परिवर्तन के आर्थिक विश्लेषण पर यह पहली रिपोर्ट नहीं थी लेकिन इसे अपनी तरह की सर्वाधिक चर्चित और विस्तृत माना जाता है।

6.3.7 संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन -2012 (United Nations Conference 2012)

रियो शिखर सम्मेलन के 20 साल बाद सतत विकास पर संयुक्त राष्ट्र का यह सम्मेलन रियो डि जेनेरियो (Rio de Janeiro) में वर्ष 2012 में आयोजित हुआ, जिसे **रियो-20 (Rio-20)** के नाम से भी जाना जाता है। सम्मेलन का प्रथम लक्ष्य सतत विकास को लेकर अंतर्राष्ट्रीय समुदाय के प्रयासों को पुनर्जीवित करना था। पचास हजार के करीब नीति निर्माताओं, पर्यावरणविदों और कारोबारियों ने सम्मेलन में प्रतिभाग किया लेकिन एकल समन्वित कार्यढांचे पर सहमति नहीं बन पाने के कारण कई विशेषज्ञ इस सम्मेलन को विफल मानते हैं। यद्यपि, इस सम्मेलन का एक सबसे बेहतर निष्कर्ष सतत विकास को आगे बढ़ाने के लिये लचीले तंत्र के तौर पर **'हरित अर्थव्यवस्था (Green Economy)'** का समर्थन था। सम्मेलन ने नीति निर्माताओं को 1992 रियो शिखर सम्मेलन में तय हुयी घोषणाओं की पुन: जानकारी देने और अब तक हुये कार्यों की समीक्षा का अवसर दिया। एक बार फिर यह स्पष्ट किया गया कि आर्थिक विकास का अर्थ पर्यावरण को नुकसान नहीं होना चाहिए।

6.3.8 संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन -2015 (United Nations Conference 2015)

न्यूयार्क (New York) स्थित संयुक्त राष्ट्र मुख्यालय में सतत विकास के मसले पर 25 से 27 सितंबर 2015 को संपन्न तीन दिवसीय सम्मेलन में 193 सदस्य देशों द्वारा वर्ष 2030 तक गरीबी उन्मूलन का वैश्विक एजेंडा अवधारित किया गया। 17 बुनियादी लक्ष्यों के साथ नये ऐतिहासिक सतत विकास एजेंडा ने राष्ट्रीय कार्यनीतियों और अंतर्राष्ट्रीय समन्वय के नये युग का प्रारंभ किया। 150 से अधिक वैश्विक नेताओं से सम्मेलन को संबोधित किया और सतत विकास लक्ष्यों को सहस्राब्दी विकास लक्ष्यों (Millennium Development Goals) के तौर पर विस्तार दिया गया। इन लक्ष्यों को वर्ष 2000 में स्वीकृति मिली थी लेकिन वर्ष 2015 तक इनकी समय सीमा समाप्त हो चुकी थी, ऐसे में वर्ष 2015 से नये विकास एजेंडा को मंजूरी दी गयी, जिसके लिये वर्ष 2012 की **रियो-20** सम्मेलन में सहमति बनी थी। इस लक्ष्य को '"हमारी दुनिया को बदलना: सतत विकास के लिए 2030 एजेंडा (Transforming Our World: The 2030 Agenda for Sustainable Development' नाम दिया गया। जिसमें 17 सतत विकास लक्ष्यों के साथ कुल 169 उद्देश्य निर्धारित हैं। इन लक्ष्यों का कार्यक्षेत्र विस्तृत है क्योंकि ये सतत विकास से जुड़े अहम बिंदुओं (आर्थिक विकास, सामाजिक समन्वय, पर्यावरण संरक्षण आदि) पर केन्द्रित हैं। इनके अलावा गरीबी उन्मूलन, असमानता और अन्याय से संघर्ष और जलवायु परिवर्तन जैसे मसलों पर भी ध्यान केन्द्रित किया गया है।

6.4 स्थानीय समुदाय के लिए पर्यावरण और विकास की चुनौतियाँ (Challenges of Environment and Development for the Local Communities)

उल्लेखनीय प्रगति के बावजूद अनेक बाधाएँ एवं नकारात्मक पहलू भी सामने आते हैं। नकारात्मक पहलू (जटिल, गतिशील और संवाद में कठिन) चुनौतियों की एक विस्तृत शृंखला को सामने लाते हैं जो सभी देशों में राष्ट्रीय विकास (भले ही वहां आर्थिक विकास की दर कुछ भी हो) को प्रभावित करते हैं। नियमित वैश्विक आकलन के माध्यम से कई ऐसी चुनौतियों और नकारात्मक प्रवृत्तियों को उजागर किया गया है, जिन पर काबू पाना बेहद जरूरी है। सतत विकास लक्ष्यों के सामने आने वाली गंभीर और परस्पर संबंधित चुनौतियों पर विभिन्न रिपोर्टें प्रकाश डालती हैं जिनमें से कुछ महत्वपूर्ण बिन्दुओं को निम्नलिखित रूप में आपके सामने प्रस्तुत किया गया हैं।

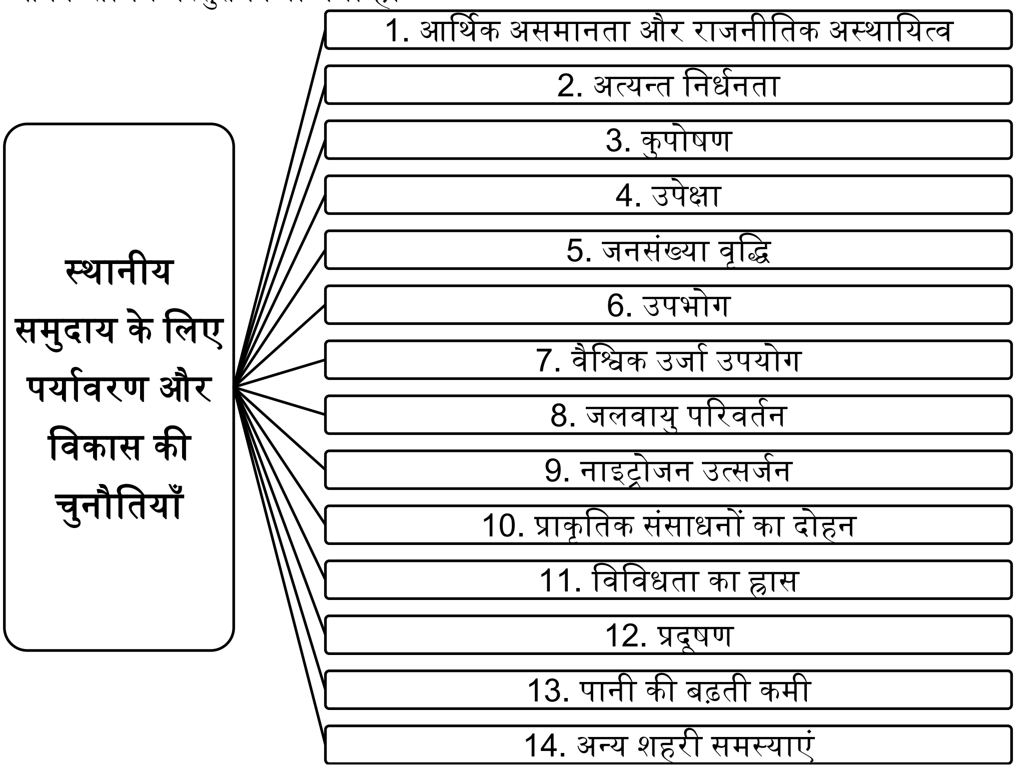

1. **आर्थिक असमानता और राजनीतिक अस्थायित्व (Economic Inequality and Political Instability)** बीते 20 सालों में अधिकतर देशों का आर्थिक विकास मजबूती से हुआ है लेकिन कई देश अब भी ऐसे हैं जहां आर्थिक हानि और प्रति व्यक्ति आय में कमी आयी है। समृद्ध और निर्धन देशों के बीच आय और उनके द्वारा संचालित की जाने वाली बहुराष्ट्रीय कंपनियों (Multinational Companies) की संख्या की यह असमानता निरंतर बढ़ती जाती है। इसका अर्थ यह है कि दुनियाभर की बड़ी आबादी, देशों और कार्पोरेट्स, वैश्विक अर्थव्यवस्था व प्राकृतिक संसाधनों का नियंत्रण दुनिया के बहुत कम प्रतिशत लोगों द्वारा किया जाता है। यह पारंपरिक और अल्पसंख्यक वर्ग को शासन और आर्थिक अवसरों की उपलब्धता से उपेक्षित करने के साथ अस्थायित्व को बढ़ावा देता है। राजनीतिक अस्थायित्व कई बार विभिन्न देशों में हिंसक अंतर्विरोध की वजह बनता है जो सामाजिक-आर्थिक विकास की राह में बाधा बनता है।
2. **अत्यन्त निर्धनता (Extreme Poverty):** समृद्धि के इस दौर में भी विकासशील दुनिया में प्रति पांच में से एक व्यक्ति अत्यन्त निर्धनता से जूझ रहा है। विश्व बैंक के अनुसार लगभग 712 मिलियन लोग (दुनिया की आबादी का लगभग 9 प्रतिशत) आज अत्यधिक गरीबी में रहते हैं जिसे प्रतिदिन 2.15 डॉलर से भी कम पर जीवनयापन करने के रूप में परिभाषित किया जाता हैं।
3. **कुपोषण (Malnutrition):** समग्र मानवीय पोषण के लिहाज से वर्तमान में वैश्विक खाद्य उत्पादन उपयुक्त नहीं है लेकिन आर्थिक संसाधनों और भोजन के वितरण से जुड़ी समस्याओं का तात्पर्य यह है कि 8 करोड़ लोग कुपोषण का शिकार हैं। यद्यपि वैश्विक खाद्योत्पादन में बढ़ोतरी हो रही है लेकिन विश्व आबादी को पर्याप्त भोजन उपलब्ध कराने में अब भी कई चुनौतियां बनी हुयी हैं। कई महत्वपूर्ण फसलों की उपज दर में गिरावट आ रही है। मिट्टी का कटाव और क्षरण, सिंचाई का अभाव, कृषि भूमि को नुकसान पहुंचाता है जिसने कई क्षेत्रों में फसलों को खतरे में डाल दिया है।
4. **उपेक्षा (Neglect):** कई देश धीमे आर्थिक विकास, भारी उधारी के बोझ, हिंसक अंतर्विरोध और खाद्य असुरक्षा के दबाव के चलते संघर्षरत हैं। इन देशों की अधिकतर आबादी सामाजिक सेवाओं, भोजन आपूर्ति और अवस्थापना ढांचे की सुविधाओं से कहीं दूर हैं। अपनी आर्थिक संपत्तियों के विकास की उन लोगों की क्षमता भी प्राकृतिक संसाधनों तक पहुंच के अभाव में खत्म होती जा रही है। ऐसे में कुछ आर्थिक पलायनवादी (escapist) बन जाते हैं तो कुछ शरणार्थी (refugee) जीवन जीने लगते हैं। इसके परिणामस्वरूप निर्धन देश और निर्धन लोग वैश्विक अर्थव्यवस्था की प्रक्रिया में निरंतर उपेक्षित बने रहते हैं।
5. **जनसंख्या वृद्धि (Population Growth):** जनसंख्या में निरंतर बढ़ोतरी उपरोक्त सभी दबावों को और अधिक बढ़ाने का काम करती है। यहां लोगों की संख्या से अधिक महत्वपूर्ण तथ्य संसाधनों पर उनका सघन दबाव और उपभोग है। संयुक्त राष्ट्र के अनुसार, 15 नवंबर 2022 को विश्व की जनसंख्या 8 अरब हो गई। जो कुछ वर्ष पहले जनसंख्या को लेकर लगाये गये अनुमान से कुछ धीमी रफ्तार जरूर है लेकिन इसके अब भी लगातार बढ़ने की ही संभावना है।
6. **उपभोग (Consumption):** प्रति व्यक्ति आय के लिहाज से पिछड़े देशों के मुकाबले विकसित अर्थव्यवस्थाओं में उच्च उपभोग की बढ़ती मांग पर्यावरण पर अधिक प्रभाव डाल सकती है। आधुनिक औद्योगिक अर्थव्यवस्थाओं के प्राकृतिक संसाधनों के उपभोग का स्तर लगातार बढ़ रहा है। यदि सभी तत्वों (मिट्टी क्षरण, खनन अपशिष्ट और अन्य सहायक तत्वों) के लिहाज से देखा जाये तो आंकड़ों के लिहाज से यह प्रतिवर्ष 45 से 85 टन प्रति व्यक्ति पहुंच चुका है।
7. **वैश्विक उर्जा उपयोग (Global Energy Use):** वर्ष 1971 से अब तक वैश्विक ऊर्जा उपयोग में 90 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुयी है। हालांकि, अब भी दो अरब लोग जीवाश्म ईंधन आधारित अर्थव्यवस्था (Fossil Fuel based Economy) से जुड़ नहीं सके हैं। यद्यपि इसकी बढ़ोतरी का अर्थ यह है कि अधिक लोग ऊर्जा सेवाओं से जुड़ पायेंगे लेकिन इसका नकारात्मक पहलू यह है कि इसके कारण ग्रीन हाउस गैसों (Green house gases) के उत्सर्जन के मौजूदा स्तर में 50

प्रतिशत तक वृद्धि होगी। ऐसे में ऊर्जा दक्षता को बढ़ाने के साथ जीवाश्म ईंधन पर निर्भरता को कम करने की जरूरत है।

8. **जलवायु परिवर्तन (Climate Change):** 90 के दशक के अंत में कार्बन डाई ऑक्साइड का उत्सर्जन 1950 के मुकाबले लगभग चार गुना बढ़ गया था। 2023 में यह 37.55 बिलियन मीट्रिक टन हो गया, जो एक नई रिकॉर्ड ऊंचाई है। जलवायु परिवर्तन पर गठित अंतरसरकारी पैनल के अनुसार आंकड़े स्पष्ट करते हैं कि जलवायु परिवर्तन के लिये मानवीय गतिविधियां ही जिम्मेदार हैं। मौसम-चक्र में परिवर्तन, पारिस्थितिकीय उत्पादन और प्रजातियों की संरचना में बदलाव और चरम मौसमी घटनाएं इसका परिणाम हैं।
9. **नाइट्रोजन उत्सर्जन (Nitrogen Emissions):** बेहद सघन कृषि, जीवाश्म ईंधन का दहन और फलीदार फसलों का भारी उत्पादन पर्यावरण में नाइट्रोजन की बढ़ोतरी की वजह बन रहा है। जिससे अम्लता बढ़ती है और जो पारिस्थितिकी में प्रजातीय संरचना में बदलाव, ताजे पानी में मानवीय उपयोग के मानकों से अधिक नाइट्रिक तत्वों की बढ़ोतरी, पानी में गंदगी से जलीय जीवों पर असर आदि का कारण बनता है। नाइट्रोजन ऑक्साइड का उत्सर्जन ग्लोबल वार्मिंग का कारण है।
10. **प्राकृतिक संसाधनों का दोहन (Exploitation of natural resources):** प्राकृतिक संसाधनों के अभाव, भूक्षरण, वनों और मत्स्य जीवों का अभाव, वनों का कटान आदि के चलते पर्यावरणीय नुकसान लगातार बढ़ रहा है। पिछले तीन दशकों में वनों की कटाई की दर में कमी आई है, जो 1990 के दशक में 16 मिलियन हेक्टेयर प्रति वर्ष से घटकर 2015 और 2020 के बीच प्रति वर्ष 10 मिलियन हेक्टेयर हो गई है। हालाँकि, 2022 में, उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में 2021 की तुलना में 10% (कुल 4.1 मिलियन हेक्टेयर) अधिक प्राथमिक वर्षावन नष्ट हो गए। मूंगा चट्टानों, ताजे जल के क्षेत्र जैसे नाजुक जलीय पर्यावरण भूमि आधारित प्रदूषण के कारण खतरे में हैं। बांधों का निर्माण, मछली पकड़ने की अनुचित तकनीक भी जलवायु परिवर्तन का कारण हैं। एक अनुमान के अनुसार मानवीय गतिविधियों के कारण दुनिया की 60 प्रतिशत से अधिक मूंगा चट्टानें और 34 फीसदी से अधिक मत्स्य प्रजातियां खतरे में हैं। जलवायु परिवर्तन धरती पर प्राकृतिक संसाधनों की निरंतरता की क्षमता पर सवाल खड़े करते हैं कि आखिर वे कब तक बढ़ती शहरी आबादी के लिये भोजन उपलब्ध करायेंगे और सतत बने रहेंगे।
11. **विविधता का ह्रास (Loss of Diversity):** जैविक उत्पाद और प्रक्रियाएं वैश्विक अर्थव्यवस्था में 40 प्रतिशत योगदान करती हैं। ऐसा अधिकतर उत्पादन लगातार घटती प्रजातियों को उगाने से मिलता है। बड़े पैमाने पर कृषि और वानिकी उत्पादन स्थानीय जैवविविधता को नष्ट कर एकल कृषि पर केन्द्रित होती है। हालांकि, समय के साथ जैव-विविधता के महत्व को लेकर जागरूकता भी बढ़ी है लेकिन जैव-विविधता का कुछ हिस्सा बड़ी और शक्तिशाली कंपनियों के हाथों में जाने लगा है। आजीविका के स्तर पर कई निर्धन समूह जैविक प्रजातियों पर निर्भर हो सकते हैं और बदलती परिस्थितियों में वे लुप्त होती प्रजातियों को बचाये रखने में अहम भूमिका निभा सकते हैं। 2022 के एक अध्ययन के अनुसार, 1500 के बाद से लगभग 30 प्रतिशत प्रजातियाँ विलुप्त हो गई हैं या खतरे में हैं, और 2023 के एक अध्ययन में पाया गया कि 70,000 प्रजातियों में से 48 प्रतिशत को मानवीय गतिविधियों के कारण जनसंख्या में गिरावट का सामना करना पड़ रहा है।
12. **प्रदूषण (Pollution):** अधिकतर देश सामान्य से चिंताजनक स्तर तक के प्रदूषण को झेल रहे हैं, जो पानी, मिट्टी और हवा यानी सभी बुनियादी संसाधनों को बुरी तरह प्रभावित कर रहा है। कई देशों में प्रदूषण उन्मूलन को लेकर अभियानों के बावजूद दुनियाभर में रासायनिक तत्वों की उपलब्धता में विस्तार, कीटनाशक का इस्तेमाल, भारी धातुओं, सूक्ष्म कणों और अन्य तत्वों का पानी, हवा और मिट्टी में मिलना-घुलना मानव स्वास्थ्य एवं पर्यावरण को भारी नुकसान पहुंचा रहा है।

13. **पानी की बढ़ती कमी (Increasing Water Shortage):** वैश्विक स्तर पर जल का उपयोग-उपभोग तेजी से बढ़ रहा है। पानी की कमी 21वीं सदी का सबसे चिंताजनक और दबाव वाला बिंदु बनने की संभावना है। दुनिया की एक तिहाई आबादी ऐसे देशों में रह रही है, जो पहले से जल की कमी से जूझ रहे हैं। यह संख्या अगले बीस साल में दो तिहाई तक पहुंचने की आशंका है। ऐसे में पानी को बचाने, जल संरक्षण तकनीकों के विकास के लिये आवश्यक और कारगर कदम उठाये जाने की जरूरत है। संयुक्त राष्ट्र के एक अनुमान के अनुसार, 2040 तक लगभग 4.5 अरब लोग जल संकट (या पानी की कमी) से प्रभावित हो सकते हैं।
14. **अन्य शहरी समस्याएं (Other Urban Problem):** संसाधनों, विशेषज्ञताओं के अभाव, कमजोर शासनतंत्र के साथ निरंतर औद्योगीकरण और शहरीकरण पर्यावरणीय और सामाजिक समस्याओं को बढ़ा रहा है। जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण, ठोस अपशिष्ट निस्तारण की व्यवस्था का अभाव, खतरनाक और जहरीला कचरा, ध्वनि प्रदूषण ने शहरी क्षेत्रों को पर्यावरण संकट वाले क्षेत्रों के तौर पर स्थापित कर दिया है। इसके चलते इस क्षेत्र में रहने वाले निर्धन वर्ग के लोगों के बच्चे स्वास्थ्य के लिहाज से सर्वाधिक जोखिम में होते हैं।

6.5 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. रियो शिखर सम्मेलन के बाद से हुयी प्रगति की समीक्षा के लिये वर्ष .... में जोहान्सबर्ग शिखर सम्मेलन आयोजित की गयी। (2000 **या** 2002)
2. जोहान्सबर्ग शिखर सम्मेलन का क्या मुख्य उद्देश्य........................ था। (सतत विकास और गरीबी में कमी **या** ऊर्जा सुरक्षा)
3. स्थानीय समुदायों के लिए सतत विकास की एक मुख्य चुनौती........................ है। (सामाजिक असमानता **या** स्थलीय समानता)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. सतत विकास के संदर्भ में 'हरित अर्थव्यवस्था' का मतलब शहरों के विस्तार से है।
2. स्थानीय समुदायों के साथ काम करने के लिए सबसे महत्वपूर्ण पहलू सामाजिक समावेशन है।

6.6 सारांश (Summary)

सतत विकास के लिये नीतियों के निर्माण में समग्र और एकीकृत दृष्टिकोण की आवश्यकता है ताकि पर्यावरणीय, सामाजिक, आर्थिक आयामों पर विकास के विस्तृत पहलुओं को समझा और उनकी दिशा में काम किया जा सके। एकीकृत, अनुशासित दृष्टिकोण भी आवश्यक है ताकि ज्ञान के आधार के विखंडन और असमानता की समस्या से पार पाया जा सके और जटिल परेशानियों के समाधान तलाशे जायें।

इस इकाई के अध्ययन के जरिये हमने ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य से सतत विकास की अवधारणा को समझने का प्रयास किया है। इससे यह स्पष्ट हुआ है कि सतत विकास को लेकर हुयी रियो घोषणा और साझा भविष्य जैसे बुनियादी सन्दर्भ तैयार करने के दौरान कई तरह के समझौते भी किये गये। यह भी स्पष्ट हुआ है कि ब्रंटलैड कमीशन, रियो+20, जोहान्सबर्ग घोषणा आदि के बाद वर्ष 2015 से सतत विकास के नये स्वरूपों को लागू किया जा रहा है। यहां यह जरूरी है कि ऐसी नीतियां और पहल की समग्र, निर्बाध प्रक्रियाओं को तैयार किया जाये जो एकल लक्ष्य आधारित और सीमित परिणाम देने वाली नीतियों से आगे जाकर काम कर सकें।

6.7 शब्दावली (Glossary)

- **कुपोषण (Malnutrition):** यह स्थिति तब उत्पन्न होती है जब किसी व्यक्ति को पर्याप्त या संतुलित आहार नहीं मिलता, कुपोषण के परिणामस्वरूप बच्चों में विकास संबंधी समस्याएँ, वयस्कों में ऊर्जा की कमी और कई स्वास्थ्य समस्याएँ उत्पन्न हो सकती हैं।

- **जलवायु परिवर्तन (Climate Change):** यह प्रक्रिया पृथ्वी के मौसम पैटर्न में दीर्घकालिक बदलाव को संदर्भित करती है। जलवायु परिवर्तन के प्रभावों में ग्लोबल वार्मिंग, समुद्र स्तर में वृद्धि, चरम मौसम की घटनाएँ और पारिस्थितिकी तंत्र में परिवर्तन शामिल हैं।
- **सतत विकास (Sustainable Development):** यह एक ऐसा विकास है जो वर्तमान की ज़रूरतों को पूरा करता है बिना आने वाली पीढ़ियों की ज़रूरतों को नुकसान पहुँचाए। इसमें आर्थिक विकास, सामाजिक समानता और पर्यावरण संरक्षण तीनों का संतुलन बनाए रखना शामिल है।
- **वैश्वीकरण (Globalization):** यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से दुनिया भर की अर्थव्यवस्थाएँ, संस्कृतियाँ और राजनीतिक प्रणाली एक दूसरे के साथ जुड़े हुए हैं।
- **हरित अर्थव्यवस्था (Green Economy):** एक आर्थिक प्रणाली है जिसका उद्देश्य सतत विकास प्राप्त करने और मानव कल्याण में सुधार करने के साथ-साथ पर्यावरणीय जोखिमों और पारिस्थितिक कमी को कम करना है।
- **बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ (Multinational Companies- MNC's):** बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ वैश्विक उपस्थिति वाले बड़े निगम हैं। बहुराष्ट्रीय कंपनियों की कुछ विशेषताओं में शामिल हैं: बड़ा आकार और बिक्री की उच्च मात्रा, नियंत्रण की एकता, महत्वपूर्ण आर्थिक शक्ति, निरंतर विकास, आक्रामक विपणन और विज्ञापन, उच्च गुणवत्ता वाले उत्पाद।
- **शरणार्थी (refugee):** वह व्यक्ति होता है जिसे उत्पीड़न, युद्ध या हिंसा के कारण अपने देश से भागने के लिए मजबूर किया गया हो।
- **जैव-विविधता का ह्रास (Loss of Bio-Diversity):** जैव विविधता हानि किसी दिए गए क्षेत्र में प्रजातियों और जैविक समुदायों की संख्या, विविधता और आनुवंशिक परिवर्तनशीलता में गिरावट है। इसका तात्पर्य किसी प्रजाति, पारिस्थितिकी तंत्र, स्थानों और संपूर्ण पृथ्वी के भीतर जैविक विविधता में कमी से भी हो सकता है।
- **अत्यन्त निर्धनता (Extreme Poverty):** यह गरीबी का सबसे गंभीर प्रकार है, जिसे संयुक्त राष्ट्र (यूएन) द्वारा परिभाषित किया गया है, 'एक ऐसी स्थिति जो भोजन, सुरक्षित पेयजल, स्वच्छता सुविधाओं, स्वास्थ्य, आश्रय, शिक्षा और सूचना सहित बुनियादी मानव आवश्यकताओं के गंभीर अभाव की विशेषता है।'

6.8 अभ्यास प्रश्न के उत्तर (Answer for Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. 2002 2. सतत विकास और गरीबी में कमी 3. सामाजिक असमानता

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. असत्य 2. सत्य

6.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- Andriantiatsaholiniaina, L. A., Kouikoglou, V. S., & Phillis, Y. A. (2004). ***Evaluating strategies for sustainable development: fuzzy logic reasoning and sensitivity analysis. Ecological Economics***, 48(2), 149–172. https://doi.org/10.1016/j.ecolecon.2003.08.009
- Bhalachandran, G. (2011). ***Kautilya's model of sustainable development***. Humanomics, 27(1), 41–52. https://doi.org/10.1108/08288661111110169

- Chen, H., & Yada, R. (2011). ***Nanotechnologies in agriculture: New tools for sustainable development***. Trends in Food Science & Technology, 22(11), 585–594. https://doi.org/10.1016/j.tifs.2011.09.004
- Dev, R. (n.d.-a). ***Corporate Social Responsibility (CSR) in Indian Banking Sector: An analytical study of ICICI bank limited***.
- Dev, R. (n.d.-b). ***Corporate Social Responsibility in India: Reaching to Unreached?***
- ***India follows a holistic approach towards its 2030 Sustainable Development Goals (SDGs).*** (n.d.). Retrieved February 13, 2020, from https://pib.gov.in/newsite/PrintRelease.aspx?relid=191192
- Kaygusuz, K. (2012). ***Energy for sustainable development: A case of developing countries. Renewable and Sustainable Energy Reviews***, 16(2), 1116–1126. https://doi.org/10.1016/j.rser.2011.11.013
- Oparaocha, S., & Dutta, S. (2011). ***Gender and energy for sustainable development. Current Opinion in Environmental Sustainability***, 3(4), 265–271. https://doi.org/10.1016/j.cosust.2011.07.003
- Smyth, J. C. (1995). ***Environment and Education: a view of a changing scene. Environmental Education Research***, 1(1), 3–120. https://doi.org/10.1080/1350462950010101

6.10 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

- ***Theories of Sustainable Development*** (2015). Edited by Judith C. Enders and Moritz Remig, Routledge, 2 Park Square, Milton Park, Abingdon, Oxon OX14 4RN
- Simon Dresner (2008). ***The Principles of Sustainability***, Earthscan Publication, Dunstan House, 14a St Cross St, London, EC1N 8XA, UK
- Jennifer A. Elliott (2013). ***An Introduction to Sustainable Development***, Routledge, 2 Park Square, Milton Park, Abingdon, Oxon OX14 4RN Island Publishing House, Inc., Philippines

6.11 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. सतत विकास के उद्गम के लिए हुई अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन एवं ढाँचे का विस्तार से वर्णन कीजिए।
2. अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन और ढांचे के द्वारा स्थानीय समुदायों में सतत विकास के लक्ष्यों को प्राप्त करने में कौन-कौन सी चुनौतियाँ उत्पन्न होती हैं? इन्हें कैसे संबोधित किया जा सकता है?
3. सतत विकास के संदर्भ में 'पेरिस समझौता' और 'सतत विकास लक्ष्यों' की प्रासंगिकता और प्रभाव की समीक्षा कीजिए।

इकाई 7 पर्वतीय क्षेत्रों में गरीबी उन्मूलन, आजीविका एवं सतत विकास
Poverty Alleviation, Livelihood and Sustainable Development in Hilly Areas

7.1 प्रस्तावना (Introduction)
7.2 उदेश्य (Objectives)
7.3 पर्वतीय क्षेत्रों में गरीबी उन्मूलन (Poverty Alleviation in Hilly Areas)
    7.3.1 गरीबी का अर्थ (Meaning of Poverty)
    7.3.2 गरीबी उन्मूलन के लिए योजनाएँ (Schemes for Poverty Alleviation)
7.4 पर्वतीय क्षेत्रों में आजीविका (Livelihood in Hilly Areas)
7.5 पर्वतीय क्षेत्रों में सतत विकास (Sustainable Development in Hilly Areas)
7.6 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)
7.7 सांराश (Summary)
7.8 शब्दावली (Glossary)
7.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)
7.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
7.11 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Useful Text)
7.12 निबंधात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

7.1 प्रस्तावना (Introduction)

प्रस्तुत इकाई में आप पर्वतीय क्षेत्रों में गरीबी उन्मूलन, आजीविका एवं सतत विकास के बारे में पढेंगे। जैसा की आप जानते हैं की पर्वतीय क्षेत्र मैदानी क्षेत्रों से भौगोलिक परिस्थितियों में अलग होते हैं, यहाँ गरीबी उन्मूलन, आजीविका एवं सतत विकास के लिए उठाए जाने वाले कदम भी अलग होते हैं। गरीबी क्या होती हैं यह तो आप जानते ही हैं एवं आप गरीबी उन्मूलन के लिए इस्तेमाल होने वाली कुछ योजनाओं को भी आप जानते होगे परन्तु इस इकाई में आप गरीबी उन्मूलन की उन योजनाओं को जानेंगे जोकि पर्वतीय क्षेत्रों में लगाई गई हैं। इकाई में आप आजीविका को पर्वतीय क्षेत्रों के प्रसंग में जानेंगें, आजीविका का अर्थ आप इससे पहले की इकाई में पढ़ ही चुके हैं अब आप पर्वतीय क्षेत्रों में पाए जाने वाली भिन्न आजीविकाओं को भी जानेंगे एवं यह भी पढेंगे की पर्वतीय क्षेत्रों में आजीविका के कितने कम अवसर पाए जाते हैं एवं पर्वतीय क्षेत्रों में क्या क्या चुनौतियां पायी जाती हैं। इकाई में आगे आप सतत विकास के बारे में भी पढेंगे, सतत विकास क्या हैं यह तो आप जानते ही हैं परन्तु पर्वतीय क्षेत्रों में सतत विकास किस प्रकार से होना चाहिए यह बहुत कम लोग जानते हैं, इकाई में आप पर्वतीय क्षेत्रों में होने वाले सतत विकास को भी विस्तार से पढेंगे।

7.2 उदेश्य (Objectives)

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप:

- ✓ पर्वतीय क्षेत्रों में गरीबी उन्मूलन की योजनाओं के बारे में जानेंगे।
- ✓ पर्वतीय क्षेत्रों में आजीविका के प्रकार को समझ सकेंगे।
- ✓ पर्वतीय क्षेत्रों में आजीविका के अंतर्गत आने वाली कठिनाइयों को समझ सकेंगे।
- ✓ सतत विकास क्या हैं यह जानेंगे।
- ✓ पर्वतीय क्षेत्रों में सतत विकास किस प्रकार किया जाता हैं यह भी समझेंगे।

7.3 पर्वतीय क्षेत्रों में गरीबी उन्मूलन (Poverty Alleviation in Hilly Areas)

7.3.1 गरीबी का अर्थ (Meaning of Poverty)

गरीबी लोगों की उस स्थिति को कहा जाता है जिसमें वह अपनी बुनियादी जरूरतों को पूरा करने में असमर्थ होते हैं। गरीबी का सामना करने वाले लोग न्यूनतम जीवन स्तर (Minimum Living Standard) से वंचित रहते हैं एवं वह केवल निर्वाह स्तर (Subsistence level) पर ही गुजारा कर पाते हैं। गरीबी में लोगों के पास बुनियादी आहार प्राप्त करने जैसे आटा, चावल, रोटी, दूध, दाल, सब्जी, साफ़ पीने के पानी आदि की कमी होती हैं। गरीबी में रहने वाले लोगो को यह भी नहीं पता होता की वह आज दों बारखाना खा भी पाएंगे या नहीं। गरीबी का सामना करने वाले लोगो के पास गतिविधियों में भाग लेने और अपने समाज में प्रचलित परिस्थितियों में रहने के लिए संसाधनों की भी कमी हैं। अत: वह उन सभी लोगो से जो गरीब नहीं हैं एक बहुत अलग जीवन जीते हैं। गरीबी एक ऐसा चक्र हैं जिसमें कोई एक बार फस जाता हैं तो उससे निकलना बहुत मुश्किल होता हैं। गरीबी के मुख्य कारण कम आय, निरक्षरता एवं रोजगार की कमी हैं, गरीबी में फसे हुए लोगो के लिए उससे बाहार आना बहुत मुश्किल होता हैं, केवल शिक्षा ही एक ऐसा माध्यम हैं जिसके ज़रिये लोग गरीबी से बाहार आ सकते हैं।

जैसा की हम सभी जानते हैं की पहाड़ी और मैदानीं क्षेत्रों के बीच भौगोलिक परिस्थितियों में बदलाव के कारण इन दोनों क्षेत्रों के लोगों की जीवन स्थितियों में बहुत अंतर हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में लोग ज्यादा कठिनाइयों से गुजरते हैं क्योंकि पर्वतीय क्षेत्रों में मैदानीं क्षेत्रों के मुकाबले संसाधनों की कमी पायी जाती हैं। खाने पीने के संसाधनों से लेकर स्कूल, कॉलेज, बिजली एवं नौकरियां भी पर्वतीय क्षेत्रों में कम होती हैं। यहाँ रहने वाले लोग कम संसाधनों में ही गुजारा करना सीख जाते

हैं, यहाँ लोगो का मुख्य व्यवसाय खेती-बाड़ी होता हैं एवं वह खुद ही अपने खाने के लिए सब्जियां, चावल या फल उगाते हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में लोगो की आय बहुत कम होती हैं, वह अच्छा जीवन स्तर या एक मानक जीवन शैली वहन करने में सक्षम नहीं होते हैं। बहुत से लोग यहाँ बहुत कम आय एवं कम संसाधनों में ही गुजारा करते हैं, पर्वतीय क्षेत्रों में जीवन काटना बहुत मुश्किल हैं, यहाँ स्कूल भी बहुत लकम होते हैं एवं उच्छ शिक्षा के लिए कॉलेज नहीं पाए जाते हैं जिसके कारण लोग मैदानीं क्षेत्रों की तरफ पलायन करते हैं।

सरकार नें पर्वतीय क्षेत्रों में आने वाली इन सभी मुश्किलों को देखते हुए ही कुछ गरीबी उन्मूलन की योजनाओं का निर्माण किया जोकि पर्वतीय क्षेत्रों में सहायाक रहेंगी। आइए अब जानते हैं की सरकार द्वारा पर्वतीय क्षेत्रों में गरीबी उन्मूलन के लिए क्या-क्या कदम उठाए गए हैं।

7.3.2 गरीबी उन्मूलन के लिए योजनाएँ (Schemes for Poverty Alleviation)

1. **जवाहर ग्राम समृद्धि योजना (Jawahar Gram Samridhi Yojana):** 1 अप्रैल 1999 को जवाहर रोजगार योजना को फिर से जवाहर ग्राम समृद्धि योजना के रूप में संशोधित किया गया। 25 सितंबर 2001 को इस योजना को संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना में संशोधित किया गया। इसका उद्देश्य माँग-संचालित सामुदायिक ग्राम बुनियादी ढांचा तैयार करना है जो ग्रामीण हिस्सों में गरीब लोगों को ग्रामीण स्तर पर निरंतर रोजगार के अवसर और टिकाऊ संपत्ति बढ़ाने में सक्षम बनाएगा। इसमें ग्रामीण भागों में बेरोजगारों के लिए अतिरिक्त रोजगार के विकल्प का निर्माण भी शामिल है। गरीबी रेखा से नीचे परिवारों को मजदूरी रोजगार प्रदान किया जा सकता है।
2. **रोजगार आश्वासन योजना (Employment Assurance Scheme):** इसे 2 अक्टूबर 1993 को लागू किया गया था। इसमें सूखाग्रस्त हिस्से, रेगिस्तानी इलाके, आदिवासी इलाके और पहाड़ी क्षेत्र शामिल हैं। वर्ष 1994-95 के दौरान यह योजना देश के 409 ब्लॉकों में लागू की गई थी एवं अप्रैल 1997 तक इस योजना को सभी ब्लॉकों तक विस्तारित कर दिया गया था। इस योजना का प्राथमिक उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों के सभी सक्षम वयस्क गरीब व्यक्तियों के लिए, जिन्हें उस समय काम की आवश्यकता होती है, जब कम कृषि मौसम के दौरान मैनुअल काम में भारी कमी होती है, तो पूरक मजदूरी रोजगार विकल्प उत्पन्न करना था। इसका माध्यमिक उद्देश्य यह हैं की, यह योजना ग्रामीण भारत के लिए रोजगार और विकास के लिए वित्तीय बुनियादी ढांचे और सामुदायिक संपत्तियों का निर्माण करना है।
3. **सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना (Complete Rural Employment Scheme):** इसे वर्ष 2001 में ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा जवाहर ग्राम समृद्धि योजना और रोजगार आश्वासन योजना को मिलाकर लागू किया गया था। योजना का मुख्य उद्देश्य पूरक वेतन रोजगार विकल्प प्रदान करना, सभी भागों में खाद्य सुरक्षा और बेहतर पोषण चरण प्रदान करना, टिकाऊ सामुदायिक सामाजिक और मौद्रिक संपत्ति उत्पन्न करना और ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबों के लिए बुनियादी ढांचे का विस्तार करना था।
4. **प्रधानमंत्री ग्रामीण आवास योजना (Prime Minister Rural Housing Scheme):** इस योजना को पहले इंदिरा आवास योजना के रूप में जाना जाता था, प्रधान मंत्री ग्रामीण आवास योजना वर्ष 2015 में शुरू की गई थी, जो भारत में गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले

ग्रामीण गरीबों के लिए मुफ्त घरों का निर्माण प्रदान करने के लिए बनाई गई है। इसका उद्देश्य क्रेडिट-लिंक्ड सब्सिडी प्रक्रिया के माध्यम से किफायती आवास विकल्पों की उन्नति, संसाधन के रूप में भूमि-आवास का उपयोग करके निजी क्षेत्र की भागीदारी के साथ झुग्गीवासियों की बहाली और सरकारी और निजी सब्सिडी के सहयोग से उचित आवास है।

5. **ग्रामीण रोजगार सृजन कार्यक्रम (Rural Employment Generation Program):** ग्रामीण रोजगार सृजन कार्यक्रम की शुरुआत भारत सरकार द्वारा छोटे शहरों और ग्रामीण क्षेत्रों में स्वरोजगार के अवसर पैदा करने के लिए की गई थी। खादी और ग्रामोद्योग आयोग ने इस कार्यक्रम को लागू किया। इस कार्यक्रम से किसी व्यक्ति को बैंक ऋण के रूप में लघु उद्योग स्थापित करने के लिए वित्तीय सहायता मिल सकती है।
6. **जवाहर ग्राम समृद्धि योजना, रोजगार आश्वासन योजना, सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना, प्रधानमंत्री ग्रामीण आवास योजना, ग्रामीण रोजगार सृजन कार्यक्रम, प्रधानमंत्री रोजगार योजना (Prime Minister Employment Scheme):** इस योजना के तहत ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के शिक्षित बेरोजगार लोग जो कम आय वाले परिवारों से हैं, उन्हें सरकार द्वारा वित्तीय सहायता दी गई। दी गई वित्तीय मदद से यह लोग रोजगार के लिए कोई भी उद्यम स्थापित कर सकते हैं। आठवीं पंचवर्षीय योजना (1992-97) के दौरान प्रधानमंत्री रोजगार योजना द्वारा 7 लाख सूक्ष्म उद्यम स्थापित कर रोजगार उत्पन्न करने का प्रयास किया गया। इस योजना की मदद से वर्ष 2003-04 तक 30 लाख लोगों को रोजगार मिला।
7. **स्वर्णजयंती ग्राम स्वरोजगार योजना (Swarnjayanti Gram Self-Employment Scheme):** पहले परिवारों और व्यक्तियों को स्व-रोज़गार कार्यक्रमों के माध्यम से वित्तीय सहायता मिलती थी। हालाँकि, 1990 के दशक से सरकार ने स्वर्णजयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के माध्यम से सहायता प्रदान करना शुरू कर दिया। स्वर्णजयंती ग्राम स्वरोजगार योजना का मूल उद्देश्य सूक्ष्म उद्यमों को बढ़ावा देना और गरीब परिवारों, को गरीबी रेखा से ऊपर लाना है। यह योजना स्वरोजगारियों को स्वयं सहायता समूहों (Self Help Group) में संगठित करके गरीबी रेखा से ऊपर लाने का प्रयास करती है। स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से, उन्हें बनाने वाले लोगों को पैसा बचाने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है और उसे आपस में ऋण के रूप में उधार दिया जाता है। बाद में सरकार बैंकों की मदद से इन समूहों को आंशिक वित्तीय सहायता प्रदान करती है। सहायता प्राप्त करने के बाद यह समूह निर्णय लेते हैं कि स्व-रोज़गार गतिविधियों के लिए किसे ऋण मिलेगा।
8. **महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act):** यह अधिनियम अगस्त 2005 में संसद में पारित किया गया था इस योजना को मनरेगा भी कहा जाता हैं। मनरेगा का मूल उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों को एक वित्तीय वर्ष में 100 दिनों के वेतन रोजगार की गारंटी देकर उनकी आजीविका सुरक्षा को बढ़ाना है। मजदूरी रोजगार उस ग्रामीण परिवार को दिया जाता है जिसके वयस्क सदस्य अकुशल शारीरिक कार्य करने के लिए स्वेच्छा से काम करते हैं। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति (गरीब) जो न्यूनतम मजदूरी पर

काम करने का इच्छुक है, उन क्षेत्रों में काम के लिए रिपोर्ट कर सकता है जहाँ मनरेगा लागू है। वर्ष 2019-20 में 57.4 मिलियन लोगों ने मनरेगा के तहत काम माँगा था।

7.4 पर्वतीय क्षेत्रों में आजीविका (Livelihood in Hilly Areas)

पर्वतीय क्षेत्रों में आजीविका अक्सर कृषि और प्राकृतिक संसाधनों पर आधारित होती है परन्तु इसके साथ-साथ पर्वतीय क्षेत्रों में आजीविका की अन्य गतिविधियाँ भी पायी जाती हैं जैसे पशुपालन, लकड़ियाँ इकट्ठा करना, शिकार, आदि। पहाड़ों और तलहटी में अधिकांश लोग अपनी आजीविका के लिए कृषि और प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग पर निर्भर हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में लगभग 90 प्रतिशत किसान सीमांत और छोटी जोत (Marginal and Small Holdings) पर निर्भर हैं, जहाँ वह आम तौर पर प्रति परिवार एक हेक्टेयर से कम पर खेती करते हैं। यहाँ लोग आम तौर पर क्षेत्रों की ऊंचाई के आधार पर चावल, मक्का और चाय उगाने के लिए सीढ़ीदार खेती करते हैं और इन क्षेत्रों से फल, ऊन और हस्तशिल्प पूरे देश में भेजे जाते हैं। कठिन भौगोलिक परिस्थितियों के कारण पर्वतीय क्षेत्रों में आजीविका कमाना बहुत कठिन होता है, चाहे कृषि हो, पशुपालन हो या बागवानी पर्वतीय क्षेत्रों की अपनी चुनौतियाँ होती हैं। जंगली जानवरों से भी ख़तरा रहता है एवं पर्वतीय क्षेत्रों में मैदानी क्षेत्रों के मुकाबले जलवायु में अंतर होता है जिसके कारण ठंडा मौसम होता है जोकि खेती करने या काम करने को और कठिन कर देता हैं।

पर्वतीय क्षेत्रों में कम आजीविका के अवसर होने के कारण ही यहाँ के लोग मैदानी क्षेत्रों की तरफ पलायन करते हैं, मैदानी क्षेत्रों में आजीविका आसान होती हैं, वहाँ खेती-बाड़ी के अलावा आजीविका के कई अवसर होते हैं एवं साथ ही सुहाना मौसम होता हैं जिससे काम करने में भी कोई बाधा नहीं आती हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में एक तो आजीविका कम हैं और साथ ही वातावरण ठंडा हैं और रास्ते कठिन हैं जिसकी वजह से वहाँ के लोगो को बहुत कठिनाइयों का सामना करना पढता हैं। पर्वतीय क्षेत्रों से मैदानी क्षेत्रों की तरफ होने वाले पलायन के कारण पर्वतीय क्षेत्रों की जनसँख्या भी कम होती जा रही हैं जिससे पहाड़ों में अब केवल वृद्ध लोग ही रहे गये हैं।

आइए अब एक-एक कर पर्वतीय क्षेत्रों में आजीविका के प्रकार को जानते हैं:

1. **कृषि (Agriculture):** पर्वतीय क्षेत्रों में मामूली खेती नहीं की जाती हैं बल्कि यहाँ छत पर खेती (Terrace Farming) की जाती हैं। छत पर खेती फसलों को उगाने के लिए ढलान या पहाड़ी परिदृश्य से समतल क्षेत्रों को काटने की प्रथा है या दूसरे शब्दों में ढलानों या पहाड़ों के किनारों पर ढलानों में बने बरामदों पर रोपण करके फसलें विकसित करने की विधि है। इसे पर्वतीय जिलों में ड्रिल किया जाता है। छत पर खेती मुख्य रूप से असमान श्रेणियों में की जाती है। भारत में यह मुख्य रूप से हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड और कुछ पूर्वोत्तर राज्यों जैसे असमान क्षेत्रों में प्रचलित है। इसे आंध्र प्रदेश की तरह दक्षिण क्षेत्र में भी किया जाता है।
2. **पशुपालन (Animal Husbandry):** पशुपालन दूध, अंडे, मांस और फाइबर जैसे उत्पादों के लिए जानवरों को पालने और उनकी देखभाल करने की प्रथा है। इसमें पशुओं का प्रबंधन, पोषण और चयनात्मक प्रजनन भी शामिल है। पशुपालन एक महत्वपूर्ण आर्थिक गतिविधि है जो मनुष्यों और जानवरों के लिए भोजन प्रदान करती है। यह जलवायु, कृषि योग्य भूमि के विनाश और जैव विविधता के नुकसान में भी योगदान देता है।
3. **गैर-लकड़ी वन उपज (Non-Timber Forest Produce):** पर्वतीय क्षेत्रों में लोग स्थानीय समुदाय क्षेत्र से गैर-लकड़ी वन उपज एकत्र करते हैं, यह भी एक आजीविका का साधन हैं। गैर-लकड़ी वन उपज दुनिया भर के वन समुदायों की आजीविका और परंपराओं के लिए महत्वपूर्ण हैं। इसके अंतर्गत मशरूम, हकलबेरी, फ़र्न, प्रत्यारोपण, बीज शंकु, पाइन नट्स, ट्री नट्स, मॉस, मेपल सिरप, कॉर्क, दालचीनी, रबर, जंगली सूअर, पेड़ के तेल और रेजिन। यह लाखों लोगों को रोजगार

के अवसर प्रदान करते हैं। हालाँकि, इसका आर्थिक योगदान काफी हद तक अज्ञात है क्योंकि इसका 60% से अधिक उत्पादन स्थानीय स्तर पर खपत होता है एवं रिकॉर्ड नहीं किया जाता है।

4. **शिकार (Hunting):** शिकार कई लोगों के लिए आय का एक स्रोत हो सकता है, खासकर ग्रामीण एवं पर्वतीय क्षेत्रों में। उदाहरण के लिए, मनोरंजक शिकार प्रकृति संरक्षण और आजीविका के लिए धन उत्पन्न कर सकता है। पर्वतीय क्षेत्रों में कुछ खास फसलों की ही खेती की जाती है और साथ ही कुछ महीने ऐसे भी होते हैं जिनमें खेती करना बहुत मुश्किल होता है, जैसे सर्दियों के महीने जब पर्वतीय क्षेत्रों में बहुत अधिक बर्फबारी होती है, ऐसे में लोग शिकार करके ही अपना पेट भरते हैं।

7.5 पर्वतीय क्षेत्रों में सतत विकास (Sustainable Development in Hilly Areas)

सतत विकास का अर्थ

सतत विकास एक विकास का प्रकार हैं जो वर्तमान की जरूरतों को एवं भविष्य की पीढ़ियों की अपनी जरूरतों को पूरा करने की क्षमता के साथ संतुलित करता है। यह एक व्यापक अवधारणा है जिसमें समाज की पर्यावरणीय, सामाजिक और आर्थिक सीमाओं पर विचार करना शामिल है। संयुक्त राष्ट्र ने सतत विकास के कुछ लक्ष्यों का भी विवरण किया हैं जिसे हर देश पूरा करने में लगा हैं। इसके अंतर्गत कई लक्ष्य होते हैं जिन्हें एक समय अवधि में पूरा करना होता हैं, हाल ही में संयुक्त राष्ट्र ने पर्वतीय सतत विकास को भी इसमें जोड़ दिया हैं जिसके अंतर्गत पर्वतीय क्षेत्रों में विकास को एक नयी दिशा मिल गई हैं। सतत विकास मुख्य रूप से संसाधनों का इस प्रकार इस्तेमाल करनें पर ध्यान देता हैं जिससे भविष्य की पीढ़ियों को भी सभी संसाधनों का लाभ मिल सके और साथ ही वर्तमान की पीढ़ि की जरूरतें भी पूरी हो सके।

सतत विकास मानव विकास लक्ष्यों को पूरा करने के लिए संगठित सिद्धांत है, यह प्राकृतिक प्रणालियों द्वारा प्राकृतिक संसाधनों और पारिस्थिति की तंत्र सेवाएं प्रदान करने की क्षमता को बनाए रखने पर जोर देता है। सतत विकास की अवधारणा आर्थिक विकास, पर्यावरण की गुणवत्ता एवं सामाजिक समानता के बीच संबंधों की खोज करती है। सतत विकास या संधारणीय विकास का अभिप्राय ऐसे विकास से है जो पर्यावरण के निम्नीकरण के बिना संतोषजनक विकास करता हो, दूसरे शब्दों में सतत विकास वह प्रक्रिया है जो हमारी भावी पीढ़ियों की अपनीजरूरतें पूरी करने की योग्यता को प्रभावित किए बिना वर्तमान समय की आवश्यकताएं पूरी करे। सतत विकास सामाजिक एवं आर्थिक विकास की वह प्रक्रिया है जिसमें पृथ्वी की सहनशक्ति के अनुसार विकास की बात की जाती हैं।

पर्वतीय क्षेत्रों में सतत विकास

पर्वतीय क्षेत्रों में सतत विकास पहाड़ों को इस तरह से विकसित करने की प्रथा है जो भविष्य की पीढ़ियों की अपनी जरूरतों को पूरा करने की क्षमता से समझौता किए बिना वर्तमान की जरूरतों को पूरा करता है। पर्वतीय क्षेत्र पानी, ऊर्जा, जैविक विविधता और अन्य संसाधनों के महत्वपूर्ण स्रोत हैं परन्तु पहाड़ नाज़ुक हैं एवं मानव और प्राकृतिक प्रभावों से आसानी से क्षतिग्रस्त हो सकते हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में विकास बहुत सावधानी से करना होगा क्योंकि पहाड़ कमजोर एवं एक समान नहीं होते हैं, पर्वतीय क्षेत्रों में पत्थर गिरने एवं पहाड़ गिरने का बहुत खतरा होता हैं, इसलिए यहाँ इमारते बहुत देख-भाल के बनानी पड़ती हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में अगर सड़क का निर्मार्ण भी करना हैं तब भी पहाड़ को काटना पड़ता हैं, यहाँ जमीन एक समान नहीं होती हैं जिस वजह से मकान बनानें एवं कोई भी निर्माण करने में बहुत दिक्कत आती हैं क्योंकि पहाड़ ज्यादा निर्माण नहीं झेल सकते हैं।

पर्वतीय क्षेत्रों में सतत विकास के लिए पर्यावरण, पारिस्थितिक और सामाजिक-आर्थिक गतिशीलता की समझ की आवश्यकता होती है। पहाड़ मानव जाति के आधे से अधिक हिस्से को पानी की आपूर्ति करते हैं।

हालाँकि, पर्वतीय पारिस्थितिकी तंत्र तेजी से बदल रहे हैं। यह त्वरित मिट्टी कटाव, भूस्खलन और निवास स्थान और आनुवंशिक विविधता के तेजी से नुकसान के प्रति संवेदनशील हैं। मानवीय पक्ष पर,

पर्वतीय निवासियों में व्यापक गरीबी है और स्वदेशी ज्ञान का ह्रास हो रहा है। परिणामस्वरूप, अधिकांश वैश्विक पर्वतीय क्षेत्र पर्यावरणीय गिरावट का अनुभव कर रहे हैं। इसलिए पर्वतीय संसाधनों का उचित प्रबंधन और लोगों का सामाजिक-आर्थिक विकास तत्काल कार्रवाई का हकदार है। उचित स्तर पर सरकारों को, प्रासंगिक अंतरराष्ट्रीय और क्षेत्रीय संगठनों के सहयोग से, पर्यावरण, सामाजिक-आर्थिक, तकनीकी, विधायी, वित्तीय और प्रशासनिक पहलुओं के लिए एक व्यापक दृष्टिकोण को प्रोत्साहित करने और सहायता प्रदान करने के लिए राष्ट्रीय केंद्रों को विकसित और मजबूत करना चाहिए।

शहरी नागरिकों के लिए, पहाड़ मनोरंजन के विविध अवसर प्रदान करते हैं, वह लंबे समय से आध्यात्मिक मनोरंजन के लिए भी महत्वपूर्ण रहे हैं, जिसमें सभी प्रमुख धर्मों के पवित्र स्थल भी शामिल हैं। फिर भी पर्वतीय क्षेत्रों और उनके कई लोगों को अपनी अर्थव्यवस्थाओं और सामाजिक संरचनाओं के वैश्वीकरण और जलवायु परिवर्तन के खतरों से जुड़ी बढ़ती चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। पर्वतीय समुदायों की जीवन स्थितियों में सुधार लाने और जलवायु परिवर्तन के खिलाफ लचीलेपन को मजबूत करने के उद्देश्य से सतत पर्वतीय विकास को बढ़ावा देने वाली पहलों और परियोजनाओं का समर्थन करना बहुत आवश्यक हैं। मानवीय आवश्यकताओं के लिए आवश्यक कमजोर पारिस्थितिकी तंत्र के रूप में पर्वतीय क्षेत्रों के लिए समर्थन बढ़ाना और वैश्विक प्रक्रियाओं में इस समर्थन को शामिल करना आवश्यक हैं।

अब आप पर्वतीय क्षेत्रों में सतत विकास को बढ़ावा देने के तीन मुख्य तरीको पढ़ेंगे:

1. **स्थायी ऊर्जा बढ़ाएँ (Increase Sustainable Energy):** ऊर्जा मिश्रण में टिकाऊ या स्थायी ऊर्जा की हिस्सेदारी बढ़नी चाहिए, खासकर नाजुक पहाड़ी पारिस्थितिकी तंत्र वाले देशों में। पर्वतीय क्षेत्र जल विद्युत, सौर ऊर्जा और पवन ऊर्जा के माध्यम से टिकाऊ ऊर्जा प्रदान कर सकते हैं।
2. **वनों की रक्षा करें (Protect Forest):** पर्वतीय क्षेत्रों में पाए जाने वाले पेड़, औषधी, फल एवं जड़ी-बूटियाँ बहुत दुर्लभ होती हैं एवं उनकी बहुत खूबिया और लाभ होती हैं। सतत विकास के लिए यह बहुत आवश्यक हैं की हम वनों की रक्षा करें एवं पर्वतीय क्षेत्रों की सुंदरता बनाए रखे। सतत विकास के लिए वन लकड़ी, ईंधन, औषधीय उत्सर्जन और प्राकृतिक खतरों से बचाव प्रदान करना बहुत जरुरी हैं।
3. **पर्यावरण संबंधी मुद्दों के प्रति जागरूक रहें (Be Aware of Environmental Issues):** पर्वतीय क्षेत्रों में कुछ सामान्य पर्यावरणीय मुद्दों में वनों की कटाई, भूस्खलन, भूमि क्षरण, मरुस्थलीकरण और ग्लेशियर झील में बाढ़ आना शामिल हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में सतत विकास के लिए यह बहुत आवश्यक हैं की हमें पर्यावरणीय मुद्दों के बारे में जानकारी हो एवं हम पर्यावरण को नुक्सान पहुचाएं बिना ही विकास की ओर चले।

7.6 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. पहाड़ी और मैदानीं क्षेत्रों के बीच में.................... परिस्थितियों बदलाव पाया जाता हैं। (कार्मिक **या** भौगोलिक)
2. पर्वतीय क्षेत्रों में विकास बहुत सावधानी से करना होगा क्योंकि पहाड़...............होते हैं। (कमजोर **या** मजबूत)
3. प्रधानमंत्री ग्रामीण आवास योजना को पहले .... के रूप में जाना जाता था। (इंदिरा आवास योजना **या** ग्रामीण रोजगार सृजन कार्यक्रम)
4. पर्वतीय क्षेत्रों में मामूली खेती नहीं की जाती हैं बल्कि यहाँ .... की जाती हैं। (पेड़ों पर खेती **या** छत पर खेती)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. गरीबी का सामना करने वाले लोग न्यूनतम जीवन स्तर से वंचित रहते हैं।
2. सतत विकास एक विकास का प्रकार हैं जो वर्तमान की जरूरतों को नहीं देखता हैं।
3. पहाड़ मजबूत हैं एवं मानव और प्राकृतिक प्रभावों से आसानी से क्षतिग्रस्त नहीं हो सकते हैं।

7.7 सांराश (Summary)

प्रस्तुत इकाई में आपने पर्वतीय क्षेत्रों में गरीबी उन्मूलन, आजीविका एवं सतत विकास को विस्तार में पढ़ा, गरीबी लोगों की उस स्थिति को कहा जाता है जिसमें वह अपनी बुनियादी जरूरतों को पूरा करने में असमर्थ होते हैं। गरीबी को विस्तार से जाननें के बाद आपने पर्वतीय क्षेत्रों में सरकार द्वारा चालायी गयी गरीबी उन्मूलन योजनाओं को भी जाना, पर्वतीय क्षेत्रों एवं मैदानी क्षेत्रों में परिस्थितियों में बदलाव के कारण गरीबी उन्मूलन योजनाए पर्वतीय क्षेत्रों एवं मैदानी क्षेत्रों में अलग-अलग होती हैं। गरीबी उन्मूलन योजनाओं के अंतर्गत आपने निम्न योजना पढ़ी जिसमें जवाहर ग्राम समृद्धि योजना, रोजगार आश्वासन योजना, सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना, प्रधानमंत्री ग्रामीण आवास योजना, ग्रामीण रोजगार सृजन कार्यक्रम, प्रधानमंत्री रोजगार योजना, स्वर्णजयंती ग्राम स्वरोजगार योजना एवं महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम योजना शामिल हैं। इन सभी योजनाओं को विस्तार से पढ़ने के बाद इकाई में आगे आपने पर्वतीय क्षेत्रों में आजीविका के बारे में पढ़ा और जाना की पर्वतीय क्षेत्रों में आजीविका के बहुत कम अवसर होते हैं जिसके कारणवश पहाड़ से लोग मैदान की तरफ पलायन करते हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में कठिन भौगोलिक परिस्थितियों के कारण आजीविका कमाना बहुत कठिन होता है, चाहे कृषि हो, पशुपालन हो या बागवानी पर्वतीय क्षेत्रों में आजीविका की अपनी चुनौतियाँ होती हैं जिसे आप इकाई में विस्तार से पढ़ ही चुके हैं।

आजीविका एवं गरीबी उन्मूलन पढने के बाद आपने सतत विकास के बारे में भी पढ़ा और जाना की पर्वतीय क्षेत्रों में सतत विकास पहाड़ों को इस तरह से विकसित करने की प्रथा है जो भविष्य की पीढ़ियों की अपनी जरूरतों को पूरा करने की क्षमता से समझौता किए बिना वर्तमान की जरूरतों को पूरा करता है। पर्वतीय क्षेत्रों में विकास करते समय यह बहुत आवश्यक हैं की हम पर्यावरण का भी ध्यान रखे, वनों की रक्षा करे एवं संसाधनों का उपयोग सही प्रकार से करे। पर्वतीय क्षेत्रों में सतत विकास के लिए पर्यावरण पर ध्यान देना बहुत आवश्यक हैं क्योंकि अगर विकास करते हुए हम पर्यावरण को नुक्सान पहुचाते हैं तो वह विकास सतत विकास नहीं कहलाया जाएगा।

7.8 शब्दावली (Glossary)

- **न्यूनतम जीवन स्तर (Minimum Living Standard):** न्यूनतम जीवन स्तर का अर्थ है किसी व्यक्ति या समुदाय के जीवन की बुनियादी जरूरतों को पूरा करना। इन ज़रूरतों में भोजन, पानी, आश्रय, बुनियादी शिक्षा और बुनियादी चिकित्सा देखभाल शामिल हैं।
- **निर्वाह स्तर (Subsistence level):** निर्वाह स्तर का अर्थ है भोजन, वस्त्र, आवास जैसी बुनियादी जरूरतों को पूरा करने के लिए पारंपरिक तरीकों का उपयोग करना। निर्वाह स्तर पर रहने वाले लोग आधुनिक तकनीक या बाहरी संसाधनों पर कम निर्भर होते हैं।
- **गरीबी (Poverty):** गरीबी लोगों की उस स्थिति को कहा जाता है जिसमें वह अपनी बुनियादी जरूरतों को पूरा करने में असमर्थ होते हैं।
- **संसाधन (Resources):** संसाधन हमारे पर्यावरण में उपलब्ध सभी सामग्रियों को संदर्भित करते हैं जो तकनीकी रूप से सुलभ, आर्थिक रूप से व्यवहार्य और सांस्कृतिक रूप से टिकाऊ हैं और हमारी जरूरतों और इच्छाओं को पूरा करने में हमारी मदद करते हैं।

- **स्वयं सहायता समूहों (Self Help Group):** स्वयं सहायता समूह का मतलब हैं, समान सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि वाले लोगों का एक समूह जो मिलकर आर्थिक गतिविधियां करता है। इन समूहों में आम तौर पर 10-12 महिलाएं होती हैं।
- **रोजगार (Employment):** रोजगार से तात्पर्य किसी संगठन या नियोक्ता द्वारा विशिष्ट कार्यों, सेवाओं या जिम्मेदारियों को पूरा करने के लिए नियोजित व्यक्ति की स्थिति या कार्य से हैं।
- **निरक्षरता (Illiteracy):** निरक्षरता अशिक्षित होने की अवस्था या भाव को कहा जाता हैं, किसी भी या पर्याप्त शिक्षा का अभाव एक पत्र जो अशिक्षा से भरा हो उसे निरक्षरता कहा जाता हैं।
- **सतत विकास (Sustainable Development):** सतत विकास का अर्थ है वर्तमान पीढ़ी की जरूरतों को पूरा करते हुए यह सुनिश्चित करना कि भावी पीढ़ियां भी अपनी जरूरतों को पूरा कर सकें। सतत विकास के लिए नीतियों का आर्थिक, पर्यावरणीय और सामाजिक तीनों क्षेत्रों में एक साथ काम करना जरूरी हैं।
- **भौगोलिक परिस्थितियों (Geographical Conditions):** भौगोलिक परिस्थितियों का अर्थ है किसी देश का प्राकृतिक भौतिक वातावरण। इसमें मिट्टी, जल आपूर्ति, खनिज संसाधन, वनस्पति, जीव और स्थलाकृति जैसी चीजें शामिल हैं।
- **गरीबी रेखा (Poverty Line):** गरीबी रेखा का अर्थ है किसी व्यक्ति या परिवार की बुनियादी जरूरतों को पूरा करने के लिए आवश्यक न्यूनतम आय या उपभोग स्तर। यह रेखा जनसंख्या को गरीब और गैर-गरीब श्रेणियों में विभाजित करती है।
- **सब्सिडी (Subsidy):** सब्सिडी का मतलब सरकार द्वारा किसी व्यक्ति, कंपनी या संस्था को दिया जाने वाला वित्तीय लाभ या सहायता है।
- **पशुपालन (Animal Husbandry):** पशुपालन दूध, अंडे, मांस और फाइबर जैसे उत्पादों के लिए जानवरों को पालने और उनकी देखभाल करने की प्रथा को कहा जाता है।
- **बेरोजगार (Unemployed):** बेरोज़गार का अर्थ है बिना किसी काम के रहना। यह उन लोगों से संबंधित शब्द है जिनके पास नौकरी नहीं है और जो रोजगार की तलाश में हैं। बेरोजगारी अस्थायी या स्थायी हो सकती है।
- **बैंक ऋण (Bank Loan):** बैंक ऋण का अर्थ है बैंक से उधार लिया गया धन। यह एक दीर्घकालिक देनदारी है, जिसे ब्याज सहित एक निश्चित अवधि में चुकाना होता है। बैंक ऋण के लिए आवेदन करने से पहले, उधारकर्ता की वित्तीय स्थिति, क्रेडिट इतिहास, आय और मौजूदा ऋण जैसे कारकों का आकलन किया जाता है।
- **जैविक विविधता (Biological Diversity):** जैविक विविधता का अर्थ है पृथ्वी पर मौजूद जीवन की विविधता और उसमें होने वाले परिवर्तन। यह शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है "बायोलॉजिकल" जिसका अर्थ है जीव विज्ञान या जीवित जीवों से संबंधित और "विविधता" जिसका अर्थ है कई चीजें या विविधता की एक श्रृंखला।
- **हस्तशिल्प (Handicraft):** हस्तशिल्प का अर्थ है हाथ से या साधारण औजारों की सहायता से बनाई गई कलात्मक चीजें। हस्तशिल्प में, सामग्री को हाथ के औजारों का उपयोग करके संसाधित किया जाता है। हस्तशिल्प वस्तुएं उपयोगी होने के साथ-साथ सजावटी भी होती हैं।

7.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. भौगोलिक 2. कमजोर 3. इंदिरा आवास योजना 4. छत पर खेती

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. सत्य 2. असत्य 3. असत्य

7.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- Andriantiatsaholiniaina, L. A., Kouikoglou, V. S., & Phillis, Y. A. (.(2004 ***Evaluating strategies for sustainable development: fuzzy logic reasoning and sensitivity analysis. Ecological Economics***, (2)48, 149– .172 https://doi.org//10.1016j.ecolecon.2003.08.009
- Bhalachandran, G. (.(2011***Kautilya's model of sustainable development***. Humanomics, (1)27, 41– .52https://doi.org/08288661111110169/10.1108
- Chen, H., & Yada, R. (.(2011***Nanotechnologies in agriculture: New tools for sustainable development***. Trends in Food Science & Technology, (11)22, 585– .594https://doi.org//10.1016j.tifs.2011.09.004
- Dev, R. (n.d.-a). ***Corporate Social Responsibility (CSR) in Indian Banking Sector: An analytical study of ICICI bank limited***.
- Dev, R. (n.d.-b). ***Corporate Social Responsibility in India: Reaching to Unreached?***
- ***India follows a holistic approach towards its 2030 Sustainable Development Goals (SDGs).*** (n.d.). Retrieved February 13, 2020, from https://pib.gov.in/newsite/PrintRelease.aspx?relid=191192
- Kaygusuz, K. (.(2012***Energy for sustainable development: A case of developing countries. Renewable and Sustainable Energy Reviews***, (2)16, 1116– .1126https://doi.org//10.1016j.rser.2011.11.013
- Oparaocha, S., & Dutta, S. (.(2011***Gender and energy for sustainable development. Current Opinion in Environmental Sustainability***, (4)3, 265– .271 https://doi.org//10.1016j.cosust.2011.07.003
- Smyth, J. C. (.(1995***Environment and Education: a view of a changing scene. Environmental Education Research***, (1)1, 3– .120 https://doi.org/1350462950010101/10.1080

7.11 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Useful Text)

- *Theories of Sustainable Development* (.(2015Edited by Judith C. Enders and Moritz Remig, Routledge, 2 Park Square, Milton Park, Abingdon, Oxon OX 14 4RN
- Simon Dresner (.(2008*The Principles of Sustainability*, Earthscan Publication, Dunstan House, 14a St Cross St, London, EC1N 8XA, UK
- Jennifer A. Elliott (.(2013*An Introduction to Sustainable Development*, Routledge, 2 Park Square, Milton Park, Abingdon, Oxon OX4 14RN Island Publishing House, Inc., Philippines

7.12 निबंधात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. पर्वतीय क्षेत्रों में गरीबी उन्मूलन की योजनाओं की विस्तार से व्याख्या कीजिए।
2. पर्वतीय क्षेत्रों में आजीविका को समझाइए एवं पर्वतीय क्षेत्रों में आजीविका के अंतर्गत आने वाली कठिनाइयों की भी व्याख्या कीजिए।
3. सतत विकास से आप क्या समझते हैं? पर्वतीय क्षेत्रों में सतत विकास किस प्रकार किया जा सकता हैं?

इकाई 8 पर्यावरण: नीति एवं नियमन
(Environment: Policy and Regulation)

8.1 प्रस्तावना (Introduction)

8.2 उद्देश्य (Objectives)

8.3 पर्यावरण नीति एवं नियमन की प्रस्तावना (Introduction of Environment Policy and Regulation)

8.4 पर्यावरण नियमन: अर्थ एवं उद्देश्य (Environmental Regulation: Meaning and Objectives)

8.5 पर्यावरण विनियमन की आवश्यकता तथा कारण (Causes and Need for Environmental Regulation)

8.6 भारत में पर्यावरणीय नियमन तंत्र (Environmental Regulation System in India)

8.7 पर्यावरण नियामक संस्थाएं (Environmental Regulatory Bodies)

8.8 अभ्यास प्रश्न (Practics Questions)

8.9 सारांश (Summary)

8.10 शब्दावली (Glossary)

8.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)

8.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

8.13 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

8.14 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

8.1 प्रस्तावना (Introduction)

आज के युग में, पर्यावरणीय संकट एक वैश्विक चिंता का विषय बन चुका है। औद्योगिकीकरण और शहरीकरण के बढ़ते प्रभावों के कारण प्राकृतिक संसाधनों की अत्यधिक खपत और पर्यावरणीय असंतुलन उत्पन्न हो गया है। इन समस्याओं के समाधान के लिए, प्रभावी पर्यावरण नीतियों और नियमों का निर्माण और कार्यान्वयन अत्यंत आवश्यक है।

प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण और दीर्घकालिक मानव स्वास्थ्य के लिए पर्यावरण नीति और नियमन अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। इन नीतियों का उद्देश्य प्रदूषण को कम करना, जैव विविधता को संरक्षित करना और सतत विकास को सुनिश्चित करना है। पर्यावरणीय नियमों के बिना, औद्योगिकीकरण और शहरीकरण के कारण प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन और प्रदूषण की समस्याएँ बढ़ सकती हैं, जिससे मानव जीवन और पारिस्थितिक तंत्र पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। पर्यावरण नीति, जैसे कि वायु और जल प्रदूषण नियंत्रण के नियम, उद्योगों को मानक स्थापित करते हैं, जिससे वायु और जल की गुणवत्ता में सुधार होता है। इसी प्रकार, वन संरक्षण और जैव विविधता को प्रोत्साहित करने वाले कानून पारिस्थितिक तंत्र की स्थिरता को बनाए रखते हैं। पर्यावरण नीति और नियमन ना केवल प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा करते हैं बल्कि समाज की स्थिरता और स्वास्थ्य को भी सुरक्षित रखते हैं।

8.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप

- ✓ पर्यावरण नीति और नियमन के अर्थ को समझ सकेंगे।
- ✓ पर्यावरण नियमन के अर्थ और उद्देश्यों के बारे में जान सकेंगे।
- ✓ पर्यावरण विनियमन की आवश्यकता तथा कारणओं को समझ सकेंगे।
- ✓ भारत में पर्यावरणीय नियमन तंत्र की संरचना और कार्यप्रणाली से अवगत हो सकेंगे।
- ✓ पर्यावरणीय नियामक संस्थाओं के कार्य और भूमिकाओं को समझ सकेंगे।

8.3 पर्यावरण नीति एवं नियमन की प्रस्तावना (Introduction of Environment Policy and Regulation)

पर्यावरण नीति और नियमन में ऐसे निर्देश (Instruction) और प्रोटोकॉल शामिल होते हैं जो प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण को सुनिश्चित करते हैं और प्रदूषण के स्तर को कम करते हैं। यह न केवल हमारे वर्तमान जीवन के लिए बल्कि भविष्य की पीढ़ियों के लिए भी एक स्वस्थ और स्थिर पर्यावरण बनाए रखने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम है। इस संदर्भ में, पर्यावरण नीति और नियमन की समझ और विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि पर्यावरण संरक्षण केवल कानूनी या नीतिगत प्रयासों से नहीं बल्कि समाज के सभी वर्गों की सक्रिय भागीदारी से संभव है।

पर्यावरण नीति और नियमन प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण और दीर्घकालिक मानव स्वास्थ्य के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। इन नीतियों का उद्देश्य प्रदूषण को कम करना, जैव विविधता को संरक्षित करना, और सतत विकास को सुनिश्चित करना है। पर्यावरणीय नियमों के बिना, औद्योगिकीकरण और शहरीकरण के कारण प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन और प्रदूषण की समस्याएँ बढ़ सकती हैं, जिससे मानव जीवन और पारिस्थितिक तंत्र पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

पर्यावरण नीति, जैसे कि वायु और जल प्रदूषण नियंत्रण के नियम, उद्योगों को मानक स्थापित करते हैं, जिससे वायु और जल की गुणवत्ता में सुधार होता है। इसी प्रकार, वन संरक्षण और जैव विविधता को प्रोत्साहित करने वाले कानून पारिस्थितिक तंत्र की स्थिरता को बनाए रखते हैं। इसके अतिरिक्त, वैश्विक जलवायु समझौतों जैसे पेरिस समझौते, अंतर्राष्ट्रीय सहयोग को बढ़ावा देते हैं और जलवायु परिवर्तन के खिलाफ संयुक्त प्रयासों को प्रोत्साहित करते हैं।

8.4 पर्यावरण नियमन: अर्थ एवं उद्देश्य (Environmental Regulation: Meaning and Objectives)

पर्यावरण के संरक्षण तथा संवर्द्धन के लिए आर्थिक नीतिगत एवं वैधानिक (legal) उपायों को सुनिश्चित करने के उद्देश्य से भारत में पर्यावरण नियमन की व्यवस्था को अंगीकृत किया गया है। इस व्यवस्था के अन्तर्गत पर्यावरण सम्बन्धी, संवैद्यानिक प्रावधान, वैधानिक तथा नियामक तंत्र, क्रियान्वयन एवं समीक्षात्मक आयामों का समावेश किया गया है। प्रत्येक आयाम में जवाबदेही एवं उत्तरदायित्व के सिद्धान्तों को अंगीकृत किया गया है यानि पर्यावरण के विभिन्न घटकों जैसे वायु, जल, वन आदि के संदर्भ में विभिन्न गतिविधियों जैसे कृषि, औद्योगिक, परिवहन, उपभोग आदि के लिए पर्यावरणीय मानक निर्धारित किए गए हैं साथ ही इन मानकों एवं मानदंडो का प्रभावी क्रियान्वयन सुनिश्चित किया जाता है। संक्षेप में पर्यावरणीय नियमन के अन्तर्गत पर्यावरण संरक्षण के उपाय, नीतियाँ एवं वैधानिक तंत्र के निर्माण तथा उनके क्रियान्वयन की व्यवस्था को समाहित किया जाता है। इस सन्दर्भ में भारत में पर्यावरण एवं वन मंत्रालय, पर्यावरण को विनियमित करने वाली नोडल संस्था है। देश में पर्यावरण सम्बन्धी नीतिगत तंत्र निर्मित करने का उत्तरदायित्व इसी मंत्रालय का है। इसके अतिरिक्त पर्यावरण संरक्षण के उपाय तथा कानूनों के क्रियान्वयन एवं समीक्षा हेतु अनेकों विभागों तथा संस्थाओं का गठन किया गया है जिनमें **केन्द्रीय तथा राज्य प्रदूषण नियन्त्रण** (Central and State Pollution Control) मुख्य हैं। पर्यावरणीय प्रदूषणों की रोकथाम तथा निवारण हेतु न्यायिक प्रक्रिया की व्यवस्था की गयी है।

इस पूरी पर्यावरण नियमन की प्रक्रिया में देश तथा देशवासियों के आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं संवैधानिक सरोकारों का भी समावेश किया गया है। संरक्षण हेतु अन्तर्राष्ट्रीय कानूनों तथा समझौतों के साथ पर्यावरण नियमन व्यवस्था में सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास किया है। समय के साथ आर्थिक, सामाजिक तकनीकी विकास एवं वैधानिक व्यवस्था के समीक्षात्मक मूल्यांकन के माध्यम से पर्यावरणीय नियमन व्यवस्था में नवीन तथा महत्वपूर्ण आयामों का समावेश करने का प्रयास किया गया है।

संक्षेप में पर्यावरणीय नियमन व्यवस्था के निम्नलिखित उद्देश्य हैं -

1. पर्यावरण संरक्षण तथा उसकी गुणवत्ता के संवर्द्धन हेतु नीतिगत तथा कानूनी उपायों को सुनिश्चित करना।
2. पर्यावरण नीति एवं कार्यक्रमों के क्रियान्वयन के लिए योजना का निर्माण करना।
3. पर्यावरण कानूनों, नीतियों एवं मानको के समुचित क्रियान्वयन हेतु प्रभावी शासन (efffective governance) स्थापित करना।
4. पर्यावरण संरक्षण के अन्तर्राष्ट्रीय समझौतों के सन्दर्भ में अनुपालन सुनिश्चित करना।
5. पर्यावरण नियमन में त्वरित, उत्तरदायित्व एवं पारदर्शिता सुनिश्चित करना।
6. पर्यावरण संरक्षण हेतु वैधानिक, प्रशासनिक तथा संगठनात्मक स्वरूप तैयार करना।

8.5 पर्यावरण विनियमन की आवश्यकता तथा कारण (Causes and Need for Environment Regulation)

आधुनिक समय में विकास की प्रक्रिया को तीव्र करने की होड़ में पर्यावरणीय संकट आज पूरे विश्व के सम्मुख सबसे गंभीर चुनौती बनकर सामने खड़ा है क्योंकि एक ओर सामाजिक-आर्थिक विकास (Socio-Economic Development) को तीव्र करने की आवश्यकता है वहीँ दूसरी ओर पर्यावरणीय सरोकारों (Concerns) को भी विकास की प्रक्रिया में समाहित करना अनिवार्य हो गया है। आर्थिक विकास की होड़, तीव्र जनसंख्या वृद्धि जनित आवश्यकताओं, गरीबी, भौतिकवादी जीवन शैली एवं उपभोक्तावादी संस्कृति के कारण यदि आज की आवश्यकताओं तथा पर्यावरण में संतुलन नही स्थापित किया गया तो सृष्टि के भविष्य पर प्रश्नचिन्ह लग जाएगा।

अंतर्राष्ट्रीय समझोतों, नागरिक समाज (Civil Society) तथा मीडिया के प्रयासों से जागरूकता निरंतर पैदा हो रही है कि पर्यावरणीय गुणवत्ता और आर्थिक विकास एक दूसरे के पूरक है नाकि एक दूसरे से अलग। ऐसा इसलिए है कि प्रौद्योगिकीय प्रगति के साथ-साथ पर्यावरण संबंधी चुनौतियां भी बढ़ती जा

रही हैं। इसके परिणामस्वरूप प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण और सतत उपयोग के लिए हमारी सामाजिक एवं विकास संबंधी प्राथमिकताओं को ध्यान में रखते हुए औद्योगिक और कृषि उत्पादन के पैटर्न उपयोगी सेवाओं के उपभोक्ता व्यवहार तथा लोगों की जीवन शैली में परिवर्तन लाने की जरूरत है। इसलिए विश्व भर में पर्यावरणीय निकायों (bodies) द्वारा पर्यावरणीय विनियम और मापदण्ड स्थापित किए गए हैं। इसलिए भारत पर भी इस पर्यावरणीय मापदण्डों एवं विनियमों पर खरा उतरने का अधिकाधिक दबाव पड़ता जा रहा है।

पर्यावरण संरक्षण हेतु अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रथम ठोस शुरूआत संयुक्त राष्ट्र के तत्वाधानों में 1972 में स्टॉकहोम (Stockholm) में मानव तथा पर्यावरण सम्मेलन के माध्यम से हुई। इसके पश्चात रियो डि जेनेरों में 1992 में हुए **पृथ्वी सम्मेलन (Earth Summit)** एवं 1997 में क्योटो (Kyoto) में हुए जलवायु परिवर्तन सम्मेलन (Climate Change Conference) तथा 2002 में जोहन्सबर्ग (Johannesburg) में हुए सतत विकास पर हुए अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में पर्यावरण अनुकूल विकास को अपनाने तथा पर्यावरण संरक्षण हेतु समस्त विश्व से ठोस आर्थिक, राजनैतिक एवं वैधानिक प्रयास करने के विभिन्न महत्वपूर्ण समझौतों की स्वीकृति प्रदान की जाएगी।

भारत में भी पर्यावरण संरक्षण के महत्व को समझते हुए इसके संरक्षण को संवैधानिक दर्जा प्रदान किया गया है। राज्य के नीति निर्देशक तत्वों (अनुच्छेद 48A) में पर्यावरण संरक्षण का दायित्व राज्य को सौंपा गया है तथा 42वें संविधान संशोधन के माध्यम से 1976 में पर्यावरण संरक्षण को देश के हर नागरिक का मौलिक कर्तव्य (अनुच्छेद 51A जी) बना दिया गया है।

भारत में पर्यावरणीय आंदोलनों, सामाजिक संगठनों मीडिया, गैर सरकारी संगठनों (Non Government Organization) आदि के माध्यमों से पर्यावरण के संदर्भ में यह जागरूकता स्थापित हो गयी कि मुख्य धारा के विकास में पर्यावरण की भारी उपेक्षा की गयी है। अत: विकास की प्रक्रिया में पर्यावरणीय सरोकारों (Concerns) को आत्मसात् करने की आवश्यकता है।

चिपको आंदोलन, नर्मदा घाटी आंदोलन तथा अन्य अनेकों महत्वपूर्ण आंदोलनों एवं विशेष कर भोपाल गैस दुर्घटना ने जहाँ एक ओर आम जन-मानस को उद्वेलित किया वहीं सरकारों को भी पर्यावरण संरक्षण की दिशा में ठोस प्रयास करने हेतु बाध्य किया। पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1986 उपरोक्त कारकों के पश्चात ही गठित किया गया।

न्यायिक सक्रियता एवं पर्यावरणीय कानूनों के प्रति जागरूकता के कारण से उच्च तथा सर्वोच्च न्यायालयों में जनहित याचिकाओं पर आये पर्यावरणीय संबंधी क्रान्तिकारी निर्णयों ने पर्यावरण नियमन की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया। देश में महत्वपूर्ण पर्यावरणीय नियम, कानूनों, मानकों आदि का गठन तथा समीक्षा इसी न्यायिक पहल का परिणाम है। स्वच्छ पर्यावरण को जीने के अधिकार के अन्तर्गत (अनुच्छेद 21) समाहित कर उसके मौलिक अधिकारों की परिधि में लाना, प्रदूषण उत्सर्जन हेतु वाहनों में यूरो मानदंडो का क्रियान्वयन करना, आदि सभी न्यायिक सक्रियता का ही परिणाम है।

8.6 भारत में पर्यावरणीय नियमन तंत्र (Environmental Regulation System in India)

भारत में पर्यावरण नियमन तंत्र के अन्तर्गत नियामक संस्थायें, पर्यावरण एवं संसाधन नीतियाँ, वैधानिक ढाँचा, कानून आदि का समावेश किया जाता है। पर्यावरण के सन्दर्भ में पर्यावरण तथा वन मंत्रालय पर्यावरण को विनियमत करने वाली नोडल संस्था है। देश में पर्यावरण संबंधी नीतिगत तंत्र निर्मित करने का उत्तरदायित्व इसी मंत्रालय को है। इसके अतिरिक्त अन्य मंत्रालय जैसे कृषि, उद्योग, विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी, गैर-परम्परागत ऊर्जा ग्रामीण तथा शहरी विकास, जैसे मंत्रालय पर्यावरण से संबंधित विभिन्न महत्वपूर्ण मसलों पर नीति निर्माण करने का कार्य करते हैं। पर्यावरण संरक्षण के उपायों तथा कानूनों के क्रियान्वयन एवं समीक्षा हेतु अनेकों विभाग तथा संस्थाओं का गठन किया गया है। इनमें केन्द्रीय तथा राज्य के प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड प्रमुख हैं। पर्यावरणीय संरक्षण को कानूनी प्रावधानों के अन्तर्गत लाने के लिए केन्द्र तथा राज्य सरकारों के 30 से अधिक कानूनों को लागू किया गया है। पर्यावरण संरक्षण के संबंध में

महत्वपूर्ण दिशा-निर्देशों के लिए राष्ट्रीय पर्यावरण नीति, जनसंख्या नीति, कृषि नीति तथा वन नीतियों का प्रावधान किया गया है। देश में पर्यावरण को विकास की प्रक्रिया में समावेशित करने के उद्देश्य से योजना आयोग विकास कार्यक्रमों को क्रियान्वित करता है।

1. **पर्यावरण संरक्षण हेतु संवैधानिक प्रावधान (Constitutional provision for Environment Protection):**पर्यावरण संरक्षण हेतु संविधान में कुछ प्रावधान किए गए जोकि इस प्रकार हैं - ***पहला***, संविधान के अनुच्छेद 48A के अनुसार राज्य, देश के पर्यावरण की सुरक्षा तथा उसमे सुधार करने और वन तथा वन्य जीवों की रक्षा करने का प्रयास करेंगा। ***दूसरा***, 42वें संशोधन के माध्यम से संविधान में अनुच्छेद 51A (जी) का समावेश किया गया है। जिसके अनुसार यह प्रत्येक नागरिक का मूल कर्तव्य होगा कि वह प्राकृतिक पर्यावरण की (जिसके अन्तर्गत वन, झील, नदी और अन्य जीव हैं) की रक्षा करें और उसका संवर्द्धन करे तथा प्राणी मात्र के प्रति दया भाव रखें। ***तीसरा***, अनुच्छेद 21 के अनुसार स्वच्छ पर्यावरण को प्रत्येक नागरिक के जीने का अधिकार (आधारभूत अधिकार) के अंतर्गत समाहित किया गया है। ***चौथा***, संविधान की सातवीं अनुसूची में केन्द्र तथा राज्य के मध्य शक्तियों का विभाजन किया गया है। संघ सूची के अंतर्गत केन्द्र सरकार कानून बना सकती है। इस सूची में उद्योग, खानिज तेल, खान तथा खनिज संसाधन, अर्न्तराज्यीय नदी आदि का नियमन तथा विकास आदि प्रमुख हैं। राज्य सूची के अंतर्गत राज्य सरकारें कानून बना सकती हैं। इसके अंतर्गत सार्वजनिक स्वास्थ्य, सफाई, कृषि, भूमि आदि प्रमुख हैं। समवर्ती सूची के अंतर्गत राज्य तथा केंद्र सरकार कानून बना सकती हैं। इसके अंतर्गत वन, वन्य-जीव, आर्थिक-सामाजिक नियोजन, परिवार कल्याण आदि प्रमुख हैं।
2. **पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 (Environment Protection Act, 1986):** पर्यावरण के संरक्षण तथा संवर्द्धन हेतु यह अधिनियम देश में समग्र तथा व्यापक रूप रेखा प्रस्तुत करता है। यह केन्द्र सरकार को पर्यावरण का स्तर ठीक रखने, उसमे सुधार करने, सभी स्रोतों से होने वाले प्रदूषणों को नियन्त्रित करने और किसी औद्योगिक केन्द्र (Industrial Center) की स्थापना प्रचालन को पर्यावरणीय आधार पर प्रतिबंधित/नियंत्रित करने हेतु प्राधिकृत करता है। इस अधिनियम के मुख्य प्रावधान इस प्रकार हैं ***पहला***, पर्यावरण तथा प्रदूषण को परिभाषित किया गया है। ***दूसरा***, केन्द्र सरकार के पास पर्यावरण के संरक्षण और उसकी गुणवत्ता सुधार लाने तथा प्रदूषण नियंत्रित करने की शक्तियाँ प्रदान करता है। ***तीसरा***, पर्यावरण संरक्षण तथा प्रदूषण नियंत्रण के मापदंड/पैमाने तय करने तथा औद्योगिक एवं अन्य किसी गतिविधियों से निर्धारित मानदंडो से अधिक पर्यावरणीय संदूषकों उत्सर्जन (emissions of environmental pollutants) के नियंत्रण/ शमन करने हेतु प्राधिकृत करता है। ***चौथा***, यदि किसी पर्यावरणीय संदूषक का उत्सर्जन निर्धारित मानदंडो से अधिक हुआ या किसी दुर्घटना या अप्रत्याशित कार्य या घटना के कारण होने की आशंका हो, तो ऐसे उत्सर्जन के परिणामस्वरूप होने वाले प्रदूषण को रोकने के लिए वह बाध्य होगा। ***पांचवा***, केन्द्र सरकार द्वारा नियुक्त संस्था पर्यावरण संरक्षण तथा प्रदूषण नियंत्रण के लिए वायु, जल, मिट्टी या अन्य कोई नमूना ले सकती है। ***छठा***, इस अधिनियम के प्रावधानों का उल्लंघन एवं अनुपालन ना करने पर कारावास या जुर्माना या सजाएं (Fines and punishments) दोनों हो सकती हैं।
3. **वन अधिनियम 1927 (Forest Act, 1927):** यद्यपि इस अधिनियम में भारत ने उपनिवेश काल (Colonial Period) की वन नीति को ही शामिल किया गया है परन्तु यह अधिनियम भारत में लागू है। इस अधिनियम के अनुसार चार श्रेणीयों के वनों का प्रावधान किया गया है। जिनमें आरक्षित वन, संरक्षित वन, ग्रामीण वन एवं निजी या राजकीय वन। वन अधिनियम का प्रशासन वन अधिकारियो के द्वारा किया जाता है। इन अधिकारियों को वन अपराध में गिरफ्तारी करने, जाँच करने, गवाही को सुनिश्चित करने एवं साक्ष्य लेने का अधिकार है।
4. **वन्य-जीव संरक्षण अधिनियम,1972 (Wldlife Protection Act, 1972):** इस अधिनियम को भारतीय संसद ने संविधान के अनुच्छेद 252 के अर्न्तगत पारित किया। यह अधिनियम, राज्य वन्य जीव सलाहाकार परिषदों, वन्य पशुओं एवं पक्षियों के शिकार पर नियन्त्रण, अभ्यारण्य तथा राष्ट्रीय उद्यान

की स्थापना वन्य पशुओं से बने उत्पाद तथा उपहार पर प्रतिबन्ध लगाने एवं नियन्त्रण स्थापित करने का कार्य करता है। इस अधिनियम के उपबन्धों का उल्लंघन होने पर न्यायायिक दण्ड लगाए जाने का प्रावधान किया गया है। इस अधिनियम का पालन वन्य जन्तु प्रतिपालक तथा उसके कर्मचारियों द्वारा किया जाता है। यह अधिनियम जम्मू कश्मीर को छोड़ कर समस्त देश में लागू किया गया है। इस अधिनियम के अन्तर्गत वन्य जीवों को परिभाषित किया गया है। यह अधिनियम जंगली जानवर, पक्षियों, जलीय जानवरों, मछलियों तथा पेड़ पौधों को संरक्षण प्रदान करता है। इन प्रजातियों की कटाई एवं शिकार को सामान्यतया गैर कानूनी घोषित करता है। इस अधिनियम् में 2002 में किए गए संशोधन के अनुसार राज्य सरकारें राष्ट्रीय वन्य जीव बोर्ड की संस्तुतियों के पश्चात ही राष्ट्रीय उद्यान तथा अभयारण्यों (National Parks and Sancturies) की सीमाओं में परिवर्तन कर सकता है।

5. **वन संरक्षण अधिनियम,1980 (Forest Conservation Act, 1980):** वनों के विनाश को रोकने हेतु भारत शासन की प्रतिबद्धता को रेखांकित करते हुए वर्ष 1980 में यह अधिनियम लागू हुआ। इस अधिनियम के अनुसार वन भूमि का गैर-वानिकी (non-forestry) कार्यों में प्रायोजन निषिद्ध (prohibited) किया गया है। यदि विकास कार्यों के लिए वन भूमि की आवश्यकता हो तथा अन्य विकल्पों के अभाव में उचित पर्यावरणीय प्रभाव विश्लेषण के बाद ही सरकार द्वारा प्रायोजन हेतु सशर्त अनुमति दिये जाने का प्रावधान है। इस अधिनियम का प्रभाव यह हुआ कि वानिकी भूमि का गैर वानकी में प्रयोजन हेतु प्रयोग की घटनायें कम हो गयी। इस अधिनियम के अनुसार वन वंचित क्षेत्रों में अन्य प्रायोजन में परिवर्तन की स्थिति में वैकल्पिक वृक्षारोपण करना अनिवार्य कर दिया गया है। यह अधिनियम जम्मू कश्मीर को छोड़कर समस्त देशों में भी लागू किया गया है। इस अधिनियम के अनुसार वन भूमि एवं उसके किसी भाग का गैर-वन प्रायोजन के लिए प्रयोग किया गया प्रतिबन्धित है। इस अधिनियम के क्रियान्वयन के सम्बन्ध में केन्द्र सरकार द्वारा एक सलाहाकार समिति के गठन का प्रावधान किया गया है जोकि समय-समय पर सरकार को वन संरक्षण से सम्बन्धित विषयों पर सलाह दे सके।
6. **वन अधिकारों संबंधी मान्यता अधिनियम,2006 (Forest Rights RecognitionAct, 2006):** भारत के वनों के संरक्षण हेतु वनवासियों, आदिवासियों तथा वनों के आस-पास निवास करने वाले समाज की भूमिका सुनिश्चित करने के उद्देश्य से तथा इनको वनों से संबंधित विभिन्न अधिकारों पर सुरक्षा देने के उद्देश्य से संसद द्वारा 2006 में यह महत्वपूर्ण अधिनियम पारित किया गया। भारत सरकार ने वर्ष 2006 में लघु वनों का स्वामित्व, प्रसंस्करण (processing), व्यापार और विपणन आदि वनों में और उसके आसपास रहने वाले वनवासियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य पारंपरिक वन निवासियों को सौंप दिया है। इससे वनों पर आश्रित लोगों की आर्थिक स्थिति में सुधार होगा तथा सहस्राब्दी विकास लक्ष्य (Millennium Development Goals) यानी शताब्दी के विकास लक्ष्यों के प्रति वनों के योगदान में भी वृद्धि होगी। इस अधिनियम के पारित होने से वनों में रहने वाले लोगों के वन सम्बन्धी अधिकार जैसे चारा, चुगान, ईधन, रेशा, जड़ी बूटियां तथा लघु वन उपजों आदि को सुनिश्चित किया गया है जिससे स्थानीय समाज के आजीविका सुरक्षा के साथ-साथ वन संरक्षण का उद्देश्य भी पूरा किया जा सकता है।
7. **जल, वायु तथा ध्वनि प्रदूषण संबंधी अधिनियम (Water, Air and Noise Pollution Act):** भारत में जल तथा वायु प्रदूषण एंव निवारण अधिनियमों को क्रियान्वित करने के उद्देश्य से केन्द्र तथा राज्य में प्रदूषण नियंत्रण बोर्डों का गठन किया गया है। जल प्रदूषण (निवारक एवं नियंत्रण) अधिनियम 1974 में पारित एवं 1988 में संशोधित किया गया। अधिनियम का मुख्य उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि औद्योगिक तथा घरेलू अपशिष्ट बगैर समुचित उपचार के नदियो एवं झीलो में नही गिराया जाए। वायु प्रदूषण (निवारण तथा नियंत्रण) अधिनियम 1981 वायु प्रदूषण के नियंत्रण एवं उपशमन (alleviation) की व्यवस्था करता है तथा वायु प्रदूषण संशोधित अधिनियम 1987, केन्द्रीय तथा राज्य प्रदूषण बोर्ड को वायु प्रदूषण संबंधी गंभीर आकस्मिकताओं (Contingencies) से निपटने हेतु प्राधिकृत करता है। ध्वनि प्रदूषण (विनियमन और नियंत्रण) (संशोधन) नियमावली 2002 का उद्देश्य

विभिन्न स्त्रोतों से (जैसे औद्योगिक क्रियाकलाप, जेनेरेटर, लाउडस्पीकर, जन सम्बोधन प्रणाली, म्यूजिक सिस्टमों, वाहनों के हार्न और अन्य यांत्रिकीय उपकरणों जिनका प्रभाव मानव स्वास्थ्य तथा मनोवैज्ञानिक खुशहाली (psychological well-being) से है) सार्वजनिक स्थलों में ध्वनि स्तर पर नियंत्रण करना है।

8. **जैव विविधता अधिनियम, 2002 (Bio Diversity Act, 2002):** भूमंडल पर जैव विविधता को समृद्ध बनाने के उद्देश्य से 1992 पृथ्वी सम्मलेन (Earth Summit), रियो डी जेनेरों (Rio de Janeiro) में 150 से अधिक देशों ने जैव विविधता के संरक्षण तथा उस पर अधिकार हेतु एक प्रस्ताव पारित किया। भारतीय जैव विविधता अधिनियम 2002 इसी प्रस्ताव के अनुसार ही गठित किया गया है। इस अधिनियम के मुख्य बिन्दु इस प्रकार हैं - ***पहला,*** जैव विविधता के संरक्षण को सुनिश्चित करना। ***दूसरा,*** जैव सम्पदा का टिकाऊ उपयोग। ***तीसरा,*** आनुवंशिक (genetic) संसाधनों से प्राप्त लाभों का पर्याप्त उपयोग ताकि समान भागीदारी सुनिश्चित की जा सके और इससे संबंधित ज्ञान की रक्षा की जा सके।
9. **जोखिमपूर्ण पदार्थ (Hazardous Substance):** जोखिम पूर्ण पदार्थों के दायरे में ज्वलनशील पदार्थ, विस्फोटक, हानिकार एवं सिन्थेटिक रसायन, गैसे, भारी धातुएं जैसे सीसा, पारा आदि खतरनाक सूक्ष्म जीव एवं नाभिकीय उत्पाद आदि आते हैं । यह सभी पदार्थ भारत में व्यापक रूप से विनियमित होते हैं। इन नशीले, जहरीले, विषैले तथा जोखिम पदार्थों की समस्या से निपटने हेतु केन्द्र सरकारी द्वारा प्रथम नियमावली 1989 में जारी की गयी।
10. **मर्चेन्ट शिपिंग अधिनियम, 1970 (Merchant Shipping Act, 1970): इस** अधिनियम को देश बंदरगाहों (ports) एवं तटवर्ती क्षेत्रों के पर्यावरण की सुरक्षा करने के उद्देश्य से पारित किया गया है। इस अधिनियम का उद्देश्य विनिर्दिष्ट परिधि (Specified perimeter) के भीतर तटीय क्षेत्रों में जहाजों से निकलने वाले अपशिष्टों का निपटान (disposal of waste) सुनिश्चित करना है।
11. **परमाणु ऊर्जा अधिनियम,1982 (AtomicEnergyAct 1982):** देश में परमाणु ऊर्जा के स्वच्छ विकास को प्रोत्साहित करने ताकि रेडियोएक्टिव (radioactive) अपशिष्टों के हानिरहित संग्रहण तथा निपटान (disposal) सुनिश्चित करने के उद्देश्य से पारित किया गया है। जिससे नाभिकीय रिसाव की दुर्घटनाओं की संभावनाओं को समाप्त किया जा सके।
12. **मोटर वाहन अधिनियम, 1988 (MoterAehiclesAct 1988):** मोटर वाहन अधिनियम, 1988 में कहा गया है कि सभी खतरनाक पदार्थों के अपशिष्ट को अच्छी तरह पैक किया जाए, लेबल (label) लगाया जाए और उनको एक जगह से दूसरी जगह ले जाया जाए।
13. **राष्ट्रीय हरित न्यायाधिकरण अधिनियम, 2010 (National Green Tribunal Act, 2010):** इस अधिनियम के पारित होते ही पर्यावरण सुरक्षा तथा पर्यावरण संबंधी विवादों को सही समय पर निपटाने हेतु भारत में भी पर्यावरण अदालतों की स्थापना हो गयी है। इस न्यायाधिकरण का मुख्यालय दिल्ली में होगा तथा देश के अन्य चार स्थानों में इसकी पीठ स्थापित की जाएगी। यह न्यायाधीकरण पूरी तरह से स्वतन्त्र होगा तथा वन एवं पर्यावरण मंत्रालय का भी इसमें कोई भी हस्तक्षेप नहीं होगा। इस न्यायाधिकरण की सबसे मुख्य विशेषता यह है कि यदि किसी व्यक्ति को लगता है कि वन एवं पर्यावरण मंत्रालय के कार्यक्रम, नीतियां तथा उनका क्रियान्वयन अपारदर्शी, मनमाना तथा पक्षपातपूर्ण है तो मंत्रालय या इसके मंत्री के विरूद्ध भी अपील को दायर किया जा सकता है। इस अधिनियम के लागू होते ही राष्ट्रीय पर्यावरण प्राधिकरण अधिनियम, 1994 तथा राष्ट्रीय पर्यावरण अपीलीय प्राधिकरण अधिनियम, 1997 स्वत: ही भंग हो गये हैं तथा राष्ट्रीय पर्यावरण अपीलीय प्राधिकरण भी समाप्त हो गया है। इस सृजित न्यायाधिकरण के फैसलो के खिलाफ सुनवाई सिर्फ सर्वोच्च न्यायालय में ही हो पाएगी।

8.7 पर्यावरण नियामक संस्थाएं (Environmental Regulatory Bodies)

पर्यावरणीय नियामक संस्थाएं ऐसे संगठनों और निकायों का समूह हैं जोकि पर्यावरण संरक्षण, प्रदूषण नियंत्रण और संसाधनों के सतत प्रबंधन के लिए जिम्मेदार होते हैं। ये संस्थाएं ना केवल पर्यावरणीय

मानकों को लागू करती हैं बल्कि पर्यावरणीय कानूनों की निगरानी, प्रवर्तन और समीक्षा भी करती हैं। भारत में, इन संस्थाओं का महत्वपूर्ण योगदान है जो पर्यावरणीय संकटों के समाधान में सहायता प्रदान करता है।

1. **केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (Central Pollution Control Board):** केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड भारत सरकार की एक प्रमुख नियामक संस्था है, जिसे 1974 में वायु (प्रदूषण नियंत्रण) अधिनियम के तहत स्थापित किया गया था। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड का मुख्य उद्देश्य प्रदूषण की निगरानी और नियंत्रण करना है। यह विभिन्न प्रदूषण स्रोतों की निगरानी करते हुए उनके मानक को स्थापित कर प्रदूषण नियंत्रण के उपायों को लागू करता है। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड केंद्रीय स्तर पर पर्यावरणीय मानकों की निगरानी करता है और राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्डों के साथ समन्वय करता है।
2. **राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (State Pollution Control Board):** राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड प्रत्येक राज्य में स्थापित एक स्थानीय नियामक संस्था है जोकि राज्य स्तर पर प्रदूषण नियंत्रण और पर्यावरण संरक्षण के उपायों को लागू करती है। राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड की जिम्मेदारी में वायु और जल प्रदूषण नियंत्रण, औद्योगिक कचरे का प्रबंधन और पर्यावरणीय मानकों का अनुपालन सुनिश्चित करना शामिल है। ये बोर्ड स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार नीतियों को लागू करते हैं और पर्यावरणीय नियमों का प्रवर्तन करते हैं।
3. **पर्यावरण मंत्रालय (Ministry of Environment):** भारत सरकार का पर्यावरण मंत्रालय, जिसे **'पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय'(Ministry of Environment, Forest and Climate Change)** के नाम से भी जाना जाता है। यह पर्यावरणीय नीतियों और कार्यक्रमों को लागू करने के लिए जिम्मेदार है। यह मंत्रालय पर्यावरणीय विधायिका का निर्माण और उसका कार्यान्वयन करता है, जिसमें प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण, जलवायु परिवर्तन और वन संरक्षण शामिल हैं। मंत्रालय पर्यावरणीय नियमों के प्रवर्तन के लिए केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड और राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के साथ समन्वय करता है और नीति सुधारों की दिशा में भी काम करता है।
4. **राष्ट्रीय हरित न्यायाधिकरण (National Green Tribunal):** यह एक विशेष कानूनी संस्था है जिसे 2010 में स्थापित किया गया था। इसका उद्देश्य पर्यावरणीय विवादों का शीघ्र निपटान करना और पर्यावरणीय न्याय सुनिश्चित करना है। राष्ट्रीय हरित न्यायाधिकरण पर्यावरणीय मामलों में अधिकार क्षेत्र रखता है और इसकी प्राथमिकता में प्रदूषण नियंत्रण, वन संरक्षण और पर्यावरणीय मानकों के उल्लंघन से संबंधित मामलों की सुनवाई करना शामिल है। यह न्यायाधिकरण पर्यावरणीय मामलों में विशेष और त्वरित न्याय प्रदान करने के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
5. **वन और पर्यावरण संबंधी निकाय (Forest and Environment Related Bodies):** भारत में, विभिन्न वन और पर्यावरण संबंधी निकाय भी महत्वपूर्ण नियामक संस्थाएं हैं जो वन संसाधनों के संरक्षण और प्रबंधन का कार्य करती हैं। इनमें वन विभाग, वन्यजीव अपराध नियंत्रण ब्यूरो (Wildlife Crime Control Bureau) और वन्य-जीव संरक्षण निकाय (Wildlife Conservation Body) शामिल हैं। ये निकाय वनों और वन्य-जीवों के संरक्षण, अवैध शिकार और वनों की कटाई के खिलाफ उपायों को लागू करने में सहायक होते हैं।

ये सभी संस्थाएं मिलकर एक मजबूत पर्यावरणीय नियामक तंत्र का निर्माण करती हैं जोकि प्रदूषण नियंत्रण, संसाधनों के सतत प्रबंधन और पर्यावरणीय मानकों के पालन को सुनिश्चित करती हैं। इनके माध्यम से भारत में पर्यावरणीय संरक्षण की दिशा में महत्वपूर्ण प्रगति की जा रही है जिससे प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण और पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखना संभव हो पा रहा है।

8.8 अभ्यास प्रश्न (Practics Questions)

निम्नलिखित कथनों में रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. पर्यावरणीय नियम प्राकृतिक संसाधनों के.................. प्रदूषण नियंत्रण और सतत विकास को सुनिश्चित करने में मदद करते हैं। (विनाश **या** संरक्षण)
2. भारत में पर्यावरणीय नियामक तंत्र की मुख्य नोडल संस्था................ है। (केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड **या** वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय)
3. पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, ... के तहत केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड प्रदूषण नियंत्रण के लिए वायु, जल, मिट्टी या अन्य नमूना ले सकती है। (1986 **या** 2010)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन चुनिए -

1. पर्यावरण नीति और नियमन का उद्देश्य केवल औद्योगिकीकरण को प्रोत्साहित करना है।
2. वन अधिकारों संबंधी मान्यता अधिनियम 2006 के तहत वनों में रहने वाले लोगों को केवल भूमि के उपयोग का अधिकार प्रदान किया गया है।

8.9 सारांश (Summary)

पर्यावरणीय संकट की बढ़ती गंभीरता ने प्रभावी नीतियों और नियमों की आवश्यकता को बढ़ा दिया है। पर्यावरण नीति और नियमन प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण, प्रदूषण कम करने और सतत विकास को सुनिश्चित करने के लिए महत्वपूर्ण हैं। भारत में पर्यावरणीय नियमन का उद्देश्य प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा करना, प्रदूषण को नियंत्रित करना और वन एवं जैव विविधता की सुरक्षा करना है। इसके लिए विभिन्न अधिनियम जैसे कि पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1986, वन अधिनियम 1927 और वन्य-जीव संरक्षण अधिनियम 1972 लागू किए गए हैं। इन नियमों का पालन सुनिश्चित करने के लिए केंद्रीय और राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड जैसे संस्थान कार्यरत हैं। इसके अतिरिक्त, संविधान में पर्यावरण संरक्षण के लिए विशेष प्रावधान हैं जोकि विकास और पर्यावरणीय संतुलन के बीच सामंजस्य बनाए रखने में सहायक हैं।

8.10 शब्दावली (Glossary)

- **पर्यावरणीय संकट (Environmental Crisis):** प्राकृतिक संसाधनों की कमी, प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन और अन्य समस्याओं के कारण उत्पन्न संकट जो पृथ्वी के पारिस्थितिक तंत्र को प्रभावित करता है।
- **नीति (Policy):** एक विशिष्ट उद्देश्य की प्राप्ति के लिए बनाई गई योजना या दिशा-निर्देश, जो सरकारी, संस्थागत या व्यक्तिगत स्तर पर लागू होती है।
- **नियमन (Regulation):** कानूनी या प्रशासनिक नियम जो विशेष गतिविधियों या व्यवहारों को नियंत्रित करने के लिए बनाए जाते हैं।
- **पर्यावरण संरक्षण अधिनियम (Environment Protection Act 1986):** भारत का एक महत्वपूर्ण कानून जो पर्यावरण के संरक्षण और सुधार के लिए नियम और दिशा-निर्देश प्रदान करता है।
- **वन अधिनियम (Forest Act, 1927):** एक कानून जो भारत के वन क्षेत्रों की रक्षा और प्रबंधन के लिए निर्धारित करता है।
- **वन्यजीव संरक्षण अधिनियम (Wildlife Protection Act 1972):** यह अधिनियम भारत में वन्यजीवों की रक्षा और उनकी प्रजातियों के संरक्षण के लिए लागू है।
- **प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (Pollution Control Board):** केंद्रीय और राज्य स्तर पर कार्यरत संस्थान जो प्रदूषण के नियंत्रण और पर्यावरणीय मानकों के अनुपालन की निगरानी करते हैं।

- **संविधान (Constitution):** देश के कानूनी ढांचे और शासन की आधारशिला, जिसमें पर्यावरण संरक्षण से संबंधित विशेष प्रावधान होते हैं।
- **सतत विकास (Sustainable Development):** ऐसा विकास जो वर्तमान जरूरतों को पूरा करता है बिना भविष्य की पीढ़ियों की जरूरतों को खतरे में डाले।
- **प्रभावी शासन (Effective Governance):** प्रभावी शासन एक ऐसा ढाँचा है जो दक्षता, अच्छे परिणाम और सामुदायिक संपत्तियों के संरक्षण को सुनिश्चित करके संगठनों को सफल होने में मदद कर सकता है। यह एक समानाधिकारवादी समाज बनाने में भी मदद कर सकता है जहां हर कोई शामिल और सशक्त महसूस करता है और किसी के साथ भेदभाव नहीं किया जाता है।
- **चिपको आंदोलन (Chipko Movement):** चिपको आंदोलन (शाब्दिक अर्थ 'आलिंगन आंदोलन') भारत में एक वन संरक्षण आंदोलन है। व्यावसायिक कटाई और वनों की कटाई पर सरकार की नीतियों का विरोध करते हुए, 1970 के दशक में प्रदर्शनकारियों ने पेड़ों को गले लगाने, पेड़ों के चारों ओर अपनी बाहें लपेटने का काम किया ताकि उन्हें काटा ना जा सके।
- **नर्मदा घाटी आंदोलन (Narmada Ghati Andolan):** इसे नर्मदा बचाओ आंदोलन भी कहा जाता हैं यह एक सामाजिक आंदोलन था जो वर्ष 1985 में भारत में नर्मदा नदी पर बड़े बांधों के निर्माण का विरोध करने के लिए शुरू हुआ था। इस आंदोलन का नेतृत्व मेधा पाटकर, बाबा आम्टे, अली काज़िमी और आनंद पटवर्धन सहित कार्यकर्ताओं ने किया था और पर्यावरणविदों, किसानों, आदिवासी लोगों और मानवाधिकार कार्यकर्ताओं ने इसका समर्थन किया था।
- **जीने का अधिकार (Right to Life):** जीवन का अधिकार एक मौलिक मानवाधिकार है जो लोगों को किसी देश या उसके प्रतिनिधि द्वारा मनमाने ढंग से या गैरकानूनी तरीके से उनके जीवन से वंचित होने से बचाता है। इसका तात्पर्य दूसरों के लिए यह कर्तव्य भी है कि वे इस अधिकार का सम्मान करें और इसका उल्लंघन ना करें।
- **समवर्ती सूची (Concurrent List):** समवर्ती सूची, जिसे सूची- III के नाम से भी जाना जाता है, भारतीय संविधान की सातवीं अनुसूची में 52 विषयों की एक सूची है जो संघ और राज्य दोनों के लिए सामान्य हित से संबंधित हैं। इन विषयों पर संसद और राज्य विधानमंडल कानून बना सकते हैं। हालाँकि, यदि संघ और राज्य द्वारा बनाए गए कानूनों के बीच कोई टकराव होता है तब केंद्रीय कानून प्रभावी होता है।
- **जुर्माना या सजाएं (Fines and Punishmens):** जुर्माना और दंड अनिवार्य भुगतान हैं जो प्रकृति में दंडात्मक हैं, जिनका उद्देश्य कुछ व्यवहारों या गतिविधियों को दंडित करना या रोकना है। उन्हें कानूनों और विनियमों का उल्लंघन करने के लिए आपराधिक और नागरिक कार्यवाही में अदालतों द्वारा लगाया जा सकता है। जुर्माना मुख्य रूप से कानूनी और नियामक प्रवर्तन से जुड़ा है, जो सार्वजनिक कल्याण, व्यवस्था या विशिष्ट कानूनों के खिलाफ अपराधों को दंडित करने पर केंद्रित है। दूसरी ओर, जुर्माना एक व्यापक शब्द है जिसे अनुपालन सुनिश्चित करने, दायित्वों को लागू करने और निष्पक्षता और अखंडता बनाए रखने के लिए संविदात्मक, वाणिज्यिक या विशिष्ट उद्योग संदर्भों में लागू किया जा सकता है।
- **सहस्राब्दी विकास लक्ष्य (Millennium Development Goals):** आठ सहस्राब्दी विकास लक्ष्य, जिनमें अत्यधिक गरीबी दर को आधा करने से लेकर एचआईवी/एड्स के प्रसार को रोकना और सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा प्रदान करना शामिल है, सभी लक्ष्य 2015 की तारीख तक - दुनिया के सभी देशों और सभी द्वारा सहमत एक खाका बनाते हैं विश्व के अग्रणी विकास संस्थान।
- **मनोवैज्ञानिक खुशहाली (Psychological Well-being):** मनोवैज्ञानिक खुशहाली, एक व्यक्ति की समग्र कार्यप्रणाली और भावनात्मक स्वास्थ्य है और मानसिक स्वास्थ्य का एक मुख्य पहलू है। इसे कल्याण की स्थिति के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जहां एक व्यक्ति अपनी क्षमता का

एहसास कर सकता है, जीवन के सामान्य तनावों का सामना कर सकता है और अपने समुदाय में योगदान दे सकता है।

- **आनुवंशिक संसाधनों (Genetic Resources):** यह आनुवंशिक सामग्री हैं जिनका वास्तविक या संभावित मूल्य होता है और वे पौधों, जानवरों, रोगाणुओं या अन्य स्रोतों से आ सकते हैं। सामग्री में आनुवंशिकता की कार्यात्मक इकाइयाँ शामिल हैं। आनुवंशिक संसाधनों के उदाहरणों में कृषि फसलें, औषधीय पौधे और पशु नस्लें शामिल हैं।
- **अपशिष्टों का निपटान (Disposal of Waste):** अपशिष्ट निपटान कचरे को इकट्ठा करने, छांटने, परिवहन और उपचार करने और फिर इसे जमीन के ऊपर या नीचे संग्रहीत करने या फेंकने की प्रक्रिया है। इसमें कचरे के पुन:उपयोग, पुनर्प्राप्ति या पुनर्चक्रण के लिए आवश्यक परिवर्तन संचालन भी शामिल हो सकते हैं।
- **वन्यजीव अपराध नियंत्रण ब्यूरो (Wildlife Crime Control Bureau):** वन्यजीव अपराध नियंत्रण ब्यूरो भारत में संगठित वन्यजीव अपराध से निपटने के लिए भारत सरकार द्वारा पर्यावरण और वन मंत्रालय के तहत स्थापित एक वैधानिक बहु-विषयक निकाय है। ब्यूरो का मुख्यालय नई दिल्ली में है और पांच क्षेत्रीय कार्यालय दिल्ली, कोलकाता, मुंबई, चेन्नई और भोपाल में हैं।

8.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)

निम्नलिखित कथनों में रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. संरक्षण 2. पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय

3. केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन चुनिए -

1. असत्य 2. असत्य

8.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- सिंह, काशीनाथ जगदीश (2006), ***आर्थिक भूगोल के मूल तत्व***, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।
- सिन्हा, मेघा (2008), ***पर्यावरण और पारिस्थितिकी तंत्र***, वंदना प्रकाशन, दिल्ली।
- त्रिपाठी, रेणु (2008), ***पर्यावरण भूगोल***, ओमेगा पब्लिकेशन, दिल्ली।
- ***जलवायु परितर्वन*** (2010), जागरण वार्षिकी।

8.13 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

- Andriantiatsaholiniaina, L. A., Kouikoglou, V. S., & Phillis, Y. A. (2004). ***Evaluating strategies for sustainable development: fuzzy logic reasoning and sensitivity analysis***. Ecological Economics, 48(2), 149–172. https://doi.org/10.1016/j.ecolecon.2003.08.009
- Bhalachandran, G. (2011). ***Kautilya's model of sustainable development***. Humanomics, 27(1), 41–52. https://doi.org/10.1108/08288661111110169
- Chen, H., & Yada, R. (2011). ***Nanotechnologies in agriculture: New tools for sustainable development***. Trends in Food Science & Technology, 22(11), 585–594. https://doi.org/10.1016/j.tifs.2011.09.004

- ***India follows a holistic approach towards its 2030 Sustainable Development Goals (SDGs).*** (n.d.). Retrieved February 13, 2020, from https://pib.gov.in/newsite/PrintRelease.aspx?relid=191192
- Kaygusuz, K. (2012). ***Energy for sustainable development: A case of developing countries***. Renewable and Sustainable Energy Reviews, 16(2), 1116–1126. https://doi.org/10.1016/j.rser.2011.11.013
- Oparaocha, S., & Dutta, S. (2011). ***Gender and energy for sustainable development***. Current Opinion in Environmental Sustainability, 3(4), 265–271. https://doi.org/10.1016/j.cosust.2011.07.003
- Smyth, J. C. (1995). ***Environment and Education: a view of a changing scene. Environmental Education Research***, 1(1), 3–120. https://doi.org/10.1080/1350462950010101

8.14 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. पर्यावरण नीति और नियमन के महत्व को समझाते हुए उनके विभिन्न उद्देश्यों, तात्पर्य और भारत में उनके क्रियान्वयन की संरचना पर विस्तृत चर्चा कीजिए।
2. भारतीय संविधान में पर्यावरण संरक्षण को लेकर किए गए प्रावधानों का विश्लेषण करते हुए यह बताएं कि ये प्रावधान पर्यावरणीय नियमन के दृष्टिकोण से कितने महत्वपूर्ण हैं।
3. पर्यावरणीय विनियम और नियमों के अनुपालन में विफलता के परिणामस्वरूप उत्पन्न होने वाली समस्याओं और उनके निवारण के उपायों पर चर्चा कीजिए।

इकाई 9 पर्यावरण संरक्षण नीति एवं जलवायु परिवर्तन (Environment Protection Policy and Climate Change)

9.1 प्रस्तावना (Introduction)

9.2 उद्देश्य (Objectives)

9.3 पर्यावरण संरक्षण नीति (Environment Protection Policy)

9.3.1 पर्यावरण संरक्षण का अर्थ (Meaning of Environment Protection)

9.3.2 पर्यावरण संरक्षण नीति की आवश्यकता (Need for Environment Protection Policy)

9.3.3 पर्यावरण संरक्षण नीति के उद्देश्य (Objectives of Environmental Protection Policy)

9.3.4 पर्यावरण संरक्षण नीतियाँ (Environmental Protection Policy)

9.4 जलवायु परिवर्तन (Climate change))

9.4.1 जलवायु परिवर्तन के संभावित प्रतिकूल प्रभाव (Potential Adverse Effects of Climate Change)

9.4.2 जलवायु परिवर्तन सम्बन्धी अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास (International Efforts on Climate Change)

9.5 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

9.6 सारांश (Summary)

9.7 शब्दावली (Glossary)

9.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answers to Practice Questions)

9.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

9.10 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

9.11 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

9 .1 प्रस्तावना (Introduction)

इस अध्याय में हम पर्यावरण संरक्षण नीति का अर्थ, रूपरेखा और रणनीति को समझेंगे। हम जानेंगे कि भारत में पर्यावरण संरक्षण का महत्व क्या है एवं यह हमारे जीवन को किस प्रकार से प्रभावित करता है। जलवायु परिवर्तन की अवधारणा को भी जानेंगे साथ ही देखेंगे कि जलवायु परिवर्तन तथा पर्यावरण संरक्षण के लिए राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर किए गए प्रयासों का मूल्यांकन किस प्रकार किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, हम पर्यावरण संरक्षण नीति की आवश्यकता को भी समझेंगे और इसके विभिन्न पहलुओं की चर्चा करेंगे।

इस अध्याय में हम देखेंगे कि पर्यावरण संरक्षण नीति एक संरचित दृष्टिकोण है जिसका उद्देश्य प्राकृतिक संसाधनों के सतत उपयोग और उनके संरक्षण को सुनिश्चित करना है। यह नीति प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन और पर्यावरणीय क्षति को रोकने की दिशा में काम करती है ताकि पृथ्वी के पर्यावरण तंत्र की स्थिरता बनाए रखी जा सके। इसके तहत भौतिक और जैविक घटकों के संरक्षण पर ध्यान केंद्रित किया जाता है, जिसमें जल, जलवायु, मृदा, पेड़-पौधे, जन्तु और सूक्ष्म जीव शामिल हैं।

हम इस बात पर भी ध्यान करेंगे कि जनसंख्या वृद्धि, औद्योगिक प्रगति और उपभोक्तावादी जीवनशैली के कारण किस प्रकार पर्यावरणीय संकट उत्पन्न हुआ हैं। इस अध्याय में हम पर्यावरणीय क्षति की पहचान, उसके पुनर्स्थापन और भविष्य की पीढ़ियों के लिए संसाधनों की सुरक्षा की दिशा में उठाए गए कदमों की भी चर्चा करेंगे। इसके अतिरिक्त, हम जलवायु परिवर्तन और पर्यावरण संरक्षण के लिए अपनाई गई अंतर्राष्ट्रीय नीतियों और कार्यक्रमों का मूल्यांकन करेंगे और देखेंगे कि वे हमारे पर्यावरण की रक्षा में कितना सहायक हैं।

9.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप-

- ✓ पर्यावरण संरक्षण नीति का अर्थ, रूपरेखा एवं रणनीति के विषय में जान सकेंगे।
- ✓ भारत में पर्यावरण संरक्षण का महत्व को समझ सकेंगे।
- ✓ जलवायु परितर्वन की अवधारणा को जान सकेंगे।
- ✓ जलवायु परिवर्तन तथा पर्यावरण संरक्षण हेतु राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय प्रयासों का मूल्यांकन करने में सक्षम हो सकेंगे।
- ✓ पर्यावरण संरक्षण नीति की आवश्यकता को समझ सकेंगे।

9.3 पर्यावरण संरक्षण नीति (Environment Protection Policy)

पर्यावरण संरक्षण नीति एक संरचित दृष्टिकोण है जो प्राकृतिक संसाधनों के सतत उपयोग और उनके संरक्षण को सुनिश्चित करता है। इसका मुख्य उद्देश्य है प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन और पर्यावरणीय क्षति को रोकना ताकि पृथ्वी के पर्यावरण तंत्र की स्थिरता बनाए रखी जा सके। यह नीति भौतिक और जैविक घटकों के संरक्षण पर ध्यान केंद्रित करती है जिसमें जल, जलवायु, मृदा, पेड़-पौधे, जन्तु और सूक्ष्म जीव शामिल हैं। सांस्कृतिक और सामाजिक तत्व भी इस नीति का हिस्सा हैं जिसमें मानव निर्मित सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक परिस्थितियाँ शामिल होती हैं।

पर्यावरण संरक्षण नीति का विकास जनसंख्या वृद्धि, औद्योगिक प्रगति और उपभोक्तावादी जीवनशैली के कारण उत्पन्न हुए पर्यावरणीय संकटों को ध्यान में रखते हुए किया गया है। यह नीति पर्यावरणीय क्षति की पहचान, उसके पुनर्स्थापन और भविष्य की पीढ़ियों के लिए संसाधनों की सुरक्षा की दिशा में काम करती है। इसमें प्राकृतिक आपदाओं और प्रदूषण के खिलाफ ठोस कार्यक्रमों की शुरुआत, जैसे कि 1992 के रियो पृथ्वी सम्मेलन और भारत में 1986 का पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, शामिल हैं। इस नीति के तहत, सतत विकास और वैकल्पिक विकास की अवधारणाओं को अपनाया जाता है जिससे संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग और उनका संरक्षण सुनिश्चित हो सके। वैश्वीकरण और बढ़ती उपभोक्तावादी संस्कृति के संदर्भ में, यह नीति पर्यावरणीय समस्याओं को हल करने के लिए एक समग्र दृष्टिकोण प्रदान करती है।

9.3.1 पर्यावरण संरक्षण का अर्थ (Meaning of Environment Protection)

वास्तव में पर्यावरण एक व्यापक अवधारणा है जिसके अन्तर्गत हमारे आस-पास समस्त परिवेश तथा उसके घटक सम्मिलित होते हैं। सामान्य रूप से पर्यावरण को प्रकृति का समानार्थक समझा जाता है इसके अन्तर्गत सभी भौतिक एवं जैविक घटक सम्मिलित होते हैं। भौतिक तत्वों में जल, जलवायु, मृदा, शैल तथा खनिज संसाधन आदि आते हैं वहीं जैविक तत्वों में पेड़-पौधे, जन्तु तथा सूक्ष्म जीव आते हैं। इसके अतिरिक्त पर्यावरण के सांस्कृतिक तत्वों में वे मानव द्वारा निर्मित सामाजिक, राजनैतिक तथा आर्थिक परिवेश को शामिल किया जाता है।

चूँकि आज पर्यावरण का संकट मानव के क्रियाकलापों से गहरा रहा है। अतः पर्यावरण के सभी घटकों के संरक्षण की आवश्यकता पृथ्वी के अस्तित्व हेतु अपरिहार्य है। पर्यावरण के संरक्षण से यह तात्पर्य है कि उसका सार्थक, उचित एवं नियोजित उपयोग सुनिश्चित करना है। पर्यावरण को क्षरण से सुरक्षित करते हुए क्षरण होने पर उसका पुर्नस्थापन करने की भरपूर चेष्टा करना। अत: पर्यावरण तथा प्राकृतिक संसाधनों का अभीष्ट प्रयोग सुनिश्चित करना पर्यावरण संरक्षण में किसी भी परिस्थिति व समय में विद्यमान जनसंख्या तथा उसका जीवन स्तर, तकनीकी प्रगति, आर्थिक एवं सामाजिक पारिस्थितियाँ अभीष्ट उपयोग (Intended Use) को निर्धारित करती हैं। इस प्रक्रिया में भविष्य हेतु पर्यावरण सुरक्षा तथा उसके संसाधनों सातत्य (Continuum) निहित होता है।

9.3.2 पर्यावरण संरक्षण नीति की आवश्यकता (Need For Environment Protection Policy)

पिछले सौ वर्षों में तीव्र जनसंख्या वृद्धि, आर्थिक, औद्योगिक और तकनीकी प्रगति तथा उपभोक्तावादी जीवनशैली के कारण प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन हुआ है, वहीं दूसरी ओर बढ़ते प्रदूषण के कारण संवेदनशील पर्यावरण तंत्र पर संकट गहराता जा रहा है। पुस्तक **'लाईफ एण्ड डैथ ऑफ प्लैनेट अर्थ'** में यह स्पष्ट किया गया कि जनसंख्या विस्फोट, तकनीकी प्रगति, औद्योगिक क्रान्ति तथा भौतिकवादी जीवन शैली के कारण पृथ्वी के प्रचुर जैव-अजैव संसाधनों का अवनयन हो रहा है।

दो सौ वर्ष पूर्व **सर रॉबर्ट थॉमस माल्थस (Sir Robert Thomas Malthus)** ने यह भविष्य वाणी की थी कि यदि जनसंख्या पर रोकथाम ना लगायी गयी तो प्रकृति आपदाओं जैसे बाढ़, अकाल आदि से जनसंख्या नियंत्रित होगी। क्लब ऑफ रोम (Club of Rome) के अर्थशास्त्रियों ने 60 के दशक में प्रकाशित **'वृद्धि की सीमायें' (The Limits to Growth)** नामक रिर्पोट यह स्पष्ट किया कि जनसंख्या अर्थशास्त्रियों के बोझ को औद्योगीकरण, प्रदूषण, भोजनोत्पादन तथा संसाधन ह्रास की दुगुनी वृद्धि से पृथ्वी पर निरन्तर बोझ बढ़ रहा है जिससे आने वाले भविष्य में आर्थिक प्रगति अवरूद्ध हो जाएगी।

1992 में रियो (Rio) में हुये पृथ्वी सम्मेलन (Earth Summit) में आर्थिक विकास के अंधाधुन्ध प्रयासों के फलस्वरूप प्राकृतिक पर्यावरण को होने वाली अपूरणीय क्षति (Irreparable damage) के प्रति चेतना का विकास तथा ठोस कार्यक्रमों को क्रियान्वित किया गया। भारत में भी 70 तथा 80 के दशक में होने वाले पर्यावरणीय आंदोलनों के फलस्वरूप पर्यावरणीय संरक्षण के अभियान को नयी ऊर्जा मिली, प्राकृतिक तथा मानव जनित आपदाओं जैसे भोपाल गैस काण्ड के फलस्वरूप भारत में **पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1986** पारित किया गया। पर्यावरण के संरक्षण एवं संवर्धन हेतु केंद्रक अभिकरण (Nodal Agency) के रूप में वन तथा पर्यावरण मंत्रालय की स्थापना 1985 वर्ष में की गयी।

भौतिकवादी प्रगति से एक ओर जहाँ आर्थिक असमानता में वृद्धि हुयी वही पर्यावरण संकट निरन्तर गहराने से वैश्विक जनमत द्वारा पर्यावरणीय संरक्षण के अनुरूप विकास प्रक्रिया अपनाने का प्रयास आरम्भ होने लगा। इस सन्दर्भ में संयुक्त राष्ट्र के 1974 में कोकोयोक (Cocoyoke) (मैक्सिको) उद्घोषणा में यह स्वीकार करना पड़ा कि *'विकास का उद्देश्य वस्तुओं की मात्रात्मक वृद्धि नहीं बल्कि*

मनुष्य का विकास होना चाहिए' तत्पश्चात् मानव केन्द्रित विकास (human centered development), **'वैकल्पिक विकास', 'एकीकृत विकास'** जैसे पर्यावरण संरक्षण के अनुकूल विकास लोकप्रिय होने लगे परन्तु शक्ति-समृद्धि एवं विकास की होड़ के कारण संसाधनों के अधिकतम दोहन करके हमेशा नयी प्रौद्योगिकी के सहारे, उपभोक्ता पोषित आर्थिक संवृद्धि (Consumer driven economic growth) की प्रक्रिया विशेष तौर पर विकसित देशों द्वारा अपनाने से विश्व जनमानस के समक्ष पर्यावरणीय संकट जैसे जलवायु परिवर्तन, ओजोन परत क्षरण, मरुस्थलीयकरण, जल संकट आदि समस्यायें गहराने लगीं हैं ।

भारत में पर्यावरण संकट बहुआयामी चुनौती के तौर पर गहरा रहा है। जनसंख्या का बोझ, सामाजिक- आर्थिक असमानता, गरीबी, बेरोजगारी, स्वास्थ्य एवं शिक्षा के स्तर का अपेक्षित रूप से गुणवत्ता परक न होना तथा ऊपर से आर्थिक विकास का आम जनमानस के जीवन यापन की जरूरतों ने पर्यावरण समस्याओं को और भी जटिल बना दिया है। वैश्वीकरण के दौर में बढते बाजारवाद तथा उपभोक्तावादी संस्कृति ने पर्यावरणीय समस्याओं में नये आयामों को भी जोड़ दिया है।

9.3.3 पर्यावरण संरक्षण नीति के उद्देश्य (Objectives of Environmental Protection Policy)

भारत में पर्यावरण संरक्षण के संदर्भ में नीति तथा कार्यक्रम प्रथम पंचवर्षीय योजना से ही आरम्भ किये गये थे। समय के साथ-साथ इनमें संशोधन तथा परिवर्तन किया जाता रहा है। संक्षेप में पर्यावरण संरक्षण नीति के उद्देश्य निम्नलिखित हैं -

1. पारिस्थितिकीय संतुलन के संरक्षण और पुर्नस्थापना द्वारा पर्यावरण संतुलन को बनाए रखना।
2. देश के प्राकृतिक संसाधनों जैसे जल,भूमि, वन, खनिज आदि के संरक्षण को सुनिश्चित करते हुए उनके उचित दोहन तथा समुचित प्रबन्धन को प्रोत्साहित करना।
3. सभी प्रकार के प्रदूषणों जल, वायु, मृदा आदि की प्रभावी रोकथाम करते हुए पर्यावरण सुरक्षा को सुनिश्चित करना।
4. पर्यावरण संरक्षण हेतु अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग को विकसित करना तथा इस सन्दर्भ में अन्तर्राष्ट्रीय समझौतों का अनुपालन सुनिश्चित करना।
5. पर्यावरण पर प्रमुख विकास परियोजनाओं के कार्यान्वयन के प्रभाव का मूल्यांकन करना।
6. पर्यावरण संरक्षण में आम नागरिकों, वैज्ञानिकों, निजी क्षेत्र, उद्योग समूह, सामाजिक संगठन, शिक्षण संस्थान आदि समेत समस्त हित धारकों की भागीदारी को प्रोत्साहन करना।
7. पर्यावरण संरक्षण को देखते हुए सतत, वैकल्पिक तथा अविच्छन्न विकास की अवधारणा को स्थापित करना।
8. पर्यावरण संरक्षण के क्षेत्र में शिक्षा, जागरुकता तथा अनुसंधान को प्रोत्साहित किया जाएगा।
9. पर्यावरण संरक्षण के साथ प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर स्थानीय निवासियों व आदिवासियों (जैसे वनों पर निर्भर) के विकास के अधिकार तथा आजीविका की सुरक्षा को सुनिश्चित करना।

9.3.4 पर्यावरण संरक्षण नीतियाँ (Environmental Protection Policies)

भारत में पर्यावरण संरक्षण के सन्दर्भ में नीति निर्माण तथा क्रियान्वयन हेतु नोडल संस्था वन तथा पर्यावरण मंत्रालय है। इस कार्य को वह अन्य सहयोगी मंत्रालय तथा प्रशासनिक विभागों के माध्यम से क्रियान्वित करते हैं। पर्यावरण संरक्षण हेतु राष्ट्रीय पर्यावरण नीति 2006 के साथ-साथ देश में पर्यावरण के विभिन्न घटकों के सम्बन्ध में राष्ट्रीय जल नीति, राष्ट्रीय कृषि नीति, राष्ट्रीय जनसंख्या नीति आदि का निर्माण किया गया है। संक्षेप में पर्यावरण के महत्वपूर्ण घटकों तथा संसाधनों जैसे जल, मृदा, खनिज, ऊर्जा आदि के सन्दर्भ में नीतियों तथा कार्यक्रमों को क्रियान्वित किया जा रहा है। पर्यावरण संरक्षण नीति के सम्बन्ध में इन सभी का विश्लेषण निम्न तौर पर किया गया है

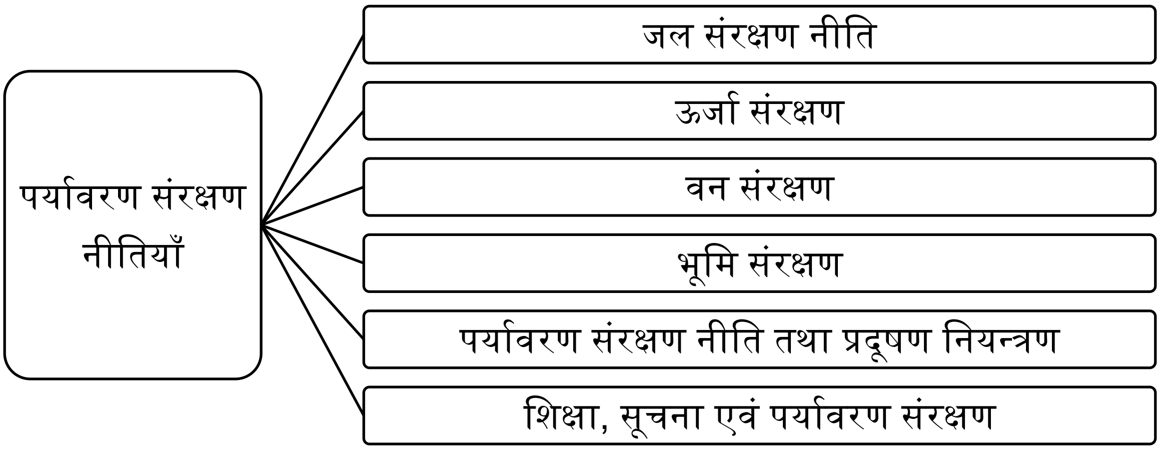

A) जल संरक्षण नीति (Water Conservation Policy)

राष्ट्रीय जल संसाधन परिषद् ने अप्रैल 2002 में राष्ट्रीय जल का नीति निर्माण किया। जिसका मुख्य उद्देश्य जल संसाधनों का कुशल संरक्षण तथा विकास है। इस नीति के विशिष्ट लक्षण निम्नलिखित हैं -

1. जल संसाधनों का नियोजन, विकास और प्रबन्धन राष्ट्रीय दृष्टिकोण से किये जाने की आवश्यकता है।
2. जल से सम्बन्धित सुविकसित सूचना प्रणाली राष्ट्रीय स्तर पर सृजित की जाएगी।
3. एकीकृत जल संसाधन विकास तथा उपलब्ध भूमिगत तथा सतही जल के सर्वोत्तम उपयोग प्रबन्धन पर जोर दिया जाएगा।
4. उपयोग योग्य जल संसाधनों के अधिक बढ़ाने हेतु अन्तर- बेसिन स्थानांतरण, भूजल का कृत्रिम पुनर्भरण और खारे या समुद्र के पानी को लवण मुक्त करने जैसी गैर पारंपरिक विधियों के साथ-साथ छत पर वर्षा जल संचयन जैसी पारंपरिक जल संरक्षण प्रथाओं को अपनाने की आवश्यकता है।
5. जल का वितरण प्राथमिकता के आधार पर किया जाएगा, जहाँ प्रथम प्राथमिकता पेयजल को तथा उसके पश्चात् सिंचाई, बिजली, कृषि उद्योगों और गैर कृषि उद्योगों, अन्वेषण और अन्य उपयोगों में इसी क्रम में किया जाना चाहिए।
6. जल परियोजनाओं के निर्माण एवं प्रबन्धन में लाभान्वितों तथा हितधारकों समेत निजी क्षेत्र की भागीदारी को प्रोत्साहित किया जाएगा।

जल संरक्षण की नीति को क्रियान्वित करने हेतु राष्ट्रीय स्तर पर राष्ट्रीय जल बोर्ड, राष्ट्रीय जल संसाधन परिषद्, केन्द्रीय जल आयोग और केन्द्रीय भूजल बोर्ड जैसे महत्वपूर्ण संस्थागत प्रयास किये गये हैं। राष्ट्रीय नदी संरक्षण निदेशालय का उद्देश्य राष्ट्रीय संरक्षण योजना को लागू करना है जिससे प्रदूषण की रोकथाम के साथ-साथ पानी की गुणवत्ता भी बनी रहे। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत गंगा, यमुना समेत देश की उपनदियों को शामिल किया गया है।

B) ऊर्जा संरक्षण (Energey Conservation)

जलवायु परिवर्तन तथा हरित गैस प्रभाव पर हुए क्योटो प्रोटोकॉल तथा इसी संदर्भ में गठित किये गये अन्तर सरकारी पैनल के अनुसार हरित गैसों के उत्सर्जन में सबसे बड़ा कारण जीवाश्म ईंधन का दहन एवं निर्वनीकरण रहा है। इन दोनों का प्रत्यक्ष संबध ऊर्जा की आवश्यकताओं से है। अत: पर्यावरण के संरक्षण हेतु स्वच्छ, वैकल्पिक ऊर्जा के संसाधनों का विकास व ऊर्जा संरक्षण आवश्यक है। योजना आयोग द्वारा गठित **कीर्ति पारेख समिति** के नेतृत्व में गठित **एकीकृत ऊर्जा नीति** पर विशेषज्ञ कमेटी के स्वच्छ ऊर्जा का न्यूनतम लागत पर विकास आज भारत के सामने सबसे बड़ी चुनौती है एवं

यह और भी महत्वपूर्ण हो जाता है समिति की संस्तुतियों पर योजना आयोग ने कार्ययोजना तैयार की जिसके मुख्य लक्षण निम्नवत् हैं –

1. ऊर्जा क्षमता तथा ऊर्जादक्षता की दिशा में निरन्तर प्रयास किये जाए।
2. घरेलू स्तर पर ऊर्जा के संसाधनों (कोयला, तेल, गैस) का उत्पादन अधिकतम किया जाए।
3. हाइड्रोकार्बन के विदेशी स्रोतों के दोहन तथा पाईपलाईन के माध्यम से भारत लाने हेतु राजनयिक प्रयास किये जायें।
4. लागत प्रभावी तथा सुलभ नवीकरणीय ऊर्जा के संसाधनों के विकास हेतु अनुसंधान तथा विकास को अधिक तीव्र किया जाए इसके अन्तर्गत नाभिकीय ऊर्जा, जल विद्युत ऊर्जा, सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, आदि की क्षमता का आकलन कर उसका दोहन किया जाए।
5. बायोमास तथा बायोडीजल के उत्पादन, उपयोग तथा उनके आर्थिक सामाजिक लाभ-लागत पक्षों के आकलन हेतु पायलेट परियोजनाओं को आरम्भ किया जाए।
6 ग्रामीण समुदाय की ऊर्जा आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु पुन:प्रयोग किये जाने वाले गैर परम्परागत स्रोतों का विकास किया जाएगा।

ऊर्जा संरक्षण की नीति को क्रियान्वित करने हेतु राष्ट्रीय स्तर पर ऊर्जा संरक्षण अधिनियम, ऊर्जा दक्षता प्रणाली, ऊर्जा संरक्षण पर राष्ट्रीय अभियान, इण्डिया हाईड्रोकार्बन विजन, नयी अन्वेषण लाईसेंस नीति, भारतीय पुनरोपयोगी ऊर्जा विकास ऐजेन्सी, राष्ट्रीय बायोगैस विकास कार्यक्रम और राष्ट्रीय उन्नत चूल्हा कार्यक्रम जैसे महत्वपूर्ण नीतिगत प्रयास किये गये हैं।

C) वन संरक्षण (Forest Conservation)

भारत विश्व के चुनिदा देशों में से एक है जहाँ 1894 से ही वन नीति लागू है। इस नीति को 1952 तथा 1988 में संशोधित किया गया था। संशोधित वन नीति का मुख्य आधार वनों की सुरक्षा, संरक्षण तथा विकास है। इस नीति तथा वन एवं वन्य जीव संरक्षण से संबन्धित अधिनियमों का अध्ययन हम पूर्व की ईकाईयों में कर चुके हैं। वनों के संरक्षण के सन्दर्भ में अन्य महत्वपूर्ण कार्यक्रम जोकि पर्यावरण संरक्षण के दृष्टिकोण से उल्लेखनीय है निम्न प्रकार से हैं -

1. जंगलों में आग की रोकथाम और प्रबन्धन एवं वन क्षेत्र में बुनियादी ढाँचे में कमियों को दूर करने हेतु भारत के सभी राज्यों तथा केन्द्र शासित प्रदेशों में समन्वित वन सुरक्षा योजना को लागू किया गया है।
2. देश में वनोरोपण पारिस्थितिकी संतुलन तथा पारिस्थितिकीय विकास की गतिविधियों को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से राष्ट्रीय वनोरोपण और पारिस्थितिकी विकास बोर्ड की स्थापना वर्ष 1992 में की गयी।
3. वनों के संरक्षण तथा संवर्द्धन हेतु राष्ट्रीय वनोरोपण तथा पारिस्थितिकी विकास बोर्ड द्वारा राष्ट्रीय वनोरोपण कार्यक्रम को क्रियान्वित किया जा रहा है।
4. गाँवों में स्थानीय समाज की भागीदारी के माध्यम से वन प्रबन्धन समितियों के गठन के द्वारा वनों के प्रबन्धन हेतु संयुक्त वन प्रबन्धन कार्यक्रम का आरम्भ देश में 1998 में किया गया।
5. हरित भारत हेतु राष्ट्रीय मिशन का निर्मित किया गया है जिसका लक्ष्य कार्बन सिंक जैसे पारिस्थितिकीय सेवाओं को बढ़ावा देना है तथा देश में वन आवरण को 23% से बढ़ाकर 33% करना है।

D) भूमि संरक्षण (Land Conservation)

जनसंख्या तथा आर्थिक विकास की आवश्यकता का दबाव भूमि संसाधन पर पड़ने से भूमि गुणवत्ता तथा उत्पादकता प्रभावित हुई है अपितु भूमि अवनयन की समस्यायें बढ़ने लगी है। इनमें भूमि का बंजर, अम्लीय, लवणीय, अनुत्पादक तथा ऊसर विस्तार होना प्रमुख है। भूमि को पर्यावरण का महत्वपूर्ण घटक मानते हुए प्रथम पंचवर्षीय योजना से इसके संरक्षण हेतु प्रयास आरम्भ किये गये

एवं समय के साथ इन भूमि संरक्षण कार्यक्रमों में सुधार एवं परिवर्तन किया जाता रहा है। भूमि संरक्षण कार्यक्रमों तथा नीति के मुख्य लक्षण निम्न रहे हैं –

1. भूमि कटाव की प्रक्रिया व भूमि ढहने की गति धीमी करना।
2. भूमि की नमी व जल प्राप्ति की आपूर्ति सुनिश्चित करना।
3. फसलों के चक्रीकरण मिश्रित खेती तथा जैव उर्वरकों, जैव अवशिष्टों के प्रयोग माध्यम से भूमि की आन्तरिक उत्पादकता बनाये रखना।
4. लगातार आने वाली बाढ़ तथा सूखे से बचाव हेतु उपाय करना।
5. अधिक से अधिक भूमि का उपयोग करते हुए रोजगार के अवसरों को बढ़ाना।
6. सामुदायिक निकासी प्राणी एवं भूमि सुधार को लागू करना।
7. भूमि का सर्वेक्षण कर सार्वजनिक तथा निजी भूमि पर वृक्षारोपण करना।
8. अम्लीय लवणीय तथा क्षारीय भूमि के सुधार हेतु प्रयास करना।

E) पर्यावरण संरक्षण नीति तथा प्रदूषण नियन्त्रण (Environmental Protection Policy and Pollution Control)

पर्यावरण संरक्षण की दिशा में वर्तमान समय में प्रदूषण बहुत गम्भीर संकट बन कर उभरा है। वायु, जल, भूमि एवं ध्वनि आदि सभी क्षेत्रों में होने वाले प्रदूषण के नियन्त्रण हेतु पर्यावरण मंत्रालय द्वारा 1992 में एक नीति को गठित किया गया। इस नीति के मुख्य उद्देश्य पर्यावरण संरक्षण हेतु नियम कानूनों का प्रभावी क्रियान्वयन सुनिश्चित करना एवं प्रदूषण रोकथाम की गतिविधियाँ तथा प्रौद्योगिकी के प्रयोग को प्रोत्साहित करते हुए औद्योगिक अपशिष्टों के निपटान से पूर्व उनका पुर्नचक्रण तथा शुद्धिकरण सुनिश्चित किया जाए व वाहनों से होने वाले उत्सर्जन हेतु मानकों को व्यापक एवं प्रभावी बनाया जाए।

देश में पर्यावरण संरक्षण हेतु **1986 में पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम** गठित किया गया है। इस अधिनियम के अनुसार **जल (प्रदूषण-नियन्त्रण व रोकथाम) अधिनियम 1974** तथा **वायु (प्रदूषण नियन्त्रण व रोकथाम) अधिनियम 1981** के अनुसार प्रदूषण उत्पन्न करने वाली लाईसेंस की इच्छुक इकाईयों हेतु पर्यावरण सम्बन्धी वक्तव्य पेश करना अनिवार्य किया गया है।

F) शिक्षा, सूचना एवं पर्यावरण संरक्षण (Education, Information and Environmental Protection)

पर्यावरण संरक्षण हेतु देश में जागरुकता तथा सभी हित धारकों की भागीदारी हेतु पर्यावरण संरक्षण के सन्दर्भ में शिक्षा, अनुसंधान तथा प्रशिक्षण आवश्यक है। पर्यावरण संबंधी शिक्षा, जागरुकता और प्रशिक्षण हेतु एक महत्वपूर्ण योजना को 1983-84 में लागू किया गया था। इस योजना में समयानुसार संशोधन किये जाते रहे हैं। इस योजना के माध्यम से पर्यावरण एवं वन मंत्रालय पर्यावरण की गुणवत्ता सुधारने व पर्यावरण संरक्षण हेतु क्षमताओं तथा योग्यताओं को विकसित करने का प्रयास कर रहा है।

पर्यावरण तथा वन मंत्रालय उक्त योजना की सफलता हेतु संगोष्ठियों, कार्यशालाओं, प्रशिक्षण कार्यक्रमों एवं पारिस्थितिकी क्लबों का आयोजन करता है। मंत्रालय द्वारा पर्यावरण संरक्षण व प्रबन्धन की दिशा में शिक्षा व अनुसंधान को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य हेतु अनेक प्रकार की फैलोशिप तथा पुरस्कारों के स्थापित किया गया है। मंत्रालय पर्यावरण संरक्षण तथा संवर्द्धन के क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग विकसित करने का प्रयास कर रहा है।

पर्यावरण संरक्षण के उद्देश्य से पर्यावरण मंत्रालय द्वारा पर्यावरण सूचना प्रणाली को गठित कर योजनागत कार्यक्रम के रूप में स्थापित किया गया है। इस प्रणाली के माध्यम से पर्यावरण के सन्दर्भ में अद्यतन सूचना को एकत्र, आकलन तथा भण्डारण कर एक व्यापक सूचना नेटवर्क को तैयार किया है। वन तथा पर्यावरण मंत्रालय इस नेटवर्क प्रणाली के सभी भागीदारों की गतिविधि को समन्वित करता

है। इस प्रणाली को एनविस प्रणाली (Environmental Information System-ENVIS) भी कहते हैं।

9.4 जलवायु परिवर्तन (Climate Change)

जलवायु के निर्धारक संघटकों जैसे वर्षा, आर्दता, तापमान सौर विकरणों, वनस्पतियों, भूआकृतियों तथा महासागरीय कारकों में परिवर्तन होने से धरातल के मौसमचक्रों में नियमित परितर्वन होता है। मौसम चक्रों में होने वाले इन्हीं अनियमित परिवर्तनों को जलवायु परितर्वन स्थानीय, क्षेत्रीय तथा वैश्विक स्तर पर परिलक्षित होता है तथा यह प्रक्रिया पर्यावरणीय असंतुलन के निरन्तर जारी होने से फलीभूत होती है।

जलवायु परिवर्तन हेतु प्राकृतिक तथा मानवीय कारक दोनों उत्तरदायी होते हैं। प्राकृतिक कारकों में खगोलीय एवं धरातलीय कारकों समावेश होता है। खगोलीय कारकों में पृथ्वी के अक्ष तथा कक्षीय स्थिति में परितर्वन से, सूर्य की सतह पर उपस्थित काले धब्बों (सन स्पॉट) में परिवर्तन, धरती की सतह पर उल्कापात होने से धरती पर प्राप्त होने वाले सौर विकरण में परितर्वन होने से जलवायु परिवर्तन होता है।

जलवायु परिवर्तन के धरातलीय कारकों की व्याख्या प्लेट टेक्टानिक (Plate Tectonics) सिद्धान्तों के माध्यम से होती है। इस सिद्धान्त के अनुसार समस्त महाद्वीप तथा महासागर प्लेटों के ऊपर अवस्थित हैं जोकि सापेक्षिक रूप से निरन्तर गतिशील रहती है जिनके आपस में टकराने एवं रगड़ खाने से महाद्वीपों, महासागरों की ज्यामिति एवं स्थिति में परिर्वतन होने के साथ-साथ मरुस्थलों, घाटियों व पर्वतों के निर्माण तथा ज्वालामुखीय घटनायें घटित होती हैं एवं जिनसे जलवायु प्रभावित होती है। हिमालय पर्वत ने भारत की जलवायु को निर्धारित किया है। ज्वालामुखी विस्फोट से गर्द, गुब्बार, लावा तथा गैसों के निस्तृत होने तथा आकाश में छा जाने से जलवायु के ऊपर प्रभाव पड़ता है।

मानवीय कारकों जैसे जनसंख्या के विस्फोट, औद्योगीकरण कृषि विस्तार, परिवहन एवं यातायात सुविधाओं में अंधाधुंध वृद्धि, भौतिकवादी जीवनशैली तथा बढ़ते उपभोक्तावाद के कारण प्राकृतिक संसाधनों का अतिदोहन एवं व्यापक जलवायु प्रदूषण के कारण व्यापक पर्यावरण असंतुलन पैदा हो गया। इसके कारण हरित गैसों की वायु मण्डल में सांद्रता बढ़ने लगी है। हरित गैस पृथ्वी पर ऊष्मा व तापमान के नियमन हेतु आवश्यक होती है परन्तु इनकी आवश्यकता से अधिक वृद्धि से पृथ्वी का तापक्रम में अत्यधिक वृद्धि होने से वैश्विक तापवृद्धि की समस्या (Problem of Global Warming) पैदा हो जाएगी। जलवायु परिवर्तन पर बने अन्तर सरकारी पैनल (आई.प.सी.सी.) के अनुसार पिछले सौ वर्षों में विश्व के औसत तापक्रम में 0.75 डिग्री सेल्शियस की वृद्धि हुई है तथा यह वृद्धि सन् 2100 के अन्त तक आते आते 1.4-5.8 डिग्री सेल्शियस के मध्य होने का पूर्वानुमान है।

हरित गैसों के उत्सर्जन जैसे कार्बन डाई ऑक्साइड का सबसे बड़ा कारण वनों का विनाश, जीवाश्म ईंधन के अत्यधिक दोहन, लकड़ियों को जलाने, औद्योगिक प्रदूषण आदि रहे हैं। मीथेन गैस का उत्सर्जन कार्बनिक पदार्थों व ईंधन को जलाने, कार्बनिक पदार्थों के सड़ने-गलने खदानों से, धान के खेत तथा जुगाली करने वाले जानवरों द्वारा बढ़ रहा है। अन्य गैसों जैसे हाइड्रो फ्लोरो कार्बन, पर क्लोरो फ्लारो कार्बन का प्रयोग सौन्दर्य प्रसाधनों, प्रशीतकों, फोम, अग्निशामकों, विलायकों, कुचालकों ट्रान्सफ़ॉर्मरों, सर्किट ब्रेकरों जैसे विद्युत यांत्रिक संयन्त्रों में किया जाता है।

9.4.1 जलवायु परिवर्तन के संभावित प्रतिकूल प्रभाव (Potential Adverse Effects of Climate Change)

जलवायु परिवर्तन का प्रभाव खाद्यान्न, कृषि, रोजगार, विकास, स्वास्थ्य पर्यावरण आदि क्षेत्र में इतना व्यापक पड़ सकता है जिससे सम्पूर्ण सृष्टि के अस्तित्व पर ही प्रश्न चिन्ह लग जाए। जलवायु परिवर्तन के संभावित प्रतिकूल प्रभावों का आकलन निम्न प्रकार से हैं -

1. जलवायु परिवर्तन तथा वैश्विक तापवृद्धि से ग्लेशियर पिघलने एवं सागरीय जल स्तर बढ़ने, तटवर्ती क्षेत्रों एवं द्वीपों के जलमग्न होने का खतरा बढ़ जाएगा। इसके परिणामस्वरुप अत्यधिक वर्षा, बाढ़, चक्रवात, सूखा जैसे प्राकृतिक आपदाओं के रूप में सामने आ सकता है।
2. जल स्रोतों के विघटन, ग्लेशियरों के पिघलने, प्राकृतिक वनस्पतियों के विनाश से जल संकट के साथ सदानीरा नदियों जैसे गंगा का अस्तित्व ही संकट में पड़ जाएगा।
3. बाढ़, अत्यधिक वर्षा, जल भराव तथा जल स्तर बढ़ने से जल जनित बीमारियों व महामारियों जैसे मलेरिया, डेंगू आदि खतरा बढ़ने से स्वास्थ्य संकट पैदा हो सकता है।
4. अनियमित मौसम एवं वर्षा, सूखा, बाढ़ आदि से कृषि उत्पादकता ह्रास होने से भुखमरी की समस्या गंभीर हो सकती है।

9.4.2 जलवायु परिवर्तन सम्बन्धी अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास (International Efforts on Climate Change)

जलवायु परिवर्तन तथा जैव विविधता संकट पर अन्तर्राष्ट्रीय चेतना तथा प्रयासों के कारण 1992 में रियो डि जेनेरो (ब्राजील) में पृथ्वी सम्मेलन आयोजित किया गया। इस सम्मेलन में वैश्विक पर्यावरण के समक्ष चुनौतियों जैसे वैश्विक ताप वृद्धि, हरित गैसों का उत्सर्जन, जैव विविधता, वन संरक्षण, गरीबी उन्मूलन एवं पर्यावरण कोष आदि के सन्दर्भ में महत्वपूर्ण निर्णय लिए गए तथा उक्त हेतु अन्तर्राष्ट्रीय समझौतों के लिए एक रूपरेखा तैयार की गयी।

इस रियो सम्मेलन में जलवायु परिवर्तन के सन्दर्भ में व्यापक सहमति बनी तथा उसके पश्चात् जो रूपरेखा निर्मित की गयी उससे ही 1997 में जापान के शहर **क्योटो** में वैश्विक तापवृद्धि तथा जलवायु परिवर्तन के सम्बन्ध में **क्योटो प्रोटोकॉल** का निर्माण किया गया। इस प्रोटोकॉल के अन्तर्गत जलवायु परिवर्तन के लिए उत्तरदायी गैसों जिनमें कार्बन डाई ऑक्साइड, मीथेन, नाइट्रस ऑक्साईड, हाइड्रोक्लोरो कार्बन, क्लोरो फ्लोरो कार्बन तथा सल्फर हेक्सा ऑक्साइड प्रमुख हैं।

यद्यपि क्योटो प्रोटोकॉल को 2002 में जर्मनी में संशोधित तथा 2005 में अंगीकृत किया गया था तथा 191 देश इस समझौते को अनुमादित कर चुके हैं परन्तु वर्तमान समय में इस समझौते को विस्तार करने हेतु वैश्विक प्रयासों में आम सहमति नहीं बन पा रही है। जलवायु परितर्वन के सन्दर्भ में डेनमार्क के कोपनहेगन में कॉप-15 (COP-15) नामक सम्मेलन आयोजित किया गया परन्तु विकसित देश विशेषकर अमेरिका तथा विकासशील देश भारत, चीन, ब्राजील आदि के मध्य ठोस सहमति नहीं बन पाने के कारण कोई सार्थक परिणाम नहीं आ पाया है।

वर्तमान में सर्वाधिक **हरित गैसों के उत्सर्जन में चीन का प्रथम स्थान है परन्तु प्रति व्यक्ति उत्सर्जन में अमेरिका प्रथम स्थान पर है।** भारत द्वारा इस प्रोटोकॉल को 2002 में अंगीकृत किया गया है। जलवायु परिवर्तन तथा हरित गैसों के उत्सर्जन पर नियंत्रण हेतु भारत में व्यापक प्रयास किये गये हैं।

9.5 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. पृथ्वी सम्मेलन.......... आयोजित किया गया। (रियोडि जेनेरो (ब्राजील) **या** दिल्ली)
2. पहली राष्ट्रीय जल नीति का निर्माण में.......... किया गया। (1987 **या** 2002)
3. पर्यावरण शिक्षा केन्द्र की स्थापना कहाँ की गयी है। (चेन्नई **या** अहमदाबाद)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन चुनिये-

1. जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए पेरिस प्रोटोकाल लागू किया गया है।
2. हरित गैस प्रभाव तथा वैश्विक तापवृद्धि हेतु केवल कार्बन डाई ऑक्साईड गैस जिम्मेदार है।

9.6 सारांश (Summary)

इस अध्याय में हमने पर्यावरण संरक्षण नीति के विभिन्न पहलुओं पर ध्यान केंद्रित किया। सबसे पहले, हमने पर्यावरण संरक्षण का महत्व समझा। जलवायु परिवर्तन की अवधारणा को स्पष्ट किया गया और इसके लिए किए गए राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय प्रयासों की समीक्षा की गई।

अध्याय में यह भी बताया गया कि पर्यावरण संरक्षण नीति का मुख्य उद्देश्य प्राकृतिक संसाधनों के सतत उपयोग और उनके संरक्षण को सुनिश्चित करना है। यह नीति भौतिक और जैविक घटकों के संरक्षण पर ध्यान देती है, जिसमें जल, जलवायु, मृदा, पेड़-पौधे, जन्तु और सूक्ष्म जीव शामिल हैं।

हमने जनसंख्या वृद्धि, औद्योगिक प्रगति और उपभोक्तावादी जीवनशैली के कारण उत्पन्न पर्यावरणीय संकटों की पहचान की और इनके समाधान के लिए उठाए गए कदमों पर चर्चा की। अंत में, जलवायु परिवर्तन और पर्यावरण संरक्षण के लिए अपनाई गई अंतर्राष्ट्रीय नीतियों और कार्यक्रमों का मूल्यांकन किया गया और यह देखा कि ये हमारे पर्यावरण की रक्षा में किस प्रकार सहायक हैं
अत: यदि विश्व को इस संकट के समाधान की तलाश करनी है तो विकसित और विकासशील देशों को एकजुट होकर सार्थक प्रयास करने होंगे।

9.7 शब्दावली (Glossary)

- **मानव विकास (Human Development):** संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम द्वारा 1990 से मानव विकास रिर्पोट जारी की जाती है। जिसमें मानव विकास को शिक्षा, जीवन प्रत्याशा तथा प्रति व्यक्ति आय के द्वारा निर्धारित किया जाता है।
- **नवीकरणीय संसाधन (Renewable Resources):** नवीकरणीय संसाधनों के अन्तर्गत वह संसाधन आते हैं जिनके पुनः चक्रीयकरण के द्वारा उनका पुर्नउपयोग सुनिश्चित किया जा सकता है। जैसे - मृदा, वन, भूमि, जल आदि।
- **बायोमास (Biomass):** इसके अन्तर्गत लकड़ी, कृषि व जैविक अपशिष्ट पदार्थ आते हैं, जिनसे वैज्ञानिक तकनीक द्वारा अधिक एवं प्रदूषण मुक्त ऊर्जा प्राप्त होती है।
- **हाइड्रोकार्बन विजन (Hydrocarbon Vision):** देश में हाइड्रोकार्बन की खोज, उत्पादन, संरक्षण तथा उपयोग को अधिक, विवेकपूर्ण तथा बेहतर तौर तरीकों से करने हेतु एक रणनीतिक कार्यक्रम है।
- **हरित गैस (Greenhouse Gas):** हरित गैस प्रभाव को अंजाम् देने वाली गैसों को हरित गैस कहते हैं। इसके अन्तर्गत कार्बन डाई ऑक्साइड, मीथेन, नाइट्रस ऑक्साइड, क्लोरो फ्लोरो कार्बन, हाइड्रो क्लोरो कार्बन तथा सल्फर हैक्सा क्लोराईड गैसें आती हैं।
- **कार्बन क्रेडिट (Carbon Credit):** कार्बन क्रेडिट का मापन प्रमापीकृत उत्सर्जन इकाई में किया जाता है। विकसित देश अपनी निर्धारित उत्सर्जन कटौती के कुछ अंश को कार्बन क्रेडिट खरीद कर कम करने में कामयाब हो जाते हैं।
- **उत्सर्जन व्यापार (Emission Trading):** चूँकि क्योटो प्रोटोकॉल में उत्सर्जन मानक निश्चित है अतः उत्सर्जन के अंशों को विभिन्न देश आपस में क्रय विक्रय कर सकते हैं।
- **वैश्वीकरण (Globalization):** यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से दुनिया भर की अर्थव्यवस्थाएँ, संस्कृतियाँ और राजनीतिक प्रणाली एक दूसरे के साथ जुड़े हुए हैं।
- **जलवायु परिवर्तन (Climate Change):** यह प्रक्रिया पृथ्वी के मौसम पैटर्न में दीर्घकालिक बदलाव को संदर्भित करती है। जलवायु परिवर्तन के प्रभावों में ग्लोबल वार्मिंग, समुद्र स्तर में वृद्धि, चरम मौसम की घटनाएँ और पारिस्थितिकी तंत्र में परिवर्तन शामिल हैं।
- **एनविस प्रणाली (Environmental Information System-ENVIS):** एनविस का मतलब पर्यावरण सूचना प्रणाली है। भारत सरकार ने निर्णय निर्माताओं, नीति नियोजकों और वैज्ञानिकों को पर्यावरणीय जानकारी प्रदान करने के लिए एक योजना कार्यक्रम के रूप में दिसंबर 1982 में

एनविस की स्थापना की। एनविस का केंद्र बिंदु पर्यावरणीय सूचना संग्रह, संकलन, भंडारण, पुनर्प्राप्ति और प्रसार में राष्ट्रीय प्रयासों को एकीकृत करना है।

- **प्लेट टेक्टोनिक्स सिद्धांत (Plate Tectonics Theory):** एक वैज्ञानिक सिद्धांत है कि पृथ्वी का स्थलमंडल बड़ी टेक्टोनिक प्लेटों से बना है जो 3-4 अरब वर्षों से धीरे-धीरे आगे बढ़ रही हैं।
- **संसाधन सातत्य (Resource Continuum):** वे संसाधन जो कॉर्पोरेट लाभ के लिए आधार प्रदान करते हैं, एक सातत्य तक फैले हुए हैं - एक छोर पर अत्यधिक विशिष्ट से लेकर दूसरे छोर पर बहुत सामान्य तक।
- **वैश्विक तापवृद्धि की समस्या (Problem of Global Warming):** वैश्विक तापवृद्धि के परिणामस्वरूप पर्यावरण में कई गंभीर परिवर्तन हो सकते हैं, जो अंततः मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव डाल सकते हैं। इससे समुद्र के स्तर में भी वृद्धि हो सकती है जिससे तटीय भूमि का नुकसान हो सकता है, वर्षा के पैटर्न में बदलाव हो सकता है, सूखे और बाढ़ का खतरा बढ़ सकता है और जैव विविधता को खतरा हो सकता है।
- **मानव केंद्रित विकास (Human Centric Development):** मानव-केंद्रित विकास एक समग्र दृष्टिकोण है जो निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में उनकी भागीदारी सुनिश्चित करके लोगों और समुदायों के जीवन को बेहतर बनाने पर केंद्रित है। यह मानता है कि विकास केवल आर्थिक वृद्धि या बुनियादी ढांचा परियोजनाओं के बारे में नहीं है बल्कि उन अद्वितीय सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक संदर्भों पर विचार करने के बारे में भी है जिनमें लोग रहते हैं।

9.8 अभ्यास प्रश्न के उत्तर (Answer for Practice Question)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. रियोडि जेनेरो (ब्राजील)   2. 1987   3.अहमदाबाद

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन चुनिये-

1. सत्य   2. असत्य

9.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- सिंह, काशीनाथ जगदीश (2006), ***आर्थिक भूगोल के मूल तत्व***, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर।
- सिन्हा, मेघा (2008), ***पर्यावरण और पारिस्थितिकी तंत्र***, वंदना प्रकाशन, दिल्ली।
- त्रिपाठी रेणु (2008), ***पर्यावरण भूगोल***, ओमेगा पब्लिकेशन, दिल्ली।
- ***जलवायु परितर्वन*** (2010), जागरण वार्षिकी।

9.10 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

- Andriantiatsaholiniaina, L. A., Kouikoglou, V. S., & Phillis, Y. A. (2004). ***Evaluating strategies for sustainable development: fuzzy logic reasoning and sensitivity analysis. Ecological Economics***, 48(2), 149–172. https://doi.org/10.1016/j.ecolecon.2003.08.009
- Bhalachandran, G. (2011). ***Kautilya's model of sustainable development***. Humanomics, 27(1), 41–52. https://doi.org/10.1108/08288661111110169
- Chen, H., & Yada, R. (2011). ***Nanotechnologies in agriculture: New tools for sustainable development***. Trends in Food Science & Technology, 22(11), 585–594. https://doi.org/10.1016/j.tifs.2011.09.004

- Dev, R. (n.d.-a). ***Corporate Social Responsibility (CSR) in Indian Banking Sector: An analytical study of ICICI bank limited***.
- Dev, R. (n.d.-b). ***Corporate Social Responsibility in India: Reaching to Unreached?***
- ***India follows a holistic approach towards its 2030 Sustainable Development Goals (SDGs).*** (n.d.). Retrieved February 13, 2020, from https://pib.gov.in/newsite/PrintRelease.aspx?relid=191192
- Kaygusuz, K. (2012). ***Energy for sustainable development: A case of developing countries. Renewable and Sustainable Energy Reviews***, 16(2), 1116–1126. https://doi.org/10.1016/j.rser.2011.11.013
- Oparaocha, S., & Dutta, S. (2011). ***Gender and energy for sustainable development. Current Opinion in Environmental Sustainability***, 3(4), 265–271. https://doi.org/10.1016/j.cosust.2011.07.003
- Smyth, J. C. (1995). ***Environment and Education: a view of a changing scene. Environmental Education Research***, 1(1), 3–120. https://doi.org/10.1080/1350462950010101

9.11 निबंधात्मक प्रश्न (Essay Type Question)

1. पर्यावरण संरक्षण नीति के अर्थ, घटक बताये तथा पर्यावरण संरक्षण नीति की आवश्यकता और महत्व समझाइये।
2. पर्यावरण संरक्षण नीति के उद्देश्य तथा उसके संबन्ध में विभिन्न अधिनियमों की चर्चा कीजिए।
3. जलवायु परिवर्तन के दुष्परिणामों से पर्यावरण पर आने वाले संकटों का विश्लेषण कीजिए।

इकाई 10 पर्यावरण आध्यात्मिकता और संरक्षण नीतिशास्त्र
(Environmental Spirituality and Conservation Ethics)

10.1 प्रस्तावना (Introduction)

10.2 उद्देश्य (Objectives)

10.3 मानव और पर्यावरण सम्बन्धी अवधारणाएं (Concepts Related to Human and Environment)

10.3.1 नियतिवादी अवधारणा (Deterministic Concept)

10.3.2 सम्भाव्यवादी अवधारणा (Probabilistic Concept)

10.3.3 नव-नियतिवादी अवधारणा (Neo-Deterministic Concept)

10.3.4 स्वैच्छिकवादी अवधारणा (Voluntarist Concept)

10.3.5 आदर्शवादी अवधारणा (Idealistic Concept)

10.3.6 परिस्थिति विज्ञान-संबंधी अवधारणा (Ecology related Concept)

10.4 पर्यावरणीय नीतिशास्त्र (Envirnmental Ethics)

10.4.1 विकासात्मक नीतिशास्त्र (Developmental Ethics)

10.4.2 परिरक्षण नीतिशास्त्र (Preservation Ethics)

10.4.3 संरक्षण नीतिशास्त्र (Conservation Ethics)

10.5 संरक्षण नीतिशास्त्र: सभी संसाधनों का न्यूनतम व्यय ही नैतिकता है। (Conservation Ethics Morality means minimum wastage of all resources.)

10.6 अभ्यास प्रश्न (Practics Questions)

10.7 सांराश (Summary)

10.9 शब्दावली (Glossary)

10.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)

10.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

10.10उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

10.11निबंधात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

10.1 प्रस्तावना (Introduction)

पर्यावरण, आध्यात्मिकता और संरक्षण नीतिशास्त्र का संबंध जटिल और गहरा है। हमारे प्राकृतिक संसाधन ना केवल हमारी भौतिक आवश्यकताओं को पूरा करते हैं बल्कि हमारे आत्मिक और सांस्कृतिक जीवन का भी अभिन्न हिस्सा हैं। जलवायु परिवर्तन और जैव विविधता का ह्रास जैसे पर्यावरणीय संकट हमें यह याद दिलाते हैं कि प्रकृति से हमारा संबंध केवल भौतिक नहीं बल्कि आध्यात्मिक भी है। आध्यात्मिकता हमें यह सिखाती है कि हम प्रकृति के साथ सामंजस्यपूर्ण तरीके से रहकर ही स्थायी सुख और शांति प्राप्त कर सकते हैं। इसी संदर्भ में, संरक्षण नीतिशास्त्र का उद्देश्य न केवल प्राकृतिक संसाधनों की सुरक्षा है बल्कि हमारे धार्मिक और दार्शनिक दृष्टिकोण से प्रकृति के प्रति हमारी जिम्मेदारी को भी समझना है। यह प्रस्तावना हमें यह सोचने पर मजबूर करती है कि पर्यावरणीय संरक्षण की दिशा में उठाए गए कदम हमारी आध्यात्मिक और नैतिक जिम्मेदारियों का एक अनिवार्य हिस्सा हैं।

10.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप -

- ✓ पर्यावरण, आध्यात्मिकता और संरक्षण के बीच के संबंधों की गहराई को समझ सकेंगे
- ✓ संरक्षण नीतिशास्त्र के विभिन्न दृष्टिकोणों का अध्ययन करेंगे और उनके नैतिक और दार्शनिक पहलुओं को समझेंगे।
- ✓ विभिन्न मानव और पर्यावरण संबंधी अवधारणाओं का विश्लेषण करना सीखेंगे और उनकी प्रासंगिकता को जानेंगे।
- ✓ पर्यावरणीय समस्याओं और उनके समाधान में आध्यात्मिक और नैतिक दृष्टिकोण की भूमिका को समझेंगे।

10.3 मानव और पर्यावरण सम्बन्धी अवधारणाएं (Concepts Related to Human and Environment)

पर्यावरण, आध्यात्मिकता के अंतर्गत पर्यावरणीय दृष्टिकोण के साथ आध्यात्मिक दृष्टिकोण को भी व्यक्त किया जाता है अर्थात यह मानव और पर्यावरण के बीच आध्यात्मिक सम्बन्ध की एक अभिव्यक्ति है। मानव और पर्यावरण के बारे में अभी तक कई अभिव्यक्तियाँ, परम्पराएं, समझ एवं अवधारणाएं विकसित हों चुकी है। यह ना केवल एक प्रकार की धारणा है बल्कि यह विभिन्न प्रकार की धारणाओं (नैतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, अज्ञेयवादी, रुझानों और कार्यों) की श्रृंखला है। मानव और पर्यावरण सम्बन्धी विभिन्न अवधारणाए निम्नलिखित प्रकार की है-नियतिवादी अवधारणा, सम्भाव्यवादी अवधारणा, नव नियतिवादी अवधारणा, स्वैच्छिकवादी अवधारणा, आदर्शवादी अवधारणा और परिस्थिति विज्ञान-संबंधी अवधारणा। मानव और पर्यावरण सम्बन्धी इन विभिन्न अवधारणाओं का विवरण इस प्रकार है-

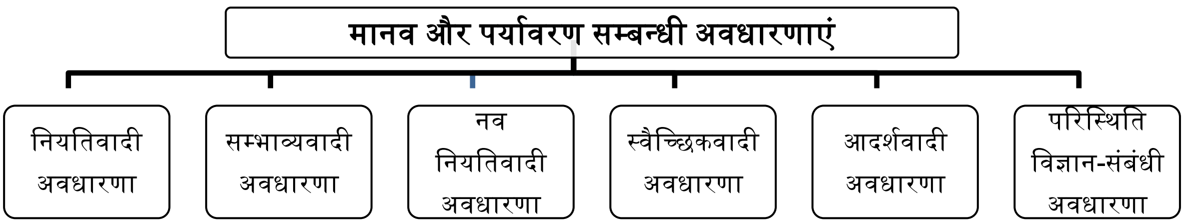

10.3.1 नियतिवादी अवधारणा (Deterministic Concept)

नियतिवादी अवधारणा का मुख्य विचार यह है कि मानव समाज और पर्यावरण के बीच के संबंध पूरी तरह से पूर्वनिर्धारित होते हैं। यह दृष्टिकोण मानता है कि प्राकृतिक परिस्थितियाँ और संसाधन उपयोग की सीमाएँ मानव गतिविधियों को आकार देती हैं। इस दृष्टिकोण के अनुसार, पर्यावरणीय कारक मानव समाज की संरचना और विकास को नियंत्रित करते हैं। उदाहरण के

लिए, अगर एक क्षेत्र में प्राकृतिक संसाधन सीमित हैं तो उस क्षेत्र के निवासियों को संसाधनों के सीमित उपयोग और उसके परिणामस्वरूप सामाजिक और आर्थिक संरचनाओं का सामना करना पड़ता है। इस दृष्टिकोण में पर्यावरण की भूमिका को एक कठोर सीमा के रूप में देखा जाता है, जो मानव विकास की संभावनाओं को निर्धारित करती है।

10.3.2 सम्भाव्यवादी अवधारणा (Probabilistic Concept)

संभाव्यवादी अवधारणा नियतिवादी दृष्टिकोण के विपरीत है। यह मानती है कि मानव समाज की क्षमता और विकास संभावनाएँ पूरी तरह से प्राकृतिक परिस्थितियों पर निर्भर नहीं होतीं। सम्भाव्यवादी दृष्टिकोण के अनुसार, मानव सृजनशीलता, तकनीकी नवाचार और सामाजिक व्यवस्थाएँ पर्यावरणीय सीमाओं को पार कर सकती हैं। इस अवधारणा के अनुसार, मनुष्य अपनी आवश्यकताओं और समस्याओं के समाधान के लिए तकनीकी और सामाजिक नवाचारों का उपयोग कर सकता है। उदाहरण के लिए, आधुनिक कृषि तकनीकों और जलवायु नियंत्रण उपायों ने अनेक पर्यावरणीय चुनौतियों का सामना करने में मदद की है। सम्भाव्यवादी दृष्टिकोण यह मानता है कि मानव समाज अपनी परिस्थितियों को बदलने और अनुकूलित करने में सक्षम है।

10.3.3 नव-नियतिवादी अवधारणा (Neo-Deterministic Concept)

नव-नियतिवादी अवधारणा नियतिवादी दृष्टिकोण का एक संशोधित रूप है जो आधुनिक विज्ञान और तकनीकी प्रगति के प्रभाव को ध्यान में रखता है। इस अवधारणा के अनुसार, पर्यावरणीय कारक और तकनीकी प्रगति दोनों ही मानव समाज के विकास को प्रभावित करते हैं लेकिन तकनीकी नवाचारों की वजह से मानव समाज अधिक अनुकूलन और अनुकूलनशीलता प्राप्त कर सकता है। इस दृष्टिकोण में, तकनीकी प्रगति और पर्यावरणीय कारकों के बीच एक जटिल परस्पर क्रिया देखी जाती है। उदाहरण के लिए जहाँ एक ओर जलवायु परिवर्तन के कारण पर्यावरणीय चुनौतियाँ बढ़ रही हैं वहीँ दूसरी ओर, विज्ञान और प्रौद्योगिकी ने इन चुनौतियों का सामना करने के लिए नई रणनीतियाँ और समाधान प्रस्तुत किए हैं।

10.3.4 स्वैच्छिकवादी अवधारणा (Voluntarist Concept)

स्वैच्छिकवादी अवधारणा मानव समाज के चयन और निर्णय लेने की स्वतंत्रता पर जोर देती है। इसके अनुसार, मानव समाज के पर्यावरणीय संबंध और विकास की दिशा मुख्यत: उनके स्वयं के निर्णयों और प्राथमिकताओं पर निर्भर करती है। यह दृष्टिकोण मानता है कि मानव समाज के पास पर्यावरणीय समस्याओं के समाधान के लिए पर्याप्त विकल्प और क्षमता है। यदि समाज पर्यावरण की सुरक्षा और स्थिरता के लिए इच्छाशक्ति और प्रयास दिखाता है, तो वह पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान कर सकता है। उदाहरण के लिए, विभिन्न देशों और समुदायों द्वारा पर्यावरणीय नीतियों और संरक्षण प्रयासों को अपनाना स्वैच्छिकवादी दृष्टिकोण की पुष्टि करता है कि मानव समाज की स्वैच्छिक क्रियाएँ महत्वपूर्ण होती हैं।

10.3.5 आदर्शवादी अवधारणा (Idealistic Concept)

आदर्शवादी अवधारणा का मुख्य विचार यह है कि मानव समाज और पर्यावरण के बीच एक आदर्श और पूर्ण संतुलन होना चाहिए। इस दृष्टिकोण के अनुसार, पर्यावरणीय संरक्षण और सामाजिक न्याय को एक साथ प्राथमिकता दी जानी चाहिए। आदर्शवादी दृष्टिकोण के अनुसार, मानव समाज को एक ऐसा आदर्श स्थिति प्राप्त करनी चाहिए जहाँ पर्यावरणीय संसाधनों का उपयोग संतुलित और न्यायपूर्ण हो और समाज के सभी वर्गों को पर्यावरणीय लाभ प्राप्त हो। यह अवधारणा स्थायी विकास, सामाजिक समानता और पर्यावरणीय न्याय के सिद्धांतों पर आधारित होती है। आदर्शवादी दृष्टिकोण आमतौर पर नीतियों और आंदोलनों में दिखाई देता है जो पर्यावरणीय और सामाजिक सुधार के लिए कार्य करते हैं।

10.3.6 परिस्थिति विज्ञान-संबंधी अवधारणा (Ecology related Concept)

परिस्थिति विज्ञान-संबंधी अवधारणा पर्यावरणीय समस्याओं और मानव समाज के बीच संबंधों को एक विशिष्ट संदर्भ में देखने पर जोर देती है। इस दृष्टिकोण के अनुसार, विभिन्न स्थानों, परिस्थितियों और समय के आधार पर पर्यावरणीय समस्याओं और उनके समाधान की प्रकृति बदलती है। यह दृष्टिकोण मानता है कि एक वैश्विक समाधान सभी स्थानों पर लागू नहीं हो सकता और स्थानीय परिस्थितियों के आधार पर विशिष्ट उपायों की आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिए, एक क्षेत्र में जलवायु परिवर्तन का प्रभाव और उसके समाधान का तरीका दूसरे क्षेत्र से भिन्न हो सकता है। परिस्थिति विज्ञान-संबंधी दृष्टिकोण इस बात को समझने की कोशिश करता है कि स्थानीय पारिस्थितिकीय, सामाजिक और आर्थिक कारक पर्यावरणीय समस्याओं को किस प्रकार प्रभावित करते हैं और उनके समाधान को आकार देते हैं।

मानव और पर्यावरण के बीच संबंध को समझने के लिए उपरोक्त विभिन्न अवधारणाएँ महत्वपूर्ण दृष्टिकोण प्रदान करती हैं। नियतिवादी और सम्भाव्यवादी दृष्टिकोण प्रकृति और मानव समाज के बीच संबंधों को विभिन्न दृष्टिकोणों से देखने का प्रयास करते हैं जबकि नव-नियतिवादी दृष्टिकोण आधुनिक तकनीकी प्रगति के प्रभाव को ध्यान में रखता है। स्वैच्छिकवादी दृष्टिकोण मानव समाज की स्वतंत्रता और निर्णय क्षमता पर जोर देता है और आदर्शवादी दृष्टिकोण पर्यावरणीय और सामाजिक आदर्शों की दिशा में प्रेरित करता है। परिस्थिति विज्ञान-संबंधी दृष्टिकोण स्थानीय और संदर्भ-विशेष दृष्टिकोण को महत्व देता है। इन सभी अवधारणाओं का अध्ययन हमें मानव और पर्यावरण के बीच जटिल संबंधों को समझने और बेहतर समाधान विकसित करने में मदद करता है।

10.4 पर्यावरणीय नीतिशास्त्र (Environmental Ethics)

पर्यावरणीय नीतिशास्त्र एक महत्वपूर्ण दार्शनिक शाखा है, जो मानवीय और प्राकृतिक दुनिया के बीच नैतिक संबंधों का विश्लेषण करती है। यह नीतिशास्त्र, आचारशास्त्र और दर्शनशास्त्र के परिधि में आती है और यह खोज करती है कि हम प्राकृतिक संसाधनों का किस प्रकार उपयोग करें और हमारे पर्यावरण के प्रति हमारी जिम्मेदारियाँ क्या हैं। पर्यावरणीय नीतिशास्त्र यह मानती है कि मानव और प्रकृति एक अनिवार्य एकता में हैं और दोनों के बीच संबंध नैतिक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण हैं। इस नीतिशास्त्र के अंतर्गत, विभिन्न दृष्टिकोणों का अध्ययन किया जाता है, जो पर्यावरण की रक्षा और उपयोग के दृष्टिकोण को समझाने में मदद करते हैं। इन दृष्टिकोणों को मुख्यत: तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है: विकासात्मक, परिरक्षण और संरक्षण।

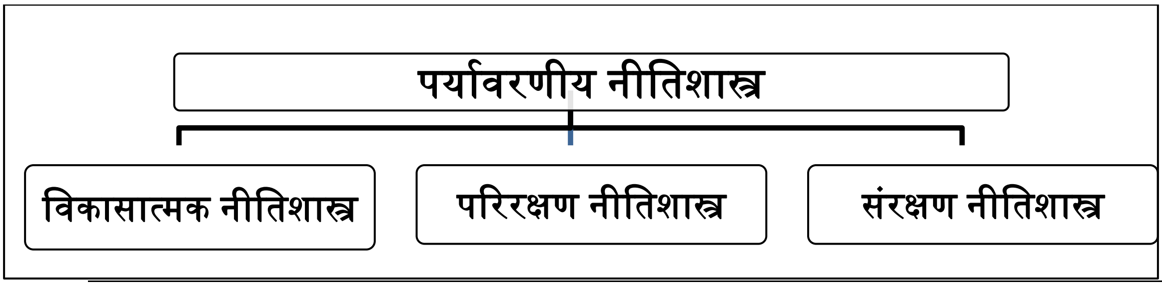

10.4.1 विकासात्मक नीतिशास्त्र (Developmental Ethics)

विकासात्मक नीतिशास्त्र का मुख्य दृष्टिकोण यह मानता है कि मानव जाति की प्राथमिक जिम्मेदारी पृथ्वी के संसाधनों का अधिकतम उपयोग करना है ताकि मानव जीवन की गुणवत्ता में सुधार हो सके। यह दृष्टिकोण मानता है कि प्रकृति और इसके संसाधन मानव सुख-सुविधा के लिए हैं और मानव समाज को इन्हें अपने विकास के लिए प्रयोग करना चाहिए। विकासात्मक नीतिशास्त्र का केंद्रीय विचार यह है कि मानव प्रगति और विकास को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, चाहे इसके लिए प्राकृतिक संसाधनों का बड़े पैमाने पर उपयोग करना पड़े।

विकासात्मक दृष्टिकोण के समर्थक तर्क देते हैं कि विज्ञान और तकनीकी प्रगति ने मानव जीवन की गुणवत्ता में सुधार किया है और भविष्य में भी यह प्रगति जारी रहनी चाहिए। इस दृष्टिकोण के अनुसार, मानवता का कार्य है यह कि वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग करे और विकास को बढ़ावा दे। उदाहरण के लिए, औद्योगिकीकरण और शहरीकरण ने मानव समाज को कई फायदे पहुँचाए हैं जैसे कि जीवन की बेहतर गुणवत्ता, उच्च मानक शिक्षा और उन्नत स्वास्थ्य सेवाएँ।

हालांकि, इस दृष्टिकोण की आलोचना भी होती है। आलोचक यह तर्क देते हैं कि विकासात्मक दृष्टिकोण के कारण प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन और पर्यावरणीय असंतुलन उत्पन्न होता है। इसके परिणामस्वरूप जलवायु परिवर्तन, वनस्पति और वन्यजीवों की विविधता का ह्रास और प्रदूषण जैसी समस्याएँ उत्पन्न हो सकती हैं। इस दृष्टिकोण में मानव गतिविधियों की अनियंत्रित प्रवृत्तियों को रोकने के उपायों की आवश्यकता को लेकर चिंताएँ व्यक्त की जाती हैं।

10.4.2 परिरक्षण नीतिशास्त्र (Preservation Ethics)

परिरक्षण नीतिशास्त्र का दृष्टिकोण प्रकृति के संरक्षण और उसकी विशिष्टता पर जोर देता है। यह मान्यता है कि प्रकृति के संसाधनों, विशेषकर विलुप्त होती प्रजातियों, पारिस्थितिक तंत्र और जैव विविधता की सुरक्षा अत्यंत महत्वपूर्ण है। परिरक्षक यह मानते हैं कि प्रकृति से मानव समाज को बहुत कुछ सीखने को मिलता है और उसकी रक्षा करना हमारी नैतिक जिम्मेदारी है।

परिरक्षण नीतिशास्त्र के अनुसार, प्राकृतिक संसाधनों और पारिस्थितिक तंत्रों का संरक्षण केवल इसलिए नहीं किया जाना चाहिए कि वे हमारे लिए उपयोगी हैं बल्कि इसलिए कि वे स्वायत्त (autonomous) रूप से महत्वपूर्ण हैं। इस दृष्टिकोण के समर्थक मानते हैं कि प्रकृति के विभिन्न घटक, जैसे कि वन, जल स्रोत और वन्यजीव, अपनी स्वतंत्रता और महत्व के कारण संरक्षित किए जाने चाहिए। उदाहरण के लिए, राष्ट्रीय उद्यान और वन्यजीव संरक्षण क्षेत्रों का गठन परिरक्षण नीतिशास्त्र का एक महत्वपूर्ण पहलू है जोकि प्राकृतिक पर्यावरण की रक्षा और जैव विविधता को बनाए रखने में मदद करता है।

परिरक्षण दृष्टिकोण की आलोचना भी की जाती है, खासकर जब यह विकासात्मक आवश्यकताओं और मानव समाज की बढ़ती जनसंख्या परस्पर-विरोधी होती है। आलोचक यह तर्क करते हैं कि अत्यधिक परिरक्षण के कारण मानव विकास की संभावनाएँ सीमित हो सकती हैं और सामाजिक-आर्थिक विकास में अवरोध उत्पन्न हो सकता है। इसके अलावा, कुछ आलोचक यह मानते हैं कि परिरक्षण दृष्टिकोण कुछ विशेष प्रजातियों और पारिस्थितिक तंत्रों पर अत्यधिक ध्यान केंद्रित कर सकता है जबकि अन्य महत्वपूर्ण पर्यावरणीय मुद्दों को नजरअंदाज कर सकता है।

10.4.3 संरक्षण नीतिशास्त्र (Conservation Ethics)

संरक्षण नीतिशास्त्र वैज्ञानिक दृष्टिकोण से पर्यावरण की रक्षा और उसके सतत उपयोग को महत्व देता है। यह दृष्टिकोण मानता है कि पर्यावरणीय संसाधनों का समग्र और स्थायी प्रबंधन महत्वपूर्ण है और इसका लक्ष्य प्राकृतिक संसाधनों और पारिस्थितिक तंत्रों के बीच संतुलन बनाए रखना है। संरक्षण नीतिशास्त्र, विकासात्मक और परिरक्षण दृष्टिकोणों के बीच संतुलन बनाने का प्रयास करता है और यह मानता है कि प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग और संरक्षण दोनों को एक साथ देखा जाना चाहिए।

संरक्षण नीतिशास्त्र का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ-साथ भविष्य की पीढ़ियों के लिए भी संसाधनों की उपलब्धता बनी रहे। यह दृष्टिकोण संसाधनों के सतत उपयोग, पारिस्थितिक तंत्रों की संरक्षा और पर्यावरणीय बदलावों की निगरानी पर जोर देता है। उदाहरण के लिए जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण नियंत्रण और

पुनर्नवीनीकरण जैसे उपाय संरक्षण नीतिशास्त्र के महत्वपूर्ण पहलू हैं जो पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने में मदद करते हैं।

संरक्षण दृष्टिकोण की आलोचना यह है कि यह कभी-कभी अत्यधिक औपचारिक और वैज्ञानिक हो सकता है और सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भों को पूरी तरह से ध्यान में नहीं रखता। इसके अलावा कुछ आलोचक यह मानते हैं कि संरक्षण नीतिशास्त्र विकासात्मक आवश्यकताओं के साथ संतुलन स्थापित करने में विफल हो सकता है जिससे सामाजिक और आर्थिक असंतुलन उत्पन्न हो सकता है।

पर्यावरणीय नीतिशास्त्र एक बहुआयामी क्षेत्र है जिसमें विकासात्मक, परिरक्षण और संरक्षण दृष्टिकोण शामिल हैं। प्रत्येक दृष्टिकोण का अपना महत्व और उपयोगिता है और ये सभी मानव और पर्यावरण के बीच के जटिल संबंधों को समझने में योगदान करते हैं। विकासात्मक दृष्टिकोण मानव प्रगति और संसाधनों के उपयोग पर जोर देता है। परिरक्षण दृष्टिकोण प्राकृतिक संसाधनों की विशिष्टता और संरक्षण पर ध्यान केंद्रित करता है और संरक्षण दृष्टिकोण संतुलित और सतत प्रबंधन की दिशा में काम करता है। इन दृष्टिकोणों का समन्वय और संतुलन ही एक सतत और सुरक्षित पर्यावरण के निर्माण की दिशा में महत्वपूर्ण है। पर्यावरणीय नीतिशास्त्र के इन विभिन्न दृष्टिकोणों की समझ हमें यह सोचने और कार्य करने में मदद करती है कि हम अपनी पर्यावरणीय जिम्मेदारियों को किस प्रकार से पूरा कर सकते हैं और एक संतुलित और समृद्ध भविष्य की दिशा में अग्रसर हो सकते हैं।

10.5 संरक्षण नीतिशास्त्र: सभी संसाधनों का न्यूनतम व्यय ही नैतिकता है। (Conservation Ethics: Morality means minimum wastage of all resources.)

सभी संसाधनों का न्यूनतम व्यय ही नैतिकता है। मानव जाति का जन्म होते ही उसे भूख लगी जिसके लिए उसे भोजन की आवश्यकता हुई फिर शरीर को ढ़कने की आवश्यकता महसूस हुई और फिर जानवरों से बचने के लिए घर की आवश्यकता हुई। प्रारम्भ से ही मानव जाति इन संसाधनों पर निर्भर होता रहा है। पहले तो वह निर्भर रहा परन्तु फिर उसमें धीरे धीरे ज्ञान का विकास हुआ फिर उसनें इन संसाधनों पर अपना आधिपत्य जमा लिया है।

आओ आज संसाधनों पर कुछ विचार करे परन्तु क्या सभी व्यक्तियों को मालूम है कि संसाधन किसे कहते है? उनका रंग रुप कैसा होता है?

कुछ व्यक्तियों को तो सिर्फ यह मालूम है कि संसाधन केवल पेट्रोल, डीजल, कोयला ही होता है। परन्तु नही संसधान केवल खनिज पदार्थ ही नही होते है। यह पर्यावरण जिसमें हम रहते हैं और इस पर्यावरण में होनें वाली वनस्पति, जीव-जन्तु, मृदा, जल, खनिज, शक्ति व मानव हमारे संसाधन है जिन्हे प्रकृति ने हमें एक सम्पदा के रुप में दिया है। मनुष्य पर्यावरण के अनेक तत्वों का उपयोग अपने आराम तथा विकास के लिये करता है। कुछ उपयोगी तत्व प्रकृति के ऐसे उपहार है जिन्हे मनुष्य स्वयं पैदा नही कर सकता।

मैकनाल के अनुसार ***"पर्यावरणीय संसाधन उन संसाधनों को कहते है जो प्रकृति द्वारा प्रदान किए जाते है और मनुष्य के लिए उपयोगी होते है।"***

जिम्मर मौन के अनुसार ***"संसाधन पर्यावरण की वे विशिष्ट आकृतियाँ है जो मनुष्य की आवश्यकताओं को पूरा करने में सक्षम होती है और मनुष्य अपनी आवश्यकताओं एवं क्षमताओं द्वारा उन्हे उपयोगिता प्रदान करते है।"***

प्राकृतिक सम्पदा का अपना विशेष आर्थिक महत्व है। वे हमारी कृषि सम्बन्धी गतिविधियों के मुख्य साधन है। वे हमारे उद्योगों के लिए कच्चा माल उपलब्ध कराते है। हमारी सभी व्यापारिक गतिविधियां प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रुप में उन पर निर्भर करती है। वे प्राकृतिक सौन्दर्य को बनाये रखते है और जैवमण्डल के विभिन्न जीवों के साथ संतुलन को बनाये रखने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते है। अत:

प्राकृतिक संसाधनों का प्रयोग उचित ढ़ग से किया जाना चाहिए ताकि वे समाप्त न हो और वो हमारी भावी पीढ़ी के लिए बने रहे।

1.वनस्पति (Vegetation)

वनस्पति हमारे प्राकृतिक संसाधनों के आधार का मेरुदण्ड है। जीव जन्तु अपने जीवन के लिए पूर्णरुपेण वनस्पति जगत पर आश्रित है। जीव जन्तु का जीवन पौधों द्वारा दी गई शक्ति अथवा भोजन पर ही निर्भर करता है। पौधे प्राकृतिक सौन्दर्य में वृद्धि करते है। पौधे, मनुष्य को भोजन, फल फूल व अनेक प्रकार की जडी बूटियाँ प्रदान करते है। प्राकृतिक वनस्पति के आवरण में वन, घास, भूमियाँ तथा झाडियाँ सम्मिलित है। भारत में चार प्रकार के वनस्पति पाई जाती है।

क. उष्ण कटिबंधीय वर्षा वन
ख. उष्ण कटिबंधीय पर्णपाती वन
ग. कटीले वन व झाडियाँ
घ. ज्वारीय वन

प. जवाहर लाल नेहरु ने कहा है कि ***"एक उगता हुआ वृक्ष राष्ट्र की प्रगति का जीवित प्रतीक है"***

जे. एस. कालिंस ने कहा है कि ***"वृक्ष पर्वतों को थामे रखते है, तूफानी वर्षा को दबाते है तथा नदियों को अनुशासन में रखते है, वे झरनों को बनाए रखते है तथा पक्षियों का पोषण भी करते है"***

यदि मनुष्य ने अपने उपयोगों के लियें वृक्षों को काटना जारी रखा तो वर्षा में कमी आ जायेगी और भूमि बंजर हो जायेगी। इसके साथ-साथ पशु जगत जगत एवं वनस्पति जगत की बहुत सी नसलें भी सदा के लिए समाप्त हो जायेगी, जो आने वाली पीढ़ी के लिए अन्याय है। और केवल ये ही नही इससे वातावरण भी प्रदूषित होता है जिससे मानव अस्तित्व तक को खतरा हो सकता है।

इंदिरा गाँधी ने कहा है कि ***"पेड़ मनुष्य के लगभग सबसे अधिक विश्वस्त मित्र है और जो देश अपने देश के भविष्य को सँवारना और सुधारना चाहता है, उसे चाहिए कि वह अपने वनों का अच्छी तरह ध्यान रखे।"***

पुनीता सेठी ने कहा है कि ***"वन तथा वनों में रहने वाले जीव जंतु मानव के अभिन्न मित्र है क्योकि ये पर्यावरण के संतुलन को बनाये रखते है किंतु मानव उन्हे नष्ट कर पर्यावरण के संतुलन को बिगाड़ने पर तुला है।"***

2. जीव जन्तु (Creatures)

जितनी विविधता वनस्पति में है उतनी ही विविधता हमारे देश के जीव-जंतुओं में भी है। हिमालय क्षेत्र में जंगली भेड़, पहाड़ी बकरी, बर्फीला चीता, जंगली बकरा, छछुन्दर, गैड़ा आदि भी मिलते है। भारत में अनेक किस्मों के बन्दर भी पाये जाते है।

भारत का पक्षी वर्ग भी बहूमूल्य तथा अनूठा है। भारत में पाये जाने वाले पक्षियों में मोर, बत्तख, कलहंस, तीतर, कबूतर, सारस आदि अधिक प्रसिद्ध है। भारत में मछलियों की 1500 किस्में पाई जाती है परन्तु पशु, पक्षियों एवं वन्य प्राणियों के अंधाधुन्ध शिकार से कई जातियाँ लुप्त हो गई है।

भारत में नंदा देवी (उत्तराखण्ड), नोक्रक मेघालय, ग्रेट निकोबार, मन्नार की खाडी (तमिलनाडु), मानस (असम), सुन्दरवन (पश्चिम बंगाल), सिमिलीपाल (उड़ीसा), डिब्रु जैसे जीव आरक्षित क्षेत्र है। इन क्षेत्रों में प्रत्येक पौधे और जीव को संरक्षण दिया जाता है जिससे कि इन प्राकृतिक धरोहर को हमारी भावी पीढ़ियों को ज्यों का त्यों सौपा जा सकेगा।

बसंत लाल ने लिखा है ***"शेर का बच्चा - मम्मी। आपने उस हिरन को क्यों भाग जाने दिया? शेरनी- बेटे! हम शेर है, मानव नहीं जो बिना भूख अकारण ही दूसरों की जान ले।"***

3. मृदा (Soil)

मृदा का निर्माण लाखों वर्ष में हुआ है। मूल शैलों के विखंडित पदार्थों से मिट्टी बनती है प्रकृति की अनेक शक्तियाँ जैसे परिवर्तनशील तापमान, प्रवाहित जल, पवन आदि इसके विकास में सहायता करते है। मिट्टी की परतों में होने वाले रासायनिक तथा जैव परिवर्तन भी इतने ही

महत्वपूर्ण है। मिट्टी चार प्रकार की होती है - जलोढ़ मिट्टी, काली मिट्टी, लाल मिट्टी और लेटराइट मिट्टी। मिट्टी की विभिन्नता के कारण भारत की कृषि की उपज में भी विविधता पाई जाती है।

विलकोक्स के अनुसार ***"मानव सभ्यता का इतिहास मिट्टी का इतिहास है तथा प्रत्येक व्यक्ति की शिक्षा मिट्टी से ही प्रारम्भ होती है।"***

4. जल (Water)

भूमि की तरह जल भी एक महत्वपूर्ण संसाधन है। हमारे देश भारत में जल का एक प्रमुख उपयोग सिंचाई में है। सिंचाई के द्वारा हमने ना केवल कृषि के क्षेत्र में वृद्धि की हैं अपितु इसकी उत्पादकता भी बढाई है। इसके अतिरिक्त औद्योगिक तथा घरेलू उपभोग के लिए विशाल मात्रा में जल की आवश्यकता होती है। भारत की नदियाँ प्राचीन काल से ही यहाँ के आर्थिक तथा मानवीय विकास में महान योगदान करती है। यही कारण है कि हम भारतवासी नदियों को आदर की दृष्टि से देखते है इसीलिए प्राचीन ग्रन्थों मे कहा है-

"गंगे च यमने चैव, गोदावरी, सरस्वति।
नर्मदे, सिन्धु, कावेरी! जलेंऽस्मिन् सन्निधिं कुरु।।"

भारत में भाखड़ा नागल, कोसी, हीराकुंड बाँध, तुंगभद्रा, नागार्जुन सागर, चम्बल जैसी अनेकों जल परियोजनाएँ कार्य कर रही है। नदियाँ, जल संसाधन का सर्वोतम स्त्रोत है परंतु उसे भी मानव जाति ने इतना दूषित कर दिया है कि इस मुहावरे का अर्थ पूरा पलट गया है। ***"गंगा तेरा पानी अमृत।"*** यदि जल ना हो तो मनुष्य सूर्य की अत्याधिक गर्मी से बच ही नही सकता हैं। उसका सर्वनाश सम्भव हैं।

5. खनिज (Minerals)

सभी प्राकृतिक संसाधन भूतल या उसके ऊपर ही नही पाये जाते हैं और बहुत से संसाधन हमारी पृथ्वी के गर्भ में बहुत गहराई में छिपे हैं। इनमें से कुछ समुंद्र के अध: स्थल के नीचे भी दबे पडे है। देश का औद्योगिक विकास अधिकतर इन्ही खनिज संसाधनों पर आधारित है। भारत लौह संसाधनों में विशेष रूप से सम्पन्न हैं। भारत में लौह अयस्क और कोयले के भन्डार हैं। भारत बक्साइड और अभ्रक में भी सम्पन्न हैं परन्तु भारत में खनिज तेल और प्रकृति गैस का उत्पादन बहुत कम हैं। कोयला, खनिज तेल, आणिक खनिज ऊर्जा के प्रमुख स्त्रोत है। देश के विकास में खनिज संसाधनो का अपना विशेष महत्व है क्योकि मानव कि प्रगति में इनका बहुत अधिक योगदान रहा हैं। मानव इतिहास का विभाजन भी इसी बात का साक्षी है। पाषाण युग, कॉसा युग, लौह युग आदि इतिहास का विभाजन विभिन्न खनिजों के महत्व को कितना प्रभावशाली सिद्ध करता हैं।

6. शक्ति (Power)

शक्ति के संसाधन दो प्रकार के होते है- परम्परागत और गैर-परम्परागत स्त्रोत्र।

परम्परागत स्त्रोत्र (Traditional Source) – कोयले, तेल तथा प्राकृतिक गैस से उत्पन्न की गई ताप विधुत के स्त्रोत्र परम्परागत स्त्रोत्र है। इनका नवीनीकरण नही किया जा सकता है।

गैर-परम्परागत स्त्रोत्र (Non Traditional Source) – सूर्य, वायु, ज्वार-भाटे, जियो-थर्मिल, बायो गैस, खेत और पशुओं का कुडा करकट, मनुष्य का मलमूत्र आदि उर्जा के अलौकिक स्त्रोत्र है। ये साधन अक्षय है, इन्हे गैर परम्परागत स्त्रोत्र कहते है। इनका नवीनीकरण किया जा सकता है। भारत में, ऊर्जा के उन स्त्रोतों को संरक्षित करने की आवश्यकता बढ़ रही है जो नाशवान हैं और जिनका एक बार उपयोग करने के बाद दोबारा उपयोग में नही लाया जा सकता है। कोयला और तेल आदि दोनो ही शक्ति संसाधन है। जिनका संरक्षण करना बड़ा आवश्यक है ताकि भविष्य में इनका प्रयोग काफी लम्बे समय तक किया जा सके। इनके स्थान पर जल से बनी शक्ति का प्रयोग अधिक से अधिक करना चाहिए क्योकि यह स्त्रोत्र कभी समाप्त होने वाला नही है। जल शक्ति के लिए सरकार

ने कई परियोजना शुरु की है जैसे- टिहरी जल शक्ति, नर्मदा घाटी विकास, रिहंद, शरावली, कुंड, सबरिगिरि।

संसाधनों की समस्याओं का निदान केवल कानून बनाकर ही नही हो सकता है। यह समस्या हथियारों और और शक्ति के बल पर भी दूर नही हो सकती है। इसके लिए आवश्यक है कि समाज की मानसिकता को बदला जाए और उन्हे इसकी तरफ जागरुक किया जाये। जब समाज का प्रत्येक सदस्य संसाधनों का न्यूनतम व्यय करने के लिए कृतसंकल्प (determined) और कटिबद्ध (committed) हो जाएगा तभी इसका निदान सम्भव है।

"अब तक देखी बाढ़, लेकिन देखा नही पहाड
सुना है वहाँ परियाँ रहती थी
कल कल कल नदियाँ बहती थी
झरने करते थे खिलवाड
यह भी सुना है बर्फ पडती थी
पेडों पर मोती जडती थी
सब करते थे उसको लाड
जीव-जंतु थे वहाँ अनोखे
चीते, भालू, हरियल तोते,
करते रहते थे सिंह दहाड
लेकिन देखा नही पहाड

हमें न्यूनतम संसाधन खर्च करने चाहिए ताकि हमारी आने वाली पीढ़ियाँ उपरोक्त पंक्तियों को ना दोहराएँ।

10.6 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. मानव और पर्यावरण के बीच संबंधों को समझने के लिए..............अवधारणाओं में पर्यावरणीय कारकों और तकनीकी प्रगति के बीच जटिल परस्पर क्रिया पर ध्यान देती है। (नव-नियतिवादी **या** आदर्शवादी)
2. पर्यावरणीय नीतिशास्त्र के अंतर्गत.............दृष्टिकोण का मुख्य विचार है कि मानव जाति को प्राकृतिक संसाधनों का अधिकतम उपयोग करना चाहिए ताकि मानव जीवन की गुणवत्ता में सुधार हो सके। (विकासात्मक **या** संरक्षण)
3. ....अवधारणा यह मानती है कि मानव समाज की क्षमता और विकास संभावनाएँ पूरी तरह से प्राकृतिक परिस्थितियों पर निर्भर नहीं होतीं। (नियतिवादी **या** सम्भाव्यवादी)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. परिरक्षण नीतिशास्त्र का मुख्य उद्देश्य प्राकृतिक संसाधनों का अधिकतम उपयोग करना हैं।
2. मैकनाल के अनुसार पर्यावरणीय संसाधन वे संसाधन जो प्रकृति द्वारा प्रदान किए जाते हैं और मनुष्य के लिए उपयोगी होते हैं।

10.7 सारांश (Summary)

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप समझ गए होगे कि नीतिशास्त्र, आचारशास्त्र और दर्शनशास्त्र की ही एक शाखा है जो मूल रूप से यह बताने का प्रयास करती है कि क्या सत्य है और उसका यह विश्लेषण सांस्कृतिक भिन्नताओं से अलग होता है। इसी प्रकार पर्यावरणीय नीतिशास्त्र, जन-जागरूकता की उस नींव पर आधारित है जिसमें यह माना जाता है कि मानव, प्रकृति का अंग है और मानव और प्रकृति दोनों में ही अन्तनिर्भरता पाई जाती है। संसाधनों की समस्याओं का निदान केवल कानून बनाकर नही हो सकता है। यह समस्या हथियारों और और शक्ति के बल पर भी दूर नही हो सकती है। इसके लिए आवश्यक है कि समाज की मानसिकता को बदला जाए और उन्हे इसकी तरफ जागरुक किया जाये। जब समाज का

प्रत्येक सदस्य संसाधनों का न्यूनतम व्यय करने के लिए कृतसंकल्प और कटिबद्ध हो जाएगा तभी इसका निदान सम्भव है।

10.8 शब्दावली (Glossary)

- **नियतिवादी (Determinism):** यह दृष्टिकोण मानता है कि सभी घटनाएँ, जीवन के अनुभव और पर्यावरणीय परिस्थितियाँ पूर्व निर्धारित होती हैं और व्यक्ति की स्वतंत्रता या निर्णय शक्ति के बाहर होती हैं।
- **सम्भाव्यवाद (Probabilism):** यह दृष्टिकोण मानव क्षमता को, पर्यावरणीय स्थितियों और परिस्थितियों को एक सीमा तक प्रभावित करने की मान्यता देता है जिसमें मानव क्रियाएँ और निर्णय पर्यावरणीय परिवर्तनों को संचालित कर सकते हैं।
- **पर्यावरणीय संरक्षण (Environmental Conservation):** प्राकृतिक संसाधनों और पारिस्थितिकी तंत्रों की रक्षा और रख रखाव के लिए किए गए प्रयास और नीतियाँ, जिनका उद्देश्य प्राकृतिक संसाधनों की दीर्घकालिक सुरक्षा है।
- **पर्यावरणीय प्रबंधन (Environmental Management):** पर्यावरणीय प्रबंधन का तात्पर्य पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान करने और संसाधनों के सतत उपयोग को सुनिश्चित करने के लिए अपनाए जाने वाले उपायों और नीतियों का समुच्चय से हैं।
- **परिरक्षण नीतिशास्त्र (Preservation Ethics):** नैतिक सिद्धांत और नीतियाँ जो प्राकृतिक संसाधनों और पारिस्थितिकी तंत्रों की सुरक्षा और प्रबंधन से संबंधित होती हैं ताकि पर्यावरणीय स्थिरता और संरक्षण सुनिश्चित किया जा सके।
- **विवेकाधीनता (Discretionaryness):** किसी विशेष स्थिति या समस्या के प्रति लचीलापन और बदलते परिस्थितियों के अनुसार समायोजन करने की क्षमता।
- **संसाधन प्रबंधन (Resource Management):** संसाधन प्रबंधन का तात्पर्य प्राकृतिक और मानव-निर्मित संसाधनों के प्रभावी और सतत उपयोग की योजना और कार्यान्वयन की प्रक्रिया से हैं।
- **पर्यावरणीय संकट (Environmental Crisis):** प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक उपयोग, प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन आदि के कारण उत्पन्न होने वाली गंभीर समस्याएँ जो पर्यावरण और मानव जीवन को प्रभावित करती हैं।
- **संधारणीयता (Sustainability):** पर्यावरण, समाज और अर्थव्यवस्था के बीच संतुलन बनाए रखने की प्रक्रिया ताकि वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों के लिए संसाधनों की उपलब्धता और गुणवत्ता सुनिश्चित की जा सके।
- **सतत विकास (Sustainable Development):** ऐसी विकास प्रक्रियाएँ जो पर्यावरणीय, सामाजिक और आर्थिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए बिना संसाधनों की क्षति के भविष्य के लिए विकास की योजना बनाती हैं।
- **पारिस्थितिक तंत्र (Ecosystem):** जीवित प्राणियों और उनके वातावरण के बीच आपसी संबंधों का एक तंत्र हैं जिसमें विभिन्न जीव और उनके पर्यावरणीय घटक एक साथ काम करते हैं।
- **पर्यावरणीय दृष्टिकोण (Environmental Perspective):** पर्यावरणीय समस्याओं और उनके समाधान को देखने और समझने का तरीका हैं जो विभिन्न दृष्टिकोणों और सिद्धांतों पर आधारित हो सकता है।

10.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practics Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. नव-नियतिवादी 2. विकासात्मक 3. सम्भाव्यवादी

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. असत्य 2 .सत्य

10.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- ***Sustainable Economic Development: Resources, Environment, and Institutions*** (Arsenio BalisacanUjjayantChakravortyMajah-Leah Ravago) 2014 Academic Press.
- ***Toward an Eco-Spirituality***, (Leonardo Boff), 2015 Crossroad Publishing Company.
- ***Introduction to Energy and Climate: Developing a Sustainable Environment***, (Julie Kerr) 2017 CRC Press.

10.11 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

- Smyth, J. C. (1995). ***Environment and Education: a view of a changing scene. Environmental Education Research***, 1(1), 3–120. https://doi.org/10.1080/1350462950010101
- Bhalachandran, G. (2011). ***Kautilya's model of sustainable development***. Humanomics, 27(1), 41–52. https://doi.org/10.1108/08288661111110169
- Andriantiatsaholiniaina, L. A., Kouikoglou, V. S., & Phillis, Y. A. (2004). ***Evaluating strategies for sustainable development: fuzzy logic reasoning and sensitivity analysis. Ecological Economics***, 48(2), 149–172. https://doi.org/10.1016/j.ecolecon.2003.08.009

10.12 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

1. मानव-पर्यावरण संबंधों की विभिन्न अवधारणाओं की तुलना कीजिए और बताएं कि ये अवधारणाएँ कैसे हमारे पर्यावरणीय नीतियों और प्रथाओं को प्रभावित करती हैं।
2. 'नियतिवादी' और 'सम्भाव्यवादी' दृष्टिकोणों की आलोचना करते हुए चर्चा कीजिए कि पर्यावरणीय समस्याओं के समाधान में ये दोनों दृष्टिकोण किस प्रकार की सीमाएँ प्रस्तुत करते हैं।
3. 'परिरक्षण नीतिशास्त्र' के सिद्धांतों की व्याख्या कीजिए और यह बताएं कि यह सिद्धांत पर्यावरणीय प्रबंधन में कैसे लागू किए जा सकते हैं। इस संदर्भ में, आप किस प्रकार की नीतिगत सुझाव देंगे?

इकाई 11 सामाजिक आयाम एवं पर्यावरण नीतियाँ
Social Dimensions and Environmental Policies

11.1 प्रस्तावना (Introduction)
11.2 उद्देश्य (Objectives)
11.3 सामाजिक आयाम (Social Dimension)
11.3.1 प्राकृतिक कारक (Natural Factors)
11.3.2 सांस्कृतिक मूल्य (Cultural Values)
11.3.3 आर्थिक क्रियाएं एवं संरचना (Economic Activities and Structure)
11.3.4 विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी (Science and Technology)
11.3.5 शिक्षा (Education)
11.4 पर्यावरण नीतियाँ (Environmental Policies)
11.4.1. आर्थिक दृष्टिकोण (Economic Approach)
11.4.2 समाजशास्त्री दृष्टिकोण (Sociological Approach)
11.4.3 न्यायिक सक्रियता एवं लोकहित वाद (Judicial Activism and Public Interest Litigation)
11.4.4. पर्यावरणवाद एवं दार्शनिक दृष्टिकोण (Environmentalism and Philosophical Perspective)
11.5 सामाजिक आयामों के संदर्भ में पर्यावरण नीति के निहितार्थ व मूल्यांकन (Social Dimensions, Implications and Evaluation of Environmental Policy)
11.5.1 सामाजिक आयाम एवं पर्यावरणीय नीतियों के उद्देश्य (Social Dimensions and Objectives of Environmental Policies)
11.5.2 सामाजिक सहभागिता एवं पर्यावरणीय सुरक्षा (Social Partnership and Environmental Protection)
11.5.3 प्रदूषण नियन्त्रण एवं सामाजिक आयाम (Pollution Control and Social Dimensions)
11.5.4 शिक्षा, सामाजिक आयाम एवं पर्यावरणीय नीतियाँ (Education, Social Dimensions and Environmental Policies)
11.6 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)
11.7 सारांश (Summary)
11.8 शब्दावली (Glossary)
11.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)
11.10सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
11.11उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)
11.12 निबंधात्मक प्रश्न (Essay Type Questions)

11.1 प्रस्तावना (Introduction)

इस इकाई में आधुनिक आर्थिक संवृद्धि और उसके पर्यावरणीय प्रभावों का विश्लेषण किया गया है। इस इकाई में पर्यावरणीय नीतियों और सामाजिक आयामों के बीच गहरे संबंध को समझने का प्रयास किया गया है। आर्थिक विकास ने प्राकृतिक संसाधनों का दोहन किया है जिसके कारण पर्यावरण नीतियों की आवश्यकता बढ़ी है।

इस इकाई में सामाजिक आयामों का महत्व और उनका पर्यावरण नीतियों में समावेश विस्तार से समझाया गया है। अंत में, पर्यावरण नीतियों के सामाजिक आयामों के निहितार्थ और उनके मूल्यांकन पर भी विचार किया गया है जिससे यह इकाई पर्यावरण और समाज के बीच के संबंधों को समझने में महत्वपूर्ण योगदान देता है।

11.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप –

- ✓ सामाजिक आयाम को समझ सकेंगे।
- ✓ पर्यावरण संरक्षण में सामाजिक भागीदारी के योगदान को जान सकेंगे।
- ✓ सामाजिक आयामों के संदर्भ में पर्यावरण नीति के निहितार्थ व मूल्यांकन को समझ सकेंगे।

11.3 सामाजिक आयाम (Social Dimension)

सामाजिक आयाम के अन्तर्गत किसी समाज के सामाजिक व सांस्कृतिक मूल्य के प्रतिमान (models of social and cultural values), आदतें (habits), जीवनशैली (lifestyle), संरचनाएं (structures), दृष्टिकोण (approach), सिफारिशों (recommendations), आस्थाएं (beliefs), परंपराएँ (traditions) आदि सभी का समावेश किया जाता है। सामाजिक आयाम के अन्तर्गत समाज के आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक एवं आध्यात्मिक आयामों (dimensions) को समाहित किया जाता है। सामाजिक आयाम एक ऐसी अवधारणा है जोकि आर्थिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक परिवर्तन के द्वारा प्रभावित होती आयी है एवं प्रतिक्रिया स्वरूप किसी समाज के सभी क्षेत्रों को प्रभावित करती है, जैसे सामाजिक व सांस्कृतिक मूल्य के प्रतिमान (models of social and cultural values), आदतें (habits), जीवनशैली (lifestyle), संरचनाएं (structures), दृष्टिकोण (approach), सिफारिशों (recommendations), आस्थाएं (beliefs), परंपराएँ (traditions)।

सामाजिक आयाम समाज को स्वरूप, गतिशीलता, संरचना एवं मूल्य प्रदान करते है। सामाजिक आयामों के माध्यम से ही एक समाज का दूसरे समाज से अन्तर स्पष्ट किया जा सकता है। परम्परागत वनों में रहने वाले वनवासी एवं महानगरों की अभिजात्य कॉलोनियों (elite colonies) में रहने वाले समाजों के लोगों के सामाजिक आयामों में व्यापक अन्तर देखा जा सकता है।

प्राकृतिक घटकों में प्राकृतिक पर्यावरणीय कारकों का समावेश किया जाता है जबकि सांस्कृतिक कारकों में भौतिक एवं अभौतिक संस्कृति को सम्मलित किया जाता है।

सामाजिक आयाम निम्नलिखित कारकों पर निर्भर करते हैं –

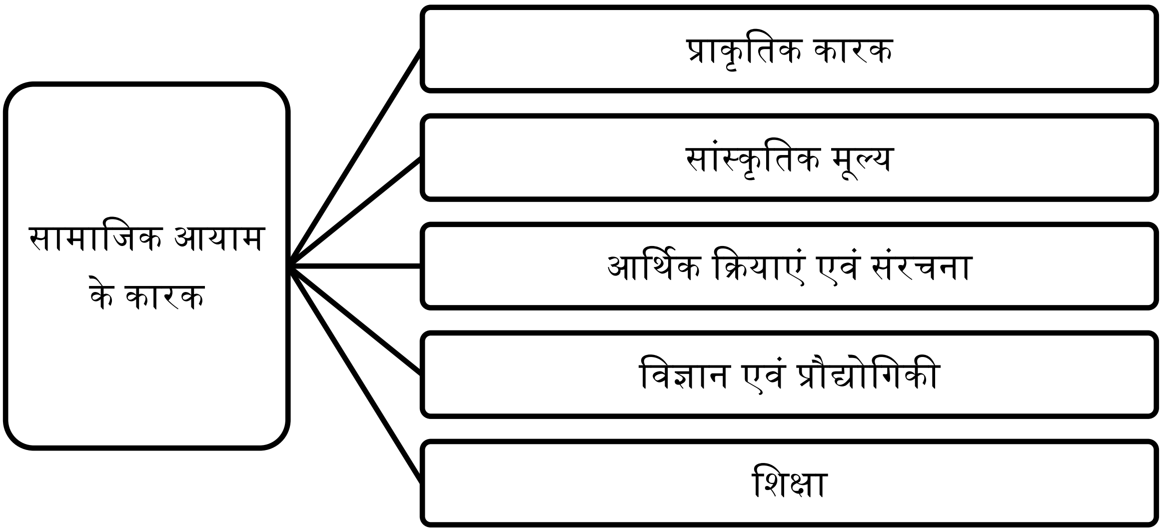

11.3.1 प्राकृतिक कारक (Natural Factors)

प्राकृतिक घटकों में वह सभी कारक समाहित होते है कि प्रकृति प्रदत्त कारकों द्वारा किसी समाज के आयाम निर्धारित करते है। इनमें भौगोलिक पर्यावरणीय एवं जैविकीय विशेषताएँ प्रमुख है जोकि निम्नलिखित हैं -

- **भौगोलिक एवं पर्यावरणीय विशेषताएँ (Geographical and Environmental Characteristics) -** प्रत्येक समाज एक विशेष किस्म के भौतिक पर्यावरण में लंबे समय तक निवास करने के कारण कुछ विशेषताओं को सृजित करता है। यह विशेषताएँ उस परिवेश की भूमि, जंगल, जलवायु, जल-स्रोत, नदियों, पर्वतों, जीव जन्तुओं एवं खनिज-संपदा पर निर्भर करती है। उदाहरण के तौर पर पंजाबी समाज, नेपाली समाज, बंगाली समाज, कोकंणी समाज आदि के खान-पान, रहन-सहन एवं सांस्कृतिक मूल्य उनकी विशिष्ट भौगोलिक परिस्थितियों एवं पर्यावरणीय परिवेश में रहने के कारण विकसित हुए हैं। जिनसे सामाजिक आयाम प्रभावित होते हैं।
- **जैविकीय विशेषताएँ (Biological Characteristics) -** मानव समाज की प्रजाति, नस्ल, जनसंख्या, लिंग भेद, रूपरंग आदि जैविकीय विशेषताओं के कारण विभिन्न प्रजातियों के लोगों की शारीरिक विशेषताएँ भिन्न-भिन्न होती हैं। जिनसे उनके सामाजिक व्यवहारों में अतंर उत्पन्न होता है। जैसे नीग्रो, यूरोपियन, मंगोलियाई, मसाई, पिग्मी आदि की सामाजिक मूल्यों में अन्तर समाज की जैविकीय विशेषताओं के फलस्वरूप उत्पन्न हुए हैं जिनसे सामाजिक आयाम प्रभावित होते हैं।

11.3.2 सांस्कृतिक मूल्य (Cultural Values)

किसी समाज की सांस्कृतिक विशेषताओं में वो सभी परंपराएँ, विचार, रहन-सहन, खान-पान, तकनीक, कला-कौशल, भाषा-साहित्य, विज्ञान-दर्शन, आस्था-विश्वास आदि सभी भौतिक-अभौतिक मूल्य (physical and non physical Qualities) समाहित होते हैं। सांस्कृतिक मूल्य ही किसी समाज की सभ्यता का निर्माण करते हैं। भारत भूमि पर सिन्धु घाटी सभ्यता, वैदिक सभ्यता से लेकर आधुनिक सभ्यता तक के सम्पूर्ण काल में हर युग के समाज की अपनी ही कुछ विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान रही है। किसी समाज के आयामों की स्थापना में आध्यात्मिक, धार्मिक एवं दार्शनिक मूल्यों का योगदान महत्वपूर्ण होता है। हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई, सिख, बौद्ध आदि धर्मों के मानने वालो के सामाजिक आयाम इनके धार्मिक मूल्य से प्रभावित होते हैं।

11.3.3 आर्थिक क्रियाएं एवं संरचना (Economic Activities and Structure)

कार्ल मार्क्स द्वारा प्रतिपादित आर्थिक निश्चयवाद के अनुसार, किसी समाज एवं देश की सामाजिक एवं सांस्कृतिक संरचना में निरन्तर परिवर्तन हेतु आर्थिक हित प्रमुख कारक होता है। उत्पादन, वितरण एवं उपभोग हेतु संसाधनो पर नियन्त्रण आदि से प्रक्रियाओ से किसी देश का अर्थतंत्र प्रभावित होता हैं। जिसके परिणामस्वरूप आर्थिक और सामाजिक परिवर्तन आते है। उदाहरण के तौर पर वर्तमान वैश्वीकरण के दौर में बाजारवादी, भौतिकतावादी, उपभोक्तावादी मूल्य एवं संस्कृति का प्रसार हो रहा है।

11.3.4 विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी (Science and Technology)

सामाजिक आयामों में परिवर्तन की दिशा में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का बड़ा योगदान है। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी ने जहाँ एक ओर औद्योगीकरण, आधुनिकीकरण एवं भौतिक प्रगति का आधार है वहीं दूसरी ओर विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी ने समाज को तर्क एवं विवेक से परिपूर्ण बनाकर वैज्ञानिक दृष्टिकोण प्रदान कर अंधविश्वासों को दूर किया है। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी ने अनुसंधान एवं विकास, इण्टरनेट, मीडिया आदि के प्रचार प्रसार में योगदान कर समाज को जागरूक एवं संवेदनशील बनाया है। कुल मिला कर विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के फलस्वरूप सामाजिक आयामों जैसे आस्था, विश्वास, मूल्यों, दृष्टिकोण आदि में परिवर्तन हुआ है जिससे सकरात्मक एवं नकरात्मक परिणाम समाज एवं पर्यावरण के ऊपर पड़ रहे हैं।

11.3.5 शिक्षा (Education)

सामाजिक आयामों में परिवर्तन का सबसे सशक्त आधार शिक्षा ही रही है। कोई भी समाज अपनी आवश्यकताओं एवं आकाक्षांओ की पूर्ति शिक्षा द्वारा ही करता है। शिक्षा निरन्तर एक गतिशील प्रक्रिया है जोकि निरतंर जारी रह कर समाज की संरचना, व्यवहार, प्रतिमानो, कार्यविधियों, मान्यताओं, आदर्शों आदि में परिवर्तन कर सामाजिक आयामों को दिशा प्रदान कर प्राकृतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिवेश के सापेक्ष सामाजिक अनुकूलन का कार्य करती है।

11.4 पर्यावरण नीतियाँ (Environmental Policies)

पर्यावरण संरक्षण हेतु पर्यावरण नीतियों का निर्माण एवं उनका प्रभावी क्रियान्वयन वर्तमान समय में एक अपरिहार्य आवश्यकता बन गयी हैं। पर्यावरण संरक्षण के अभियान में सबसे व्यापक एवं प्रभावी प्रयास विचारधारा के स्तर पर हुआ है। पर्यावरण पर मनुष्य के स्वामित्व एवं स्वहित हेतु उसके दोहन के आर्थिक निश्चयवादी उपागम एवं हर तरह से आय-उत्पादन-उपयोग चक्र (income-production-consumption cycle) में विभिन्न विस्तार को, आर्थिक विकास की मुख्य धारा मानने वाली विचारधाराओं पर भारी कुठारघात किया गया। इस सन्दर्भ में आर्थिक, सामाजिक एवं दार्शनिक अवधारणाओं का योगदान प्रमुख रहा है।

11.4.1 आर्थिक दृष्टिकोण (Economic Approach)

विकास की प्रक्रिया में सामाजिक आयामों एवं पर्यावरण संरक्षण का समावेश करने के दृष्टिकोण से निम्न अवधारणायें प्रमुख हैं-

क. **साझा संसाधन त्रासदी (Shared Resource Tragedy)- गैरट हार्डिन (Garett Hardin)** द्वारा प्रस्तुत इस अवधारणा ने यह स्थापित किया कि किस प्रकार अधिकतम लाभ की होड़ से सामाजिक, सार्वजनिक सम्पदा की हानि होती है एवं पर्यावरण अवनयन होता है।

ख. **संवृद्धि की सीमाएं (Limits to Growth) - क्लब आफ रोम (Club of Rome)** द्वारा वर्ष 1972 में प्रकाशित **संवृद्धि की सीमाएं (Limits to Growth)**। इस अवधारणा के अनुसार यदि मानवीय प्रगति एवं प्राकृतिक संसाधनों का तीव्र गति से दोहन होता रहा तो शीघ्र ही यह पृथ्वी संसाधनों की कमी के संकट से घिर जायेगी एवं संपूर्ण दुनिया में आर्थिक-सामाजिक दहशत, तनाव एवं असंतुलन व्याप्त हो जायेगा एवं आर्थिक प्रगति बाधित होकर ठप्प हो जायेगी।

ग. **विकास (Development)-** संयुक्त राष्ट्र (United Nations) द्वारा कोकोयोक (cocoyoc) उद्घोषणा में यह स्पष्ट किया गया कि अंधाधुन्ध (indiscriminate) आर्थिक विकास से आर्थिक-सामाजिक असंतुलन (economic-social imbalance) एवं पर्यावरणीय क्षति बढ़ी है। अत: इस उदघोषणा के अनुसार, ***"विकास का उद्देश्य वस्तुओं की मात्रात्मक वृद्धि नहीं प्रत्युत् मनुष्य का विकास होना चाहिये। वस्तुओं की मात्रात्मक वृद्धि नहीं प्रत्युत् मनुष्य का विकास होना चाहिये।"*** इसके बाद मानव केंद्रित विकास (Human Centric Development) एवं सतत विकास (sustainable Development) के नारे लोकप्रिय होने लगे।

11.4.2 समाजशास्त्री दृष्टिकोण (Sociological Approach)

1970 के दशक से समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण में पर्यावरणीय सरोकारों (Environmental Concerns) के प्रति रूचि बढ़ने लगी एवं मानवीय एवं सामाजिक आयामों का अध्ययन पर्यावरण के परिपेक्ष्य में किये जाने की आवश्यकता महसूस की जाने लगी। समाजशास्त्र के इस नवीन दृष्टिकोण के अनुसार मानव समाज के उदय एवं विकास में पर्यावरण परिस्थितियों एवं पारिस्थितिकी का अत्याधिक महत्व है एवं पर्यावरणीय परिस्थितियाँ ना सिर्फ सामाजिक-आर्थिक विकास की सीमाओं को निर्धारित करती है एवं स्वंय भी इस प्रक्रिया से प्रभावित होती है। अत: इस दृष्टिकोण के अनुसार पर्यावरण नीतियों में सामाजिक आयामों का सामजस्य आवश्यक है तभी सामाजिक-आर्थिक विकास को सतत बनाया जा सकता है।

11.4.3 न्यायिक सक्रियता एवं लोकहित वाद (Judicial Activism and Public Interest Litigation)

भारत में पर्यावरणीय कानूनों एवं नीतियों की सामाजिक आयामों के सन्दर्भ में व्याख्या का कार्य न्यायपालिका द्वारा जनहित में किया जाता रहा है। यह न्याययिक सक्रियता का दौर भारत में 1980 के दशक से प्रारम्भ हुआ जबकि संवैधानिक अधिकारों का सामाजिक-आर्थिक एवं पर्यावरणीय आधारों पर व्यापक व्याख्या न्याय पालिका द्वारा की जाती रही। न्याय पालिका द्वारा विभिन्न वादो में स्वंय भी स्वत: संज्ञान लेते हुए एवं जनहित याचिकाओं के माध्यम से ना सिर्फ महत्वपूर्ण निर्णय लिए अपितु पर्यावरण संरक्षण के लिए सरकारों को महत्वपूर्ण दिशा-निर्देश भी प्रदान किए गए। न्याय पालिका द्वारा अनेकों वादो में यह स्थापित किया गया कि स्वच्छ वायु, जल एवं पर्यावरण सभी मनुष्यों के जीवन जीने की आधारभूत आवश्यकता (basic needs) है एवं प्रत्येक व्यक्ति के लिये यह जीने के अधिकार के अन्तर्गत समाहित है। ऐसा करके न्यायालय द्वारा संविधान के अनुच्छेद 21 (Right to Life) के अन्तर्गत गारंटीकृत जीने की अधिकार की परिभाषा को व्यापक किया।

न्यायालय द्वारा जहाँ एक ओर स्वच्छ पर्यावरण के अधिकार को आधारभूत अधिकार के रूप में मान्यता प्रदान की वहीं दूसरी ओर प्रदूषित औद्योगिक ईकाईयों, चमड़ें के कारखानों, जोखिमपूर्ण एवं हानिकारक तत्वों के उत्पादन एवं व्यापार एवं खनन् जैसे गम्भीर मसलों पर सामाजिक वरीयता प्रदान करते हुए उक्त गतिविधियों को त्वरित रूप से रूकवाया। जिसमें आगरा में चमड़ें कारखानें एवं देहरादून

खनन केस प्रमुख हैं। नदी घाटी परियोजनाओं में होने वाले मानव समाज के व्यापक विस्थापन एवं पर्यावरण हानि पर भी सरकार को प्रभावी निर्देश सरकारों को प्रदान किये गये हैं।

11.4.4 पर्यावरणवाद एवं दार्शनिक दृष्टिकोण (Environmentalism and Philosophical Perspective)

आधुनिक प्रगति के साथ नवीन आधुनिक मूल्यों का प्रचार प्रसार हुआ है। समाज आत्मकेन्द्रित एवं अवसरवादी दृष्टिकोण (Self-centrered and opportunistic approach) पर निरन्तर आधारित होता जा रहा है। किसी भी तरह से उच्च विलासितापूर्ण जीवनशैली बनाए रखना इस भोगवादी जीवन दर्शन का मुख्य उद्देश्य बन गया है। इस भोगवादी एवं उपभोक्ता वादी जीवन शैली को वैश्वीकरण के दौर में बाजारवादी ताकतों ने और अधिक प्रोत्साहित कर दिया है। जिसके कारण मानव ने प्रकृति को एक उत्पाद मानकर उसका अतिशोषण कर रहा है। भौतिकवादी जीवन दर्शन की जड़ें वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण से पोषित होती हैं जोकि इस विचारधारा पर आधारित है कि मनुष्य, प्रकृति एवं अन्य सभी जीवों से उत्कृष्ट हैं और प्रकृति में प्रत्येक वस्तु का सृजन मानव के उपभोग एवं आनन्द हेतु होता है। अत: उपरोक्त दर्शन ने समाज को एक ऐसा आयाम् दिया जिसकी गतिविधियों ने पर्यावरण को एक भोग की वस्तु बना दिया। इस सुखवादी दर्शन के कारण पर्यावरण का अतिदोहन एवं शोषण जारी रहा।

11.5 सामाजिक आयामों के संदर्भ में पर्यावरण नीति के निहितार्थ व मूल्यांकन (Social Dimensions, Implications and Evaluation of Environmental Policy)

भारत जैसे विविध, व्यापक आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और प्रगतिशील राष्ट्र में पर्यावरणीय समस्याओं के कई आयाम हैं। पर्यावरण संरक्षण के साथ-साथ यहां विकास से वंचित लोगों की आजीविका की सुरक्षा, सार्वजनिक स्वास्थ्य, गरीबी उन्मूलन, सशक्तिकरण आदि सभी आयाम भी जुड़े हुए हैं। अत: पर्यावरण नीतियों के संदर्भ में यह महत्वपूर्ण है कि वह किस प्रकार से सामाजिक आयामों के साथ शामिल की जाती है।

11.5.1 सामाजिक आयाम एवं पर्यावरणीय नीतियों के उद्देश्य (Social Dimensions and Objectives of Environmental Policies)

वर्तमान में सामाजिक आयामों के परिपेक्ष्य में पर्यावरण नीतियों के उद्देश्यों को निम्न प्रकार से गठित किया गया है -

क. आर्थिक एवं सामजिक विकास में पर्यावरणीय सरोकारों का समावेश सुनिश्चित करना ।
ख. समाज के सभी वर्गों के लिये पर्यावरणीय संसाधनों की पहुँच एवं गुणवता सुनिश्चित करना।
ग. पर्यावरण नीतियों के क्रियान्वयन में निर्धन वर्ग की आजीविका की सुरक्षा को सुनिश्चित करना अर्थात पर्यावरणीय संसाधनों के उपयोग में समता सुनिश्चित करना।
घ. सामाजिक अपेक्षाओं एवं आवश्यकताओं की पूर्ति को देखते हुए पर्यावरणीय संसाधनों का न्यायोचित प्रयोग सुनिश्चित करना।
ड. पर्यावरणीय व्यवस्था के संचालन एवं नियमन में पारदर्शिता एवं जवाबदेही के साथ सामाजिक सहभागिता को सुनिश्चित करना।

11.5.2 सामाजिक सहभागिता एवं पर्यावरणीय सुरक्षा (Social Partnership and Environmental Protection)

पर्यावरण नीतियों में सबसे महत्वपूर्ण रणनीतिक परिवर्तन यह हुआ है कि पर्यावरण के प्रबंधन एवं संरक्षण में समाज की प्रभावी भागीदारी सुनिश्चित करने तथा इस भागीदारी की प्रक्रिया में समाज के हितों की रक्षा करने पर जोर दिया गया है। वन नीति में वनों की सुरक्षा, पुनर्वनीकरण एवं वनों के

संवर्द्धन के लिये स्थानीय जन सहयोग को प्रोत्साहित करने हेतु ***ग्राम वन समिति*** को गठित करने एवं उत्पादित वनोपज में हिस्सेदारी सुनिश्चित करने की रणनीति को पुख्ता करने का दिशा-निर्देश दिये गये हैं। वृक्षारोपण के साथ चारा, चुगान, रेशा एवं ईधन की जरूरतों की पूर्ति एवं अतिरिक्त आय सृजन हेतु सामाजिक वानकी (social forestry), कृषि वानकी एवं शहरी वानकी आदि कार्यक्रम आरम्भ किये गये है। वनों के प्रबंधन को स्थानीय जनता की भागीदारी से प्रभावी रूप में करने हेतु संयुक्त वन प्रबंधन अधिनियम 1998 पारित किया गया है।

सामाजिक भागीदारी के सुदृढ़ एवं प्रभावी बनाने हेतु समाज के पर्यावरण के सम्बन्ध में सभी हितधारकों जैसे उद्योग संघ, निजी क्षेत्र, स्वैच्छिक संगठन, मीडिया, सामुदायिक संगठन, वित्तीय संस्थानों, महिला समूह आदि सभी की भूमिका प्रभावी बनाने पर जोर दिया गया है। इस भागीदारी प्रतिमान (model) को पर्यावरण नीतियों में सामाजिक आयामों के अनुसार निम्नलिखित महत्वपूर्ण आधारों पर सुनिश्चित करने हेतु जोर दिया गया है -

क. स्थानीय स्वशासी सरकारों को पर्यावरण और प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन हेतु सक्षम एवं सशक्त बनाया जाये।

ख. जन-सामुदायिक भागीदारी (public-community participation) को प्रभावी बनाने हेतु उत्तरदायित्वों के साथ-साथ अधिकारों का भी संरक्षण किया जाये। सामुदायिकता आधारित भागीदारी में महिलाओं, युवाओं, ग्रामीण समाज एवं आदिवासी वर्गों को विशेषतया प्रोत्साहित किया जाये।

ग. पर्यावरण नीतियों में सार्वजनिक एवं निजी संगठन की सहभागिता को प्रतियोगिता के आधार पर प्रोत्साहित करने के प्रावधान किये गये हैं परन्तु सहभागिता की प्रक्रिया पारदर्शिता, उत्तरदायित्व, लागत प्रभाविता और कुशलता से सुनिश्चित किया जाना चाहिये जिससे कि पर्यावरण सुरक्षा के साथ समाज को भी समुचित लाभ हो सकें।

घ. पर्यावरण संरक्षण एवं प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन में ग्रामीण एवं विशेषकर आदिवासी समुदाय के सामाजिक आयामों को सहभागिता की प्रक्रिया में समावेशित करना। इसके अन्तर्गत वन संरक्षण, जल संरक्षण, आदि की प्रक्रिया को आदिवासी समुदाय की जीवनशैली से जोड़कर प्रयास करना, जिससे उनकी सहमति एवं स्वैच्छिक सहभागिता से प्राकृतिक संसाधनों का संवर्द्धन सुनिश्चित हो सकें।

11.5.3 प्रदूषण नियन्त्रण एवं सामाजिक आयाम (Pollution Control and Social Dimensions)

प्रदूषण का प्रभाव पेयजल, सामुदायिक स्वास्थ्य पोषण, खाद्य सुरक्षा आदि सभी आवश्यक सामाजिक मसलों पर पड़ता है एवं प्रदूषण की मार विशेष कर निर्धन, असंगठित क्षेत्रों में कार्यरत कामगारों, महिलाओं आदि पर पड़ती है। अत: प्रदूषण निवारण प्रक्रिया (pollution prevetion process) को निम्न सामाजिक आयामों के अनुरूप पर्यावरण नीतियों में स्थापित किया गया है -

क. प्रदूषण हेतु जिम्मेदार संस्थाओं पर सामाजिक एवं पर्यावरणीय मूल्यों के प्रति उत्तरदायित्व सुनिश्चित किया जाये।

ख. प्राकृतिक संसाधनों जैसे जल के शोधन(water purification), पुन: प्रयोग, पुन: चक्रण हेतु सार्वजनिक एवं निजी संस्थाओं की भागीदारी सुनिश्चित की जाये।

ग. ग्रामीण एवं दूर-दराज के क्षेत्रों (rural and remote areas) में स्वच्छ, सस्ते, गैर-परम्परागत ऊर्जा के स्रोतों का विकास इस प्रकार किया जाए कि जिससे निर्धन वर्ग एवं महिलाओं की आर्थिक सामाजिक दशाओं में सुधार हो सके यानि ऊर्जा संरक्षण के साथ सफाई, स्वच्छता एवं स्वास्थ्य की दशाओं में सुधार एवं अतिरिक्त शारीरिक श्रम से मुक्ति मिल सके

जैसे स्त्रीयों को ईधन के एकत्रीकरण एवं चूल्हें के धुएं से निरन्तर जूझना पड़ता है जोकि पर्यावरण के साथ-साथ महिलाओं के स्वास्थ्य पर भी नकरात्मक प्रभाव डालता है।

घ. कॉर्पोरेट क्षेत्र को उनके सामाजिक एवं पर्यावरणीय दायित्वों के प्रति जागरूक एवं संवेदनशील बनाते हुए प्रदूषण नियन्त्रण की प्रक्रिया में इस क्षेत्र की भागीदारी सुनिश्चित करना।

11.5.4 शिक्षा, सामाजिक आयाम एवं पर्यावरणीय नीतियाँ (Education, Social Dimensions and Environmental Policies)

शिक्षा, सामाजिक आयामों को प्रभावित करने वाले सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्रोतों में से एक है। पर्यावरणीय नीतियों में पर्यावरणीय के अनुकूल व्यवहारों एवं गैर जिम्मेदार क्रियाकलापों के दुष्प्रभावों के बारे में सूझ-बूझ (wisdom) का शिक्षा के माध्यम से प्रोत्साहित करने पर जोर दिया गया है। जिससे समाज को साफ सफाई, सामुदायिक स्वास्थ्य, सामुदायिक गतिविधियों प्राकृतिक संसाधनों जैसे जल ऊर्जा के संरक्षण के प्रति जागरूक बनाया जा सके। इस दिशा में पर्यावरणीय नीतियों में सामाजिक आयामों के अनुसार निम्नलिखित रणनीति अपनायी गयी है -

क. औपचारिक एवं अनौपचारिक शिक्षा के मिले जुले स्वरूप अपनाते हुए समाज में सभी वर्गों में पर्यावरण सम्बन्धी जागरूकता का प्रसार करना एवं पर्यावरण शिक्षा में शोध एवं प्रशिक्षण कार्यक्रमों को प्रोत्साहित करना।

ख. समाज में पर्यावरणीय जागरूकता के प्रचार प्रसार हेतु सामजिक संगठनों, स्वैच्छिक संस्थाओं, जनसंचार माध्यमों, शिक्षण संस्थओं आदि की सहभागिता को प्रोत्साहित करना।

ग. उपभोक्ताओं में पर्यावरणीय के प्रति जागरूकता एवं पर्यावरण अनुकूल उत्पादों को बढ़ावा देने हेतु वन एवं पर्यावरण मंत्रालय द्वारा वर्ष 1991 से **ईको मार्क योजना** आरम्भ की है।

घ. पर्यावरण सम्बन्धी शिक्षा, जागरूकता और प्रशिक्षण को बढ़ावा देने हेतु राष्ट्रीय योजना भारत सरकार द्वारा 1983-84 से आरम्भ की गयी है।

11.6 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. सामाजिक आयामों पर आधारित पर्यावरणीय नीतियों का प्रमुख लक्ष्य.............है। (सांस्कृतिक विरासत का संरक्षण **या** पर्यावरण संरक्षण)
2. जनसंख्या वृद्धि का.............प्रमुख प्रभाव है। (सामाजिक स्थिरता **या** पर्यावरणीय ह्रास)
3. प्राकृतिक घटकों में............ , जैविक, और पर्यावरणीय तत्व तत्व शामिल होते हैं। (भौतिक **या** अभौतिक)
4. शिक्षा और प्रौद्योगिकी का पर्यावरणीय ....पर सकारात्मक और नकारात्मक दोनों प्रभाव होता है। (स्थिरता **या** अस्थिरता)
5. सामाजिक व्यवहारों को परिवेश के अनुरूप ढालना .... अनुकूलन कहलाता है। (आर्थिक **या** सामाजिक)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. संवैधानिक अधिकार वे अधिकार हैं जिनकी गारंटी संविधान द्वारा दी जाती है।
2. सापेक्ष गरीबी, गरीबी को बढ़ाने के उद्देश्य से किए जाने वाले प्रयासों, रणनीतियों और नीतियों को संदर्भित करता है।

11.7 सारांश (Summary)

इस इकाई में सामाजिक आयामों और पर्यावरण नीतियों के बीच के संबंधों पर चर्चा की गई है। सामाजिक आयाम के अन्तर्गत समाज के आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक एवं आध्यात्मिक आयामों (dimensions) को समाहित किया जाता है। सामाजिक आयाम एक ऐसी अवधारणा है जोकि आर्थिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक परिवर्तन के द्वारा प्रभावित होती आयी है एवं प्रतिक्रिया स्वरूप किसी समाज के सभी क्षेत्रों को प्रभावित करती है। जिसमें प्राकृतिक कारक, सांस्कृतिक मूल्य, आर्थिक क्रियाएं एवं संरचना, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी और शिक्षा महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। इस इकाई में अपने जाना कि सामाजिक आयाम किसी समाज या समुदाय के भीतर व्यक्तियों के बीच पारस्परिक संबंधों और अंत:क्रियाओं को संदर्भित करता है। इसमें मानव व्यवहार के विभिन्न पहलुओं जैसे संचार, सहयोग, संघर्ष समाधान और सामाजिक मानदंड शामिल हैं।

इस इकाई में अपने जाना कि पर्यावरण नीति का वर्णन करने का एक तरीका यह है कि इसमें दो प्रमुख शब्द शामिल हैं: पर्यावरण और नीति। पर्यावरण भौतिक पारिस्थितिक तंत्र को संदर्भित करता है लेकिन यह सामाजिक आयाम (जीवन की गुणवत्ता, स्वास्थ्य) और आर्थिक आयाम (संसाधन प्रबंधन, जैव विविधता) को भी ध्यान में रख सकता है।

यह बताता है कि कैसे आधुनिक आर्थिक विकास ने प्राकृतिक संसाधनों का दोहन किया और पर्यावरणीय क्षरण को जन्म दिया। पर्यावरण नीतियों के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक आयामों को शामिल करना आवश्यक है। इसमें यह भी बताया गया है कि कैसे सामाजिक आयाम, जैसे सांस्कृतिक और आर्थिक कारक, पर्यावरण पर प्रभाव डालते हैं। इस इकाई में यह समझाया गया है कि पर्यावरण संरक्षण के लिए सामाजिक आयामों का पर्यावरण नीतियों में समावेश किस प्रकार से आवश्यक है और इसके बिना पर्यावरणीय चुनौतियों का समाधान संभव नहीं है।

11.8 शब्दावली (Glossary)

- **सामाजिक अनुकूलन (Social Adaptation):** सामाजिक अनुकूलन व्यक्ति को समाज में एकीकृत करके आत्म-बोध में सुधार करता है। प्रत्येक व्यक्ति को सामंजस्यपूर्ण संबंधों के लिए जिम्मेदारी साझा करनी चाहिए। ये समाजीकरण प्रक्रियाएं लोकतंत्र में विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं जहां कार्य और जिम्मेदारी साझा की जाती हैं।
- **सामाजिक पारिस्थितिकीय (Social Ecology):** सामाजिक पारिस्थितिकी एक अंत:विषय क्षेत्र है जो लोगों और उनके पर्यावरण के बीच संबंधों का अध्ययन करता है और ये रिश्ते समग्र रूप से समाज और पर्यावरण को किस प्रकार से प्रभावित करते हैं और ये रिश्ते समग्र रूप से समाज और पर्यावरण को कैसे प्रभावित करते हैं। सामाजिक पारिस्थितिकी लोगों, समूहों और संस्थानों की परस्पर निर्भरता पर भी विचार करती है।
- **सार्वजनिक स्वास्थ्य (Public Health):** यह लोगों और उनके समुदायों के स्वास्थ्य की रक्षा और सुधार का विज्ञान है। यह कार्य स्वस्थ जीवन शैली को बढ़ावा देने, बीमारी और चोट की रोकथाम पर शोध करने और संक्रामक रोगों का पता लगाने, उन्हें रोकने और उनका जवाब देने के द्वारा प्राप्त किया जाता है।
- **गरीबी उन्मूलन (Poverty Eradication):** गरीबी को कम करने या खत्म करने के उद्देश्य से किए जाने वाले प्रयासों, रणनीतियों और नीतियों को संदर्भित करता है।
- **स्वच्छ जल (Clean Water) :** इसे पीने योग्य पानी अथवा पीने का पानी भी कहा जाता है, सतही और ज़मीनी स्रोतों से आता है और इसे ऐसे स्तरों पर उपचारित किया जाता है जो उपभोग के लिए राज्य और संघीय मानकों को पूरा करते हैं। प्राकृतिक स्रोतों से प्राप्त पानी को सूक्ष्मजीवों, बैक्टीरिया, विषैले रसायनों, वायरस और मल पदार्थों के लिए उपचारित किया जाता है।
- **आर्थिक क्रिया (Economic Activity):** आर्थिक क्रिया एक ऐसी प्रक्रिया है जो वस्तुओं या सेवाओं का उत्पादन करने के लिए संसाधनों जैसे इनपुट का उपयोग करती है। इन क्रियायों में उत्पादों या

सेवाओं का निर्माण, वितरण या उपयोग शामिल हो सकता है। आर्थिक क्रियायों में सामान या सेवाएँ खरीदना या बेचना भी शामिल हो सकता है।

- **सार्वजनिक सम्पदा (Public Property):** सार्वजनिक सम्पदा वह सम्पदा है जो सरकार या उसकी एजेंसियों के स्वामित्व में है और सार्वजनिक उपयोग के लिए समर्पित है। इसका तात्पर्य उस उपयोग से भी हो सकता है जिसके लिए सम्पदा का उपयोग किया जाता है। सार्वजनिक सम्पदा को सभी की सामान्य सम्पदा माना जाता है और इसकी सुरक्षा और संरक्षण करना महत्वपूर्ण है क्योंकि यह सार्वजनिक कल्याण के लिए बनाई गई है।
- **पर्यावरण अवनयन (Environmental degradation):** पर्यावरणीय क्षरण संसाधनों की कमी, पारिस्थितिक तंत्र के विनाश और वन्यजीवों के विलुप्त होने के कारण पर्यावरण में गिरावट की प्रक्रिया है। इसे किसी भी पर्यावरणीय परिवर्तन द्वारा दर्शाया जा सकता है जिसे हानिकारक या अवांछनीय माना जाता है।
- **संवैधानिक अधिकार (Constitutional Rights):** संवैधानिक अधिकार वे अधिकार हैं जिनकी गारंटी संविधान द्वारा दी जाती है। भारत का संविधान अपने नागरिकों को छह मौलिक अधिकारों की गारंटी देता है।
- **जीने के अधिकार (Right to Life):** जीवन का अधिकार एक मौलिक मानव अधिकार है जिसे कई देशों और संविधानों द्वारा मान्यता प्राप्त और संरक्षित किया गया है। इसका तात्पर्य यह है कि लोगों को जीने का अधिकार है और दूसरों का भी इसी तरह का कर्तव्य है कि वे उस अधिकार का सम्मान करें और उसका उल्लंघन न करें। जीवन के अधिकार में सम्मान के साथ जीने का अधिकार, आजीविका का अधिकार और स्वस्थ वातावरण का अधिकार शामिल है।
- **अवसरवादी दृष्टिकोण (Opportunistic Approach):** अवसरवादी दृष्टिकोण उन स्थितियों से निपटने का एक आत्म-केन्द्रित, स्वार्थी तरीका है जो दूसरों की भावनाओं को नजरअंदाज करता है। इसकी विशेषता सिद्धांतों या दूसरों के लिए परिणामों की परवाह किए बिना परिस्थितियों का लाभ उठाना है।
- **आजीविका की सुरक्षा (Security of Livelihood):** आजीविका सुरक्षा एक परिवार की अपनी बुनियादी जरूरतों को पूरा करने और अपने बुनियादी अधिकारों को महसूस करने की क्षमता है। इसमें भोजन, पानी, स्वास्थ्य, शिक्षा, आवास और सामुदायिक भागीदारी जैसी जरूरतों को पूरा करने के लिए आय और संसाधनों तक पहुंच शामिल है।
- **सशक्तिकरण (Empowerment):** सशक्तिकरण की प्रचलित विचारधारा का तात्पर्य निम्न शक्ति समूह की शक्ति को बढ़ाना है ताकि वह उच्च शक्ति समूह के बराबर हो जाए। सशक्तिकरण व्यक्तिगत लक्ष्यों को निर्धारित करने और उन तक पहुंचने के लिए दूसरों की क्षमता और प्रभावशीलता को बनाने, विकसित करने और बढ़ाने के लिए उचित उपकरण, संसाधन और वातावरण प्रदान करने की पारस्परिक प्रक्रिया है।
- **मानव केंद्रित विकास (Human Centric Development):** मानव-केंद्रित विकास एक समग्र दृष्टिकोण है जो निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में उनकी भागीदारी सुनिश्चित करके लोगों और समुदायों के जीवन को बेहतर बनाने पर केंद्रित है। यह मानता है कि विकास केवल आर्थिक वृद्धि या बुनियादी ढांचा परियोजनाओं के बारे में नहीं है, बल्कि उन अद्वितीय सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक संदर्भों पर विचार करने के बारे में भी है जिनमें लोग रहते हैं।
- **सतत विकास (Sustainable Development):** सतत विकास वह विकास है जो भविष्य की पीढ़ियों की अपनी जरूरतों की पूर्ति करने की क्षमता से समझौता किए बिना वर्तमान की जरूरतों की पूर्ति करता है।

- **आधारभूत आवश्यकता (Basic Needs):** यह उपभोग का वह न्यूनतम स्तर है जिसकी मनुष्य को जीवित रहने और फलने-फूलने के लिए आवश्यकता होती है। इसके कुछ उदाहरणों में भोजन, पानी, हवा, आश्रय, कपड़े, परिवहन, शिक्षा, मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य, गुणवत्तापूर्ण स्वास्थ्य देखभाल तक पहुंच और स्वच्छता शामिल हैं।

11.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. पर्यावरण संरक्षण 2. सामाजिक स्थिरता 3. भौतिक
4. स्थिरता 5. सामाजिक

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. सत्य 2. असत्य

11.10 संदर्भ सहित ग्रन्थ (Bibliography)

- सिन्हा, मेघा (2007) पर्यावरण और पारिस्थितिकीय तन्त्र, वन्दना पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
- त्रिपाठी, रेणु (2011) पर्यावरण भूगोल, ओमेगा पब्लिकेशन्स, दिल्ली।
- उत्तराखण्ड उदय, उत्तराखण्ड दशक 2000-2010 (नवम्बर 2010) अमर उजाला पब्लिकेशन्स लिमिटेड, नोएडा।

11.11 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

- Sinha K. Rajiv (2007) Environmental Crisis and Human at risk, INA Shree Publishers, Jaipur.
- Bhattacharya, R.N. (Ed.) (2001) Environmental Economics – An Indian Perspective, OUP, New Delhi.

11.12 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay type Questions)

1. भारत में सामाजिक आयाम और पर्यावरणीय नीतियों के बीच परस्पर संबंध पर कीजिए।
2. सामाजिक आयामों के संदर्भ में पर्यावरण नीति के निहितार्थ व मूल्यांकन कीजिए।
3. सामाजिक आयामों के परिवर्तन और पर्यावरणीय स्थिरता को बढ़ावा देने में शिक्षा और प्रौद्योगिकी की भूमिका का मूल्यांकन कीजिए।

इकाई 12 भारत में पर्यावरणीय एवं पारिस्थितकीय आन्दोलन (Environmental and Ecological Movements in India)

12.1 प्रस्तावना (Introduction)

12.2 उद्देश्य (Objectives)

12.3 भारत में पर्यावरणीय तथा पारिस्थितकीय आन्दोलन (Environmental and Ecological Movements in India)

- 12.3.1 चिपको आंदोलन (Chipako Movement)
- 12.3.2 साइलेन्ट वैली आंदोलन (Silent Valley Movement)
- 12.3.3 एप्पिको आंदोलन (Eppico Movement)
- 12.3.4 जंगल बचाओ आंदोलन (Save Forest Movement)
- 12.3.5 टिहरी बाँध आंदोलन (Tehari Dam Movement)
- 12.3.6 नर्मदा बचाओ आंदोलन (Save Narmada Movement)
- 12.3.7 गंगा बचाओ आंदोलन (Save Ganga Movement)
- 12.3.8 भारत में अन्य पर्यावरणीय आंदोलन (Other Environmental Movement in India)

12.4 भारत में पर्यावरणीय तथा पारिस्थितकीय आन्दोलनों के कारण (Reasons for Environmental and Ecological movements in India)

12.5 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

12.6 सारांश (Summary)

12.7 शब्दावली (Glossary)

12.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)

12.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

12.10 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

12.11 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay type Questions)

12.1 प्रस्तावना (Introduction)

भारत में पर्यावरणीय और पारिस्थितकीय आंदोलनों का इतिहास सामाजिक जागरूकता और संघर्ष का एक अद्वितीय उदाहरण प्रस्तुत करता है। यह आंदोलन विकास के नाम पर प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुंध दोहन और पर्यावरणीय क्षति के खिलाफ उठ खड़ा हुआ। पर्यावरणीय संकट और विकास नीतियों में सामाजिक सरोकारों की उपेक्षा ने लोगों को अपने प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा के लिए।अदने पर मजबूर किया। चिपको, नर्मदा बचाओ, और अन्य आंदोलनों ने इस दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, जिससे पर्यावरण संरक्षण और सामाजिक अधिकारों के बीच एक नई जागरूकता पैदा हुई। भारत में इन आंदोलनों ने ना केवल पर्यावरणीय दृष्टिकोण से बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और कानूनी दृष्टिकोण से भी महत्वपूर्ण बदलाव लाए हैं।

12.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप –

- ✓ पर्यावरणीय जागरूकता को बढ़ावा देंगे।
- ✓ पर्यावरणीय जागरूकता में सामाजिक सरोकारों को समझ सकेंगे।
- ✓ पर्यावरणीय नीतियों को समझेंगे।
- ✓ पर्यावरणीय एवं पारिस्थितकीय आंदोलनों के कारणों को समझ सकेंगे।
- ✓ स्थानीय और राष्ट्रीय स्तर पर आंदोलनों का प्रभाव को जान सकेंगे।

12.3 भारत में पर्यावरणीय तथा पारिस्थितकीय आन्दोलन (Environmental and Ecological Movements in India)

पर्यावरण आंदोलन के घटित होने के पीछे मुख्य कारण पर्यावरणीय क्षरण के साथ-साथ विकास नीतियों में सामाजिक सरोकारों की भारी उपेक्षा रही है। चिपको, जंगल बचाओ तथा नर्मदा बचाओ आन्दोलन में पर्यावरण संरक्षण की प्रक्रिया में सामाजिक आयामों के समावेश पर जोर दिया। इन आन्दोलनों ने परम्परागत सामाजिक पर्यावरणीय मूल्यों के साथ-साथ नवीन सामाजिक अवधारणाएं जैसे पर्यावरणीय लोकतंत्र एवं नारी पर्यावरणवाद आदि का स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। भारत में घटित मुख्य पर्यावरणीय आंदोलनों का वर्णन एवं विश्लेषण निम्नवत है-

12.3.1 चिपको आंदोलन (Chipako Movement)

उत्तराखण्ड को जन आंदोलनों की धरती भी कहा जाता है, उत्तराखण्ड का जनमानस सदैव से ही अपनी संस्कृति, जल, जंगल, जमीन और बुनियादी अधिकारों की रक्षा हेतु सदैव से ही संवेदनशील एवं जागरूक रहा है। इस सन्दर्भ में यहाँ पर यह उल्लेख करना आवश्यक है कि 1930 में टिहरी रियासत के तिलाड़ी नामक स्थान पर जब ग्रामीण लोग जंगल एवं चरागाहों पर अपने बुनियादी अधिकारों को लेकर आंदोलित थे तथा राजाज्ञा के विरूद्ध महापंचायत कर रहे थे तो रियासत के सैनिकों ने उन पर गोलियाँ बरसायी जिसमें अनगिनत आंदोलनकारियों को प्राणों का बलिदान करना पड़ा यह आंदोलन जलियावाला बाग नरसंहार की भाँति प्रसिद्ध हो गया तथा अपने बुनियादी अधिकारों के लिये संघर्षरत जनमानसों के लिए एक अनुपम प्रेरणा इतिहास में अंकित कर गया।

उत्तराखण्ड की इसी ऐतिहासिक आंदोलनों की भूमि पर जल जंगल और जमीन पर अपने बुनियादी अधिकारों की रक्षा हेतु 26 मार्च 1974 को उत्तराखण्ड के चमोली जनपद की हेंवल घाटी में स्थित रैणी गांव में ग्रामीण महिलाओं द्वारा गांव के महिला मंगल दल की प्रधान **गौरा देवी** के नेतृत्व में चिपको आंदोलन का श्रीगणेश किया। इस आंदोलन की शुरुआत विकास के नाम पर जंगल कानूनों का सहारा लेकर वनों के काटन पर उतारू ठेकेदारों, इमारती लकड़ी (timber) व्यापारियों तथा वन अधिकारियों का गाँधीवादी तौर तरीकों से विरोध किया गया तथा आंदोलनकारी

महिलायें अपनी जान की परवाह किये बगैर वृक्षों से घेरा बनाकर चिपक गयी। इस अनूठे विरोध करने तथा वृक्षों की रक्षा करने की प्रक्रिया **चिपको आन्दोलन** के रूप में प्रसिद्ध हो गयी।

यद्यपि चिपको आंदोलन का जन्म लेना एक स्वतः स्फूर्त तथा स्थानीय घटनाक्रमों का परिणाम था परन्तु इसके पीछे लम्बे समय से दीर्घकालिक कारण काम कर रहे थे। सन 1964 में गाँधीवादी सर्वोदयी सामाजिक कार्यकर्ता **जयप्रकाश नारायण** के विचारों से प्रेरित होकर **चंडी प्रसाद भट्ट (Chandi Prasad Bhatt)** द्वारा गोपेश्वर में **दशोली ग्राम स्वराज्य संघ** (Dasholi Gram Swaraj Sangh) का गठन किया। जिसका नाम आगे चलकर **दशोली ग्राम स्वराज्य मण्डल** हो गया। इस संगठन का मुख्य उद्देश्य पर्यावरण संरक्षण के साथ-साथ कृषि, आर्थिक स्वावलंबन, सामुदायिक विकास और ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के प्रति जनता को जागरूक और एकजुट करना रहा है।

60 और 70 के दशक में जहां एक ओर लोग पर्यावरण संरक्षण और बुनियादी अधिकारों के लिए लामबंद हो रहे थे, वहीं दूसरी ओर वन विभाग ठेकेदारों और लकड़ी व्यापारियों के साथ मिलकर पेड़ों की नीलामी और कटाई की नीतियों के जरिए मुनाफा कमाने की कोशिश कर रहा था। इस संदर्भ में, संघ ने वनों को काटने के लिए नीलामी आयोजित करने की वन विभाग की नीतियों के खिलाफ चमोली जिले के मुख्यालय गोपेश्वर में एक विशाल विरोध प्रदर्शन किया। मार्च, 1973 में इलाहाबाद के खेल उत्पाद बनाने वाली कम्पनी सिमोन को नीलामी हेतु मिले मण्डल तथा फाटा के जंगलों में वृक्षों की कटाई के ठेके के विरुद्ध जोरदार प्रदर्शन हुए। पर्यावरण संरक्षण के प्रति जन जागरूकता का परिणाम यह हुआ कि गांव-गांव में महिला मंगल दलों की स्थापना होने लगी। इसी जन जागरूकता अभियान के अन्तर्गत रैंणी गाँव की महिला मंगल दल की प्रधान गौरा देवी पर्यावरणीय एवं सामाजिक कार्यकर्त्ताओं जैसे -चण्डी प्रसाद भट्ट, गोविन्द सिंह रावत, वासवानन्द नौटियाल तथा हयात सिंह के सम्पर्क में आई। उपरोक्त अभियान का परिणाम यह हुआ कि ग्रामीण महिलाएं आत्मविश्वास से ओत-प्रोत हो गयीं तथा एक महान आंदोलन की पृष्ठ भूमि तैयार हो गयी।

जनवरी, 1974 में जब वन विभाग ने रैंणी गाँव की ओर अपना रूख किया एवं वहाँ कटान हेतु 2451 पेड़ों का छपान किया गया। जिसके फलस्वरूप गोपेश्वर में रैंणी के कटान के विरुद्ध सभा रैली तथा प्रदर्शन हुए। प्रशासन, वन विभाग तथा ठेकेदारों ने मिलीभगत कर एक चाल खेली एवं 1962 के पश्चात् सड़क निर्माण में खेतों के मुआवजे हेतु सभी सीमांत गाँव जिसमें रैंणी, लाता, मलारी आदि शामिल थे, उन गावों के निवासियों को जिला मुख्यालय गोपेश्वर बुलाया तथा मुआवजे का दिन 26 मार्च,1974 का रखा गया। 26 मार्च के दिन जब सभी गाँवों के पुरुष जिला मुख्यालय गोपेश्वर में मौजूद थे एवं दशौली ग्राम स्वराज्य संघ के सभी कार्यकर्त्ताओं को जिला मुख्यालय में प्रशासन द्वारा अपने नियोजित कार्यक्रमों में उलझा दिया एवं उधर ठेकेदारों व वन अधिकारियों के नेतृत्व में सशस्त्र कर्मियों तथा मजदूरों का समूह गुपचुप तरीके से रैंणी गाँव की ओर रवाना हुआ एवं गाँव पूर्व ही वाहनों से उतर कर चुपचाप ऋषिगंगा नदी के किनारे किनारे गोपनीय तरीकों से जंगलों की ओर बढ़ने लगे। वह अपनी योजना की सफलता के प्रति पूरी तरह से आशवस्त थे क्योंकि सूचना तथा पुरुषों के अभाव में उन्हें किसी प्रकार के संघर्ष की उम्मीद नहीं थी। उनकी इस हलचल पर एक बालिका की निगाह पड़ गयी जिसने यह सूचना गौरा देवी को दे दी।

गौरा देवी ने गाँव की महिलाओं का आह्वान किया तथा अपने साथ 27 महिलाओं को साथ लेकर वह निर्णायक संघर्ष का विचार मन में लेकर जंगल के कटान क्षेत्र की ओर चल पड़ीं। गौरा देवी के नेतृत्व में महिलाओं ने विनीत स्वर में मजदूरों से कहा कि, ***"भाईयो जंगल हमारा मायका है, इससे हमें जड़ी बूटी,फल, सब्जी और लकड़ी मिलती हैजंगल काटोगे तो बाढ़ आयेंगी हमारे बगड़ बह जायेंगे, आप लोग हमारे साथ चलो जब हमारे मर्द आ जायेंगे तो फैसला होगा।"***

इस पर ठेकेदार तथा जंगलात के आदमी उन्हें डराने धमकाने लगे यहाँ तक कि सरकारी कार्य को बाधित करने के आरोप में गिरफ्तार कर जेल में डालने की धमकी भी दे डाली एवं गौरा देवी को अपमानित करने के लिए उन पर थूक तक दिया। जब वन अधिकारों एवं ठेकेदारों के सारे हथकंडे असफल हो गये तो उन्होंने महिलाओं पर बल का प्रयोग प्रदर्शित करते हुए गौरा देवी पर बन्दूक तान दी।

अब गौरा देवी पूरे रौद्र रूप में आ गयी एवं ललकार कर बंदूक के आगे अपनी छाती तानकर कहा "***मार लो हमें गोली और लूट लो हमारा मायका***" गौरा देवी के अद्म्य साहस से अन्य महिलाओं में भी शक्ति का अद्भुत संचार हुआ एवं वह भी हथियारों से डरे बगैर जंगल काटने का विरोध करते हुए पेड़ों से चिपक गयीं। जोर शोर से नारे लगाकर ठेकेदारों, वन विभाग के अधिकारियों को यह कहकर ललकारने लगीं कि पहले हमें काटो फिर जंगल। जब वन विभाग के अधिकारियों, ठेकेदारों एवं कटाई कर्मियों ने महिलाओं का रौद्र रूप तथा जंगल की रक्षा की खातिर जान न्यौछावर करने का हौसला देखा तो उन्होंने वहाँ से फिलहाल लौटने में ही भलाई समझी परन्तु महिलाएं पूरी तरह से दृढ़ रहीं एवं दिन रात जंगल में रहकर पेड़ों की चौकसी में लगी रहीं।

अगले दिन जब दशोली स्वराज्य संघ के प्रमुख कार्यकर्ता तथा गाँव के पुरुष लौटकर आये तो आंदोलन एवं विरोध प्रदर्शन और तीव्र हो गया। चिपको आन्दोलन तथा महिलाओं के साहस एवं संघर्ष की गूंज शीघ्र ही पूरे उत्तराखण्ड में फैल गयी तथा आसपास के गाँव जैसे लाता तथा हेंवल घाटी के लोग भी इस आंदोलन से जुड़ गये। तत्कालीन उत्तर प्रदेश के राज्य के मुख्यमंत्री **हेमवती नंदन बहुगुणा** ने **डॉ.वीरेन्द्र कुमार** की अध्यक्षता में एक जाँच समिति बनाई। जिसने जाँच के बाद आंदोलनकारियों के पक्ष में निर्णय सुनाया एवं साथ ही अलकनंदा की सहायक नदियों के जंगलों की सुरक्षा को पर्यावरणीय दृष्टि से महत्वपूर्ण बताते हुए पेड़ों के कटान पर पूरी तरह से रोक लगा दी। इस प्रकार पर्यावरण के प्रति अतुलित प्रेम करने तथा उसकी रक्षा के लिए गौरादेवी ने जो अनुकरणीय कार्य किया उसने उन्हें रैंणी गाँव की गौरा देवी से **चिपको वूमन ऑफ इंडिया (Chipko Woman of India)** बना दिया।

12.3.2 साइलेन्ट वैली आंदोलन (Silent Valley Movement)

70 के दशक में सुदूर दक्षिण में केरल राज्य के **पलमकाड** (Palakkad) जिले में जंगलों तथा जैव विविधता की सुरक्षा एवं कुन्थीपुझा नदी जल विद्युत परियोजना के विरोध में यह जन आंदोलन मुखर हुआ। जाने-माने वैज्ञानिक, विद्वान, समाजसेवी, पर्यावरणविद् तथा राजनेताओं जैसे सलीम अली, एम. एस. स्वामिनाथन तथा सुब्रह्मण्यम् स्वामी, समेत प्रकृति संरक्षण के लिए अंतर्राष्ट्रीय संघ (International Union for Conservation of Nature) द्वारा केन्द्र सरकार से उपरोक्त परियोजना को रोक कर साईलेन्ट वैली को संरक्षित क्षेत्र घोषित करने की माँग की। प्रकृति संरक्षण समिति, साईलैण्ट वैली संरक्षण समिति तथा केरलशास्त्र साहित्य परिषद् आदि संस्थायें विरोध प्रदर्शन तथा आंदोलन को आम जनमानस से जोड़कर इसे व्यापक रूप दिया एवं केन्द्र तथा राज्य सरकारों हेतु दबाव की रणनीति कारगर रूप से लागू किया। केन्द्र सरकार द्वारा प्रो.एम.जी.के.मैनन (Prof. M. G. K. Menon) की अध्यक्षता में आयोग (Commission) बैठाया जिसकी संस्तुति के बाद में परियोजना को बंद किया गया तथा वर्ष 1985 में तत्कालीन प्रधानमंत्री **राजीव गाँधी** ने इसे नेशनल पार्क घोषित किया जोकि आगे चलकर जीवमंडल उद्यान (Biosphere Park) में बदल गया।

12.3.3 एप्पिको आंदोलन (Eppico Movement)

चिपको आंदोलन से प्रेरणा पाकर पर्यावरण संरक्षण की जन आंदोलन रूपी यह मुहिम धीरे-धीरे कर देश के तमिलनाडु, कर्नाटक, केरल तथा महाराष्ट्र राज्यों में प्रसारित हो गयी तथा

सह्याद्री पर्वतमाला अर्थात् पश्चिमी घाट पर स्थिति वनों एवं पर्यावरण संरक्षण हेतु एप्पिको आंदोलन ने जन्म लिया। "**एप्पिको**" शब्द कन्नड़ भाषा से लिया गया है जिसका अर्थ वृक्षों का अलिंगनकर उनसे चिपक कर उनकी रक्षा हेतु आंदोलन करना है।

आजादी के बाद से ही आर्थिक विकास के तीव्र बनाने हेतु पश्चिमी घाट में जल विद्युत परियोजनाओं, पेपर तथा पल्प उद्योगों की स्थापना के कारण ही प्राकृतिक संसाधनों तथा वनों का अन्धाधुन्ध दोहन किया गया। ग्रामीण आदिवासियों तथा जनमानस को ना केवल विस्थापित होना पड़ा अपितु वह अपनी जीवन निर्वहन की आजीविका से वंचित हो गए। सामाजिक कार्यकर्ता **पांडुरंगा हेगड़े (Panduranga Hegde)** के नेतृत्व में सितम्बर 1983 में कलासे के जंगलों (Kalase forest) में **सालकनी** (Salkani) गाँव से आंदोलन आरम्भ हुआ। आंदोलनकारियों ने पदयात्रा, नुकड़ नाटक, स्थानीय गीत तथा संगीत के माध्यम से जन जागरूकता अभियान चलाकर आंदोलन को नई गति प्रदान की तथा कन्नड़ भाषा में एक नारा दिया "उबसु, बेलेसु तथा बालासु" अर्थात् ***'वन संसाधनों को बचाएं, बढ़ाएं और तर्कसंगत उपयोग करें' (save, grow, and use forest resources rationally)*** का मंत्र प्रसारित किया।

12.3.4 जंगल बचाओ आंदोलन (Save Forest Movement)

यह आंदोलन अस्सी के दशक के आरम्भ में तत्कालीन बिहार के पठारी तथा आदिवासी क्षेत्रों यानि आधुनिक झारखण्ड राज्य के सिंह भूमि जिले से आरम्भ हुआ एवं देखते ही देखते यह **झारखण्ड** के सभी क्षेत्रों से होता हुआ पड़ोसी राज्यों **उड़ीसा, मध्य प्रदेश एवं छत्तीसगढ़** के वन तथा आदिवासी क्षेत्रों में फैल गया। आजादी के पश्चात् झारखण्ड राज्य की अपार खनिज सम्पदा के दोहन, खान-खदानों के विस्तार, तीव्र औद्योगीकरण तथा महत्वाकांक्षी परियोजनाओं जैसे दामोदर घाटी परियोजनाओं आदि के विकास के चलते आदिवासियों को अपने परम्परागत आवास क्षेत्रों से विस्थापन का संकट झेलना पड़ा। औपनिवेशिक काल से चले आ रहे वन कानूनों की आड़ में नौकशाहों, वन अधिकारियों, व्यापारियों तथा ठेकेदारों की साँठ-गाँठ से वनों का अन्धाधुन्ध दोहन, शोषण तथा लूट का अन्तहीन सिलसिला तीव्र हो गया। शोषण, अत्याचार, अन्याय, बेरोजगारी एवं गरीबी की मार झेल रहे आदिवासियों ने सिंह भूमि जिले से **जंगल बचाओ आंदोलन** आरम्भ कर दिया देखते ही देखते इस आंदोलन को पर्यावरणीय तथा सामाजिक कार्यकर्त्ताओं, गैर सरकारी संगठनों (NGOs) तथा मीडिया कर्मियों का समर्थन मिलने लगा।

12.3.5 टिहरी बाँध आंदोलन (Tehari Dam Movement)

एशिया के तीसरे तथा विश्व के चौथे सबसे ऊँचे बाँध यानी टिहरी बाँध के निर्माण के विस्थापन तथा पुर्नवास के विरोध में एक व्यापक जनआंदोलन उत्तराखण्ड के टिहरी जिले में आरम्भ हुआ। इस आंदोलन की शुरुआत उत्तराखण्ड में भगीरथी तथा भिलंगना के संगम पर स्थिति टिहरी नगर में वन रही विशाल जल विद्युत परियोजना के विरुद्ध किया गया। मशहूर पर्यावरणविद् तथा चिपको आंदोलनकारी **सुन्दर लाल बहुगुणा** ने इस आंदोलन को राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय पटल पर स्थापित किया। इस महत्वकांक्षी परियोजना को योजना आयोग की मंजूरी 1972 में मिली तथा इसके निर्माण हेतु भारत सोवियत संघ के मध्य समझौता हुआ। इस बाँध को साकार रूप देने हेतु भारत तथा उत्तर प्रदेश सरकार ने संयुक्त रूप से टिहरी जल विद्युत विकास निगम (Tehri Hydropower Development Copration) का गठन किया गया। इस बाँध की कुल विद्युत उत्पादन क्षमता 2400 मेगावाट आंकी गई थी। इससे 2.70 लाख हैक्टेअर भूमि की सिंचाई और दिल्ली हेतु प्रतिदिन 300 घनफुट प्रति सैकंड (cusec) पानी की आपूर्ति करने का अनुमान लगाया गया था। बांध में सर्वाधिक विवाद के प्रश्न तथा आंदोलन का मुख्य कारण निम्न रहें थे-

1. बांध के कारण बड़ी मात्रा में कृषि भूमि, गाँव, जंगल और ऐतिहासिक और सांस्कृतिक रूप से महत्वपूर्ण टिहरी शहर जलमग्न होने वाला था, जिससे विस्थापन और पुनर्वास की गंभीर समस्या पैदा हो गई थी।
2. टिहरी जल विद्युत विकास निगम द्वारा विस्थापन एवं पुनर्वास हेतु परिवारों को चिन्हित करने तथा नये पुनर्वास स्थल पर भूमि आवंटन में प्रक्रिया की मनमानी एवं धीमी गति से जनता का असंतोष और भी बढ़ गया था।
3. बांध के कारण एक बड़ी झील बनने और पुलों व सड़कों के डूबने से टिहरी जिले के कई कस्बे और सैकड़ों गांव जिला मुख्यालय से पूरी तरह कट गए।
4. 1991 में उत्तरकाशी में आये भयानक भूकम्प ने इस बाँध परियोजना को और अधिक संवेदनशील बना दिया।
5. भागीरथी पर बाँध बनने से गंगा के अविरल धारा का प्रवाह रुकने वाला था। अतः धार्मिक एवं सांस्कृतिक प्रश्नों से जनता उद्वेलित हो रही थी।

बाँध के विरोध का सिलसिला वर्ष 1965 से ही आरम्भ हो गया था जब टिहरी रियासत की राजमाता **कमलेन्दुमती शाह** ने इस परियोजना का विरोध किया। स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी एवं टिहरी लोकसभा सीट से तत्कालीन सांसद **त्रेपन सिंह नेगी** ने लोक सभा में बाँध निर्माण तथा उसके पर्यावरण एवं भूगर्भीय प्रभावों के सन्दर्भ में बनी रिर्पोट को सार्वजनिक करने हेतु सवाल उठाया। सरकार द्वारा पर्यावरण परियोजना के प्रभावों के ऑकलन हेतु एक समिति का गठन किया गया जिसने अंतिम स्वीकृति देने से पूर्व दो बार परियोजना को पर्यावरणीय आधार पर स्वीकृति देने से इंकार कर दिया था।

वर्ष 1991 में परियोजना क्षेत्र से मात्र 70 किमी दूर उत्तरकाशी में भयानक भूकम्प आया जिससे पुनः हिमालयी क्षेत्र में बनने वाले बड़े बाँधों और खासकर टिहरी बाँध का विरोध तीव्र हो गया। **सुन्दर लाल बहुगुणा** के नेतृत्व में टिहरी बाँध आंदोलनकारियों ने वर्ष 1991 में 76 दिन तक धरना प्रदर्शन कर परियोजना को रूकवाया एवं जिससे आंदोलनकारियों की गिरफ्तारी के पश्चात् ही पुलिस संरक्षण में काम आरम्भ हो सका। बाँध निर्माण की विरोध में सुन्दर लाल बहुगुणा द्वारा पुनः वर्ष 1992 तथा वर्ष 1995 में धरना तथा अनशन आरम्भ कर दिया गया।

अन्ततः सरकार ने बाँध की पुर्नसमीक्षा का वादा किया परन्तु बाद में परियोजना पर कार्य आरम्भ कर दिया। **सुन्दर लाल बहुगुणा** द्वारा फिर से दिल्ली में अनशन किया गया तथा केन्द्र सरकार द्वारा **हनुमंत राव समिति (Hanumantha Rao Committee)** का गठन किया गया। बाँध आंदोलनकारियों द्वारा समय-समय पर परियोजना के विभिन्न पहलुओं को लेकर उच्च तथा उच्चतम न्यायालय (High and Supreme Court) में याचिकायें दायर की गयीं। अन्ततः उच्चतम् न्यायालय के आदेश पर 30 नवम्बर, 2005 को सुरंग (tunnel) बंद करवा कर टिहरी बाँध परियोजना में झील के भरने का कार्य आरम्भ हुआ तथा लगभग 190 साल पुराने शहर टिहरी ने जल समाधि ले ली।

तमाम् गतिरोधों के बावजूद टिहरी बाँध परियोजना का कार्य सम्पन्न हुआ परन्तु इससे जुड़े विषय पर्यावरण सुरक्षा, विस्थापन तथा पुर्नवास आज भी विवाद का विषय बने हुए हैं साथ ही हिमालयी क्षेत्रों में बड़ी बाँध परियोजनाओं के विकास के सन्दर्भ में इस बाँध परियोजना ने नए-नए प्रश्न चिन्ह लगाकर स्थानीय जनमानस को उत्तेजित तथा आंदोलित कर दिया है।

12.3.6 नर्मदा बचाओ आंदोलन (Save Narmada Movement)

नर्मदा बचाओ आंदोलन गुजरात तथा मध्यप्रदेश में नर्मदा घाटी में बनने वाले बांधों के विरुद्ध आदिवासियों, किसानों, ग्रामीण जनमानस विशेषतौर पर महिलाओं पर्यावरणविदों तथा मानवाधिकार संगठनों द्वारा आयोजित एक ऐसा आंदोलन रहा है जोकि कई दशकों तक सक्रिय रहा। इस आंदोलन के प्रणेता जानी मानी पर्यावरण कार्यकत्री **मेघा पाटकर** रही हैं साथ ही इस

आंदोलन को **बाबा आम्टे** जैसे समाजसेवियों तथा बुकर पुरस्कार से सम्मानित **अरुंधती राय** ने भी गति प्रदान की है।

दरअसल नर्मदा नदी के जल तथा इस पर बनने वाली परियोजनाओं के लाभों के वितरण के सन्दर्भ में गुजरात, मध्यप्रदेश तथा महाराष्ट्र में लंबे समय तक विवाद चलने की स्थिति में केन्द्र सरकार द्वारा अक्टूबर, 1969 में अन्तर्राज्य नदी जल विवाद न्यायाधिकरण यानि नर्मदा जल विवाद न्यायाधिकरण का गठन किया। जिसकी 1979 में दी गयी संस्तुति के अनुसार नर्मदा नदी पर 30 बड़े, 135 मध्यम तथा 3000 लघु बाँध के निर्माण की योजना सरकार द्वारा बनायी गई। साथ ही नर्मदा नदी पर गुजरात के **नवग्राम** में सरदार सरोवर बाँध की ऊँचाई बढ़ाने का भी आदेश पारित किया गया।

मेघा पाटकर ने पाया कि उक्त परियोजना का आरम्भ पर्यावरण संरक्षण तथा विस्थापन के महत्वपूर्ण मामलों की उपेक्षा कर दिया गया तो मेघा पाटकर द्वारा जब 1989 में नर्मदा बचाओं आंदोलन का गठन किया तो उनसे राष्ट्रीय तथा प्रादेशिक स्तर के अनेक पर्यावरण तथा मानवाधिकारों पर आधारित संगठन जुड़ने लगे। सरदार सरोवर बाँध के निर्माण को रूकवाने हेतु मेघा पाटकर ने 22 दिन की भूख हड़ताल की जिसके कारण विश्व बैंक जोकि इस परियोजना हेतु वित्तीय सहायता दे रहा था, उसे मजबूर होकर इस परियोजना की समीक्षा हेतु मोर्स समिति (Morse Commission) का गठन करना पड़ा। जिसमें पाया गया कि यह परियोजना भारत सरकार और विश्व बैंक के मानकों और नीतियों के अनुरूप नहीं है और बाद में विश्व बैंक ने इस परियोजना से अपनी भागीदारी वापस ले ली।

नर्मदा बचाओ आंदोलनकारियों ने उच्चतम् न्यायालय में याचिका दायर करवाई जिसके अन्तर्गत न्यायालय से परियोजना का कार्य रूकवाने की माँग की गयी। न्यायालय द्वारा आंदोलनकारियों का पक्ष लेते हुए तुरन्त परियोजना का कार्य स्थगित करने तथा विस्थापन एवं पुर्नवास समुचित प्रकार से करने का आदेश दिया। इस बीच नर्मदा बचाओं आंदोलन का स्वरूप और भी व्यापक हो गया इसके आंदोलनकारियों ने दिल्ली तक जाकर रैली, प्रदर्शन तथा घरना दिया। अंतत: सर्वोच्च न्यायालय द्वारा सरकार सरोवर बाँध की ऊँचाई 110 मीटर से बढ़ाकर 121.92 मीटर तक करने का आदेश दिया परन्तु साथ ही प्रभावित राज्य सरकारों से बाँध की प्रति 5 मीटर ऊँचाई बढ़ने पर विस्थापन तथा पुर्नवास को संतोषजनक रूप से पूर्ण करने तथा उसे सुनिश्चित करने का आदेश दिया साथ ही इस प्रक्रिया को हर बार दोहराने का आदेश दिया ताकि प्रभावी ढंग से विस्थापन एवं पुर्नवास हो सके।

12.3.7 गंगा बचाओ आंदोलन (Save Ganga Movement)

गंगा तथा इसके उद्गम के स्रोत हिमालय को सभी किस्म के प्रदूषणों से मुक्त कर इसे पुन: निर्मल एवं पवित्र बनाने के उद्देश्य से आरम्भ किया गया है। गाँधीवादी दर्शन तथा विचारधारा पर आधारित इस अभियान को आंदोलन के स्वरूप में बदलने का प्रयास गांधी जयन्ती के अवसर पर पूना में वर्ष 1998 को आगा खान महल से यरवदा जेल की पदयात्रा से आरम्भ हुआ।

इसके पश्चात् से संगोष्ठियों, कार्यशालाओं, रैलियों, पदयात्राओं तथा जनजागरुकता अभियान के माध्यम से आंदोलन को व्यापक स्वरूप देने का प्रयास किया गया। गंगा में बनने वाले बाँधों के विरुद्ध गंगा सेवा अभियानम् के लिए **स्वामी सानन्द (प्रो.जी.डी.अग्रवाल**) वर्ष 2008 तथा 2009 में आमरण अनशन किया। जिसके कारण से गंगा में बनने वाले हिमालयी क्षेत्र में बाँधों पर सरकार द्वारा रोक लगा दी गयी थी। हरिद्वार जिले में गंगा में खनन एवं उत्खनन से गंगा की रक्षा हेतु **स्वामी निगमानन्द** ने 64 दिनों की भूख हड़ताल की तथा इसी अनशन के दौरान उन्हें गंगा की सुरक्षा हेतु अपने प्राणों की आहूति जून 2011 में देनी पड़ी। अंतत: उत्तराखण्ड राज्य सरकार द्वारा हरिद्वार जिले में अवैध खनन पर रोक लगा दी गयी थी।

12.3.8 भारत में अन्य पर्यावरणीय आंदोलन (Other Environmental Movement in India)

भारत में पर्यावरण तथा पारिस्थितिकी तंत्र के सरंक्षण हेतु अनेकों अन्य छोटे बड़े आंदोलन निरन्तर होते रहे हैं। इन आंदोलनों में दून घाटी में खनन गतिविधियों के विरोध में, चिल्का झील बचाओ आंदोलन, कुडकोलम् नाभिकीय परियोजना के विरुद्ध आंदोलन, अरावली बचाओ आंदोलन, बीज बचाओ आंदोलन आदि प्रमुख हैं। छत्तीसगढ़ में श्रमिक संघ शंकर गुहा नियोगी ने वनों के अन्धाधुन्ध दोहन तथा मुनाफाखोरों के विरुद्ध अभियान छेड़ा, चिल्का झील में टाटा की परियोजना के विरुद्ध उड़ीसा में व्यापक आंदोलन हुआ। देहरादून में खनन गतिविधियों के विरुद्ध स्थानीय निवासियों ने व्यापक अभियान छेड़कर खनन गतिविधियों को स्थगित करवा दिया गया।

एक अनूठा तथा अनुपम आंदोलन चमोली जनपद के ग्वालदम् क्षेत्र में **कल्याण सिंह रावत** के नेतृत्व में वर्ष 1995 में आरम्भ हुआ। मैती नामक इस आंदोलन में विवाह के अवसर पर वर के जूते चुराकर नेग (उपहार) लेने की परम्परा को तिलांजली देकर विवाह के अवसर पर मैती यानि मायका की परम्परा का आरम्भ किया गया। इस रस्म के अन्तर्गत विवाह के मंत्रोच्चार तथा पूरी रस्म के साथ वर-वधू मिलकर पेड़ लगाते हैं तथा पेड़ों के पोषण एवं संरक्षण की जिम्मेदारी भी सुनिश्चित करते हैं। वर से मिले पुरस्कार स्वरूप पैसे को मैती संगठन के कोष में, बैंक या पोस्ट ऑफिस में जमा किया जाता है। इन पैसों का सदुपयोग निर्धन छात्र छात्राओं की सहायता, सामाजिक कार्यों तथा पर्यावरण संरक्षण में किया जाता है। इस आंदोलन से पर्यावरण संरक्षण तथा सामाजिक सहभागिता का विकास हो रहा है साथ ही मैती संगठन द्वारा रोपित वन निरंतर हरे भरे तथा विस्तारित हो रहे हैं।

महाराष्ट्र के अहमदनगर में रालेगण सिद्धि में जाने माने समाजसेवी **अन्ना हजारे** ने जल सरंक्षण हेतु परम्परागत तौर तरीकों के प्रयोग एवं आम जनमानस की भागीदारी के साथ एक नया उदाहरण प्रस्तुत किया। जिसके कारण ना सिर्फ पर्यावरण संरक्षण को लाभ हुआ अपितु कृषि की पैदावार में भी काफी वृद्धि हुई। इसी प्रकार राजस्थान के अलवर जिले में में तरुण भारत संघ संख्या के प्रणेता **राजेन्द्र सिसौदिया** ने आम जनमानस के सहयोग से जल संरक्षण हेतु परम्परागत तालाब, जोहड़ों, बांधों तथा बावड़ियों को पुनर्जीवित कर दिया, जिसके फलस्वरूप उन्हें रैमेन **रेमन मैग्सेसे पुरस्कार (Ramon Magsaysay Award)** प्रदान किया गया।

विधिवेत्ता एवं जाने माने पर्यावरणविद् **एम. सी. मेहता** द्वारा उच्चतम् न्यायालय में जनहित याचिकाओं को दायर कर कई महत्वपूर्ण पर्यावरण संरक्षण के मसलों पर उल्लेखनीय कार्य कराया तथा स्वयं उच्चतम् न्यायालय ने समय-समय पर पर्यावरण तथा पारिस्थितिकी तंत्र के संरक्षण हेतु कई सराहनीय फैसले देकर एक नया उदाहरण प्रस्तुत किया है। भारत में पर्यावरणीय कानूनों एवं नीतियो के सामाजिक आयामों के परिपेक्ष्य में व्याख्या का कार्य जनहित में न्यायपालिका द्वारा किया गया है। न्याय पालिका द्वारा विभिन्न वादो में स्वंय भी स्वत: संज्ञान लेते हुए एवं जनहित याचिकाओं के माध्यम से ना सिर्फ महत्वपूर्ण निर्णय लिए अपितु पर्यावरण संरक्षण के लिए सरकारों को महत्वपूर्ण दिशा-निर्देश भी प्रदान किए। न्याय पालिका द्वारा अनेंको वादो में यह स्थापित किया गया कि स्वच्छ वायु, जल एवं पर्यावरण जीवन की बुनियादी आवश्यकता है तथा प्रत्येक व्यक्ति के लिए यह जीवन का अधिकार के अन्तर्गत समाहित है। ऐसा करके न्यायालय द्वारा संविधान के अनुच्छेद 21 के अन्तर्गत गांरटीकृत जीवन के अधिकार की परिभाषा को व्यापक किया।

आज समस्त देश में पर्यावरण तथा पारिस्थितिकी तंत्र के संरक्षण के प्रति जो जन जागृति आयी है उसमें आम जनता, गैर सरकारी संगठनों, पर्यावरणविदों के साथ-साथ पर्यावरणीय आंदोलनों का बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान है।

12.4 भारत में पर्यावरणीय तथा पारिस्थितकीय आन्दोलनों के कारण (Reasons for Environmental and Ecological movements in India)

भारत भूमि में पर्यावरणीय तथा पारिस्थितकीय मूल्यों के प्रति प्रथम जन आंदोलन राजस्थान की जोधपुर रियासत के **खेंजडाली** ग्राम में सन 1787 ई. में हुआ था। जहाँ महाराजा की खेजड़ी के पेड़ों को काटने की राजाज्ञा के विरुद्ध **अमृता देवी** के नेतृत्व में विश्नोई समाज के हजारों लोग खेजड़ी के वृक्षों से चिपक गए थे। इस संघर्ष में **अमृता देवी** समेत **विश्नोई समाज** के 363 लोगों ने अपने प्राणों को वृक्षों की रक्षा हेतु बलिदान कर दिया था। यह आंदोलन समस्त विश्व के पर्यावरणीय तथा पारिस्थितकीय आंदोलनों हेतु प्रेरणा का स्रोत बन गया। इस आंदोलन के लगभग तीन सौ सालों के पश्चात् 1970 के दशक में भारत के हिमालय क्षेत्र में पर्यावरण को लेकर **चिपको आंदोलन** की एक ऐसी मुहिम आरम्भ हुई जिसने सम्पूर्ण भारत के जनमानस को ना सिर्फ उद्वेलित एवं आंदोलित किया बल्कि इसके फलस्वरूप देशके विभिन्न क्षेत्रों में अनेकानेक पर्यावरणीय तथा पारिस्थितिकीय आंदोलन हुए। जिसमें **एप्पिको आंदोलन, टिहरी बाँध आंदोलन**, **पश्चिमी घाट आंदोलन** तथा **नर्मदा आंदोलन** प्रमुख हैं।

भारत में, ग्रामीण और आदिवासी समाज सदियों से अपने आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अस्तित्व के लिए पूरी तरह से वनों पर निर्भर रहे हैं अपितु वनों के सरंक्षण से भी उनका गहरा लगाव रहा है। वनों से उन्हें जड़ी बूटी, जगली फल, छाल, रेशा, चारा, ईंधन आदि महत्वपूर्ण उत्पाद प्राप्त होते हैं। महुआ का वृक्ष तो आदिवासी समाज की अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। समाज और विशेष तौर पर आदिवासियों तथा वनों के मध्य परम्परागत सम्बन्धों में हस्तक्षेप तथा प्रतिरोध का आरम्भ अंग्रेजी औपनिवेषिक काल के समय आरम्भ हुआ। अंग्रेजी शासन काल में वन कानूनों तथा वन विभाग की वनों दोहन की नीति आरम्भ हुई। जिससे जंगलों का अन्धाधुन्ध दोहन एवं अधिग्रहण आरम्भ हुआ, साथ ही आदिवासी समाज जंगलों पर अपने परम्परागत अधिकारों तथा आजीविका से वंचित होते चले गये एवं उन पर शोषण तथा अत्याचार भी आरम्भ हो गया।

आजादी के पश्चात् एवं विशेषकर वर्ष 1962 में भारत और चीन के मध्य हुए युद्ध के बाद से ही हिमालयी सीमावर्ती क्षेत्र में आर्थिक विकास को बड़े पैमाने पर आरम्भ किया गया। जिसमें सड़कों का निर्माण, जलविद्युत परियोजनाओं, खान एवं खनन, वन तथा वनोत्पाद आधारित उद्योगों का विकास आदि पर बड़े पैमाने पर जोर दिया गया, इससे पारिस्थितिकीय रूप से संवेदनशील हिमालय में वन, बुग्याल (चारागाहों), मृदा आदि का क्षरण अत्याधिक तीव्र गति से आरम्भ हो गया। जंगलों के तीव्र कटान तथा विकास के नाम पर हुऐ विनाश से जंगलों से मिलने वाले चारा, चुगान, जलावन की लकड़ी एवं महत्वपूर्ण वनोत्पादों की निरंतर आपूर्ति के बाधित होने से पशुपालन, खेती तथा ग्रामीण कुटीर उद्योग पर संकट के बादल गहराने लगे। इन सबका नकारात्मक परिणाम यह हुआ कि ग्रामीण अर्थतन्त्र छिन्न-भिन्न हो गया तथा ग्रामीण रोजगार भारी तौर पर कुप्रभावित होने लगा।

इस संकट को वन विभाग की जन विरोधी नीतियों, शोषणकारी औपनिवेशिक कालीन मानसिकता एवं वन कानूनों ने और भी अधिक विकराल रूप दे दिया। औपनिवेशिक काल में बने कानूनों जैसे भारतीय वन अधिनियम के निरन्तर जारी रहने से स्थानीय निवासी सदियों से चले आ रहे वनों पर अपने बुनियादी अधिकारों से वंचित हो गए ऊपर से सरकारी अधिकारियों तथा ठेकेदारों का समूह विकास तथा कानूनों का सहारा लेकर जंगलों की अन्धाधुन्ध कटाई कर मोटे मुनाफे के लिए निरन्तर सक्रिय हो गया था। अतः हिमालयी क्षेत्र की जनता पर चारों ओर से मार पड़ रही थी तथा जनता की समस्यों को प्राकृतिक आपदाओं जैसे अतिवृष्टि, अनावृष्टि, बादल फटना, भूस्खलन आदि की निरन्तर आवृतियों ने और भी अधिक रूप से गहरा दिया। जिसका प्रत्यक्ष उदाहरण 1970 में अलकनंदा में आई प्रलयकारी बाढ़ के रूप में देखने को मिला। प्राकृतिक आपदाओं की निरन्तर मार ने सम्पूर्ण हिमालयी क्षेत्र में जनमानस को पर्यावरण के प्रति चिंतित एवं जागरूक बना दिया तथा जनमानस यह सोचने पर मजबूर हो गया कि यह आपदाएं विकास के नाम पर किए गए विनाश का परिणाम हैं।

12.5 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों कि पूर्ति कीजिए -

1. चिपको आंदोलन की शुरुआत 26 मार्च 1974 को उत्तराखण्ड के चमोली जनपद के..................गाँव में की गई थी। (माणा **या** रैणी)
2. नर्मदा बचाओ आंदोलन के प्रमुख नेता मेघा पाटकर ने इस आंदोलन की शुरुआत................... में की थी। (1989 **या** 1998)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. चिपको आंदोलन का मुख्य उद्देश्य जंगलों की कटाई को रोकना और पर्यावरण की रक्षा करना था।
2. नर्मदा बचाओ आंदोलन में शामिल लोगों ने सरदार सरोवर बाँध की ऊँचाई बढ़ाने के विरोध में भूख हड़ताल की।
3. टिहरी बाँध आंदोलन ने केवल स्थानीय स्तर पर प्रभाव डाला और राष्ट्रीय या अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कोई चर्चा नहीं हुई।

12.6 सारांश (Summary)

इस अध्याय में भारत में हुए पर्यावरणीय तथा पारिस्थितकीय आंदोलनों पर चर्चा की गयी है। भारत के विभिन्न क्षेत्रों में प्रकृति से सम्बंधित संवेदनशील मुद्दों पर हुए संघर्षों की विस्तार से बताया गया है। जिसमें मुख्यत: आपने चिपको आंदोलन, साइलेन्ट वैली आंदोलन, एप्पिको आंदोलन, जंगल बचाओ आंदोलन, टिहरी बाँध आंदोलन, नर्मदा बचाओ आंदोलन, गंगा बचाओ आंदोलन और अन्य पर्यावरणीय आंदोलन को जाना और इनके पीछे के कारणों को भी समझा।

चिपको आंदोलन की शुरुआत 1970 के दशक में उत्तराखंड के रैणी गाँव से हुई थी। इस आंदोलन ने जंगलों की अवैध कटाई के खिलाफ एक अनूठी प्रतिक्रिया दी, जिसमें ग्रामीण महिलाओं ने पेड़ों को गले लगाकर कटाई का विरोध किया। इस संघर्ष ने भारतीय समाज में पर्यावरणीय जागरूकता को बढ़ावा दिया और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के महत्व को स्पष्ट किया।

नर्मदा बचाओ आंदोलन 1989 में शुरू हुआ, जब मध्य प्रदेश और गुजरात के बीच नर्मदा नदी पर एक बड़ा बाँध निर्माण हो रहा था। मेघा पाटकर ने इस आंदोलन की अगुवाई की और बाँध की ऊँचाई बढ़ाने के विरोध में भूख हड़ताल और अन्य गतिविधियाँ कीं। इस आंदोलन ने नर्मदा घाटी के निवासियों के विस्थापन और पर्यावरणीय प्रभावों पर ध्यान केंद्रित किया और इसने जन जागरूकता को बढ़ाया।

टिहरी बाँध आंदोलन उत्तराखंड के टिहरी क्षेत्र में स्थित एक बाँध के खिलाफ हुआ था। इस आंदोलन ने स्थानीय निवासियों के विस्थापन और पर्यावरणीय नुकसान के मुद्दों पर जोर दिया। इसने दिखाया कि विकास परियोजनाओं के दौरान स्थानीय समुदायों की समस्याओं और पर्यावरणीय चिंताओं को कितना महत्वपूर्ण माना जाना चाहिए।

इन आंदोलनों ने न केवल भारत बल्कि वैश्विक स्तर पर पर्यावरणीय मुद्दों और स्थानीय अधिकारों के प्रति संवेदनशीलता को बढ़ावा दिया। यह अध्याय इस बात को स्पष्ट करता है कि पर्यावरणीय न्याय और सतत विकास के लिए संघर्ष कितना आवश्यक है और इन आंदोलनों के महत्व को रेखांकित करता है।

12.7 शब्दावली (Glossary)

- **पर्यावरणीय आंदोलन (Environmental Movement):** ऐसे सामाजिक और राजनीतिक प्रयास जो प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण और पर्यावरणीय समस्याओं के समाधान के लिए किए जाते हैं।

- **ध्वस्त करना (Depletion):** प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक उपयोग के कारण उनका कम होना या समाप्त होना।
- **पर्यावरणीय प्रभाव (Environmental Impact):** किसी गतिविधि या परियोजना के परिणामस्वरूप पर्यावरण पर होने वाला प्रभाव, जैसे कि जल, हवा, और भूमि की गुणवत्ता पर असर।
- **पारिस्थितिकी तंत्र (Ecosystem):** जीवित प्राणियों और उनके पर्यावरणीय घटकों का एक जटिल नेटवर्क, जिसमें ऊर्जा का प्रवाह और पोषक तत्वों का चक्र होता है।
- **जीवन के अधिकार (Right to Life):** इससे तात्पर्य यह है कि हर व्यक्ति को जीने का अधिकार है और कोई भी व्यक्ति इस अधिकार को छीन नहीं सकता है। राज्य को कानून के तहत इस अधिकार की रक्षा करनी चाहिए और यह सुनिश्चित करना चाहिए कि हर किसी को भोजन, पानी और मिट्टी के बर्तन जैसी स्वास्थ्य देखभाल तक पहुंच हो।
- यह एक निजी संगठन है जो लोगों की पीड़ा को दूर करने, गरीबों के हितों को बढ़ावा देने, पर्यावरण की रक्षा करने, बुनियादी सामाजिक सेवाएं प्रदान करने या सामुदायिक विकास के लिए गतिविधियां संचालित करता है।
- **विधिवेत्ता (Jurist):** वह व्यक्ति होता है जो कानून, उसके सिद्धांतों और उनके अनुप्रयोगों का गहन अध्ययन और विश्लेषण करता है। वह कानून से संबंधित मामलों में विशेषज्ञता प्राप्त करता है।
- **पर्यावरणविद् (Environmentalist):** पर्यावरणविद् वह व्यक्ति होता है जो पर्यावरण और उसके तत्वों का अध्ययन, संरक्षण और सुधार के लिए कार्य करता है। वह प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण और पर्यावरणीय समस्याओं के समाधान पर ध्यान केंद्रित करता है।
- **गैर सरकारी संगठन (Non Government Organization):** एक ऐसा निजी संगठन होता है जो किसी सरकार से स्वतंत्र रूप से कार्य करता है और समाज की भलाई के लिए काम करता है। यह संगठन सामाजिक, पर्यावरणीय, शैक्षिक, स्वास्थ्य आदि मुद्दों पर काम कर सकता है और आमतौर पर गैर-लाभकारी होता है।
- **न्यायपालिका(Judiciary)**: न्यायपालिका एक सरकारी तंत्र है जो कानून की व्याख्या करने, उसे लागू करने और न्याय सुनिश्चित करने के लिए जिम्मेदार होती है। इसमें अदालतें और न्यायाधीश शामिल होते हैं जो कानून के अनुसार विवादों का निपटारा करते हैं और नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करते हैं।

12.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)

रिक्त स्थानों कि पूर्ति कीजिए -

1. रैणी 2. 1989

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. सत्य 2. सत्य 3. असत्य

12.9 संदर्भ सहित ग्रन्थ (Bibliography)

- सिन्हा, मेघा (2007) ***पर्यावरण और पारिस्थितिकीय तन्त्र***, वन्दना पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली ।
- त्रिपाठी, रेणु (2011) ***पर्यावरण भूगोल***, ओमेगा पब्लिकेशन्स, दिल्ली ।

- उत्तराखण्ड उदय, ***उत्तराखण्ड दशक 2000-2010*** (नवम्बर 2010) अमर उजाला पब्लिकेशन्स लिमिटेड, नोएडा।

12.10 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

- Sinha K. Rajiv (2007) ***Environmental Crisis and Human at risk***, INA Shree Publishers, Jaipur.
- Bhattacharya, R.N. (Ed.) (2001) ***Environmental Economics*** – An Indian Perspective, OUP, New Delhi.

12.11 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay type Questions)

1. भारत में प्रमुख पर्यावरणीय आंदोलनों का वर्णन कीजिए और समाज पर हुए उनके प्रभावों का विश्लेषण कीजिए।
2. चिपको आंदोलन की पृष्ठभूमि, कार्यविधि और इसके सफल परिणामों की समीक्षा कीजिए।
3. नर्मदा बचाओ आंदोलन के उद्देश्यों, संघर्षों, और सरकार की प्रतिक्रिया का विश्लेषण कीजिए।

इकाई 13 पर्यावरण नीति I
(Environment Policy I)

13.1 प्रस्तावना (Introduction)
13.2 उद्देश्य (Objectives)
13.3 पर्यावरण नीति की आवश्यकता (Need for Environmental Policy)
13.4 पर्यावरण नीति के उद्देश्य एवं सिद्धान्त (Objectives and Principles of Environmental Policy)
    13.4.1 पर्यावरण नीति के उद्देश्य (Objectives of Environmental Policy)
    13.4.2 पर्यावरण नीति के सिद्धान्त (Principles of Environmental Policy)
13.5 पर्यावरण नीति की रूप-रेखा (Framework of Environmental Policy)
13.6 पर्यावरण नीति के साधन एवं रणनीति (Instruments and Strategies of Environmental Policy)
13.7 राष्ट्रीय वन नीति (National Forest Policy)
    13.7.1 राष्ट्रीय वन नीति, 1988 (National Forest Policy, 1988)
    13.7.2 राष्ट्रीय वन नीति 1988 के उद्देश्य (Objectives of National Forest Policy, 1988)
    13.7.3 राष्ट्रीय वन नीति की रणनीति 1988 (Strategy of National Forest Policy, 1988)
13.8 अभ्यास हेतु प्रश्न (Practice Questions)
13.9 सारांश (Summary)
13.10 शब्दावली (Glossary)
13.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)
13.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
13.13 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)
13.14 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay type Questions)

13.1 प्रस्तावना (Introduction)

आधुनिक युग में औद्योगीकरण (Industrialization), नगरीयकरण (Urbanization), भौतिकतावादी (materialism) जीवन शैली एवं बाजारवाद (marketism) के चलते पर्यावरण पर संकट के बादल गहराये हैं। जनसंख्या में वृद्धि और तीव्र आर्थिक उन्नति (rapid Economic growth) के कारण पर्यावरण पर बोझ बढ़ता है। उन्नति पर्यावरण के लिए सौम्य और टिकाऊ होनी चाहिए। विकास के दौरान इस कार्य हेतु अधिक पर्यावरणीय जानकारी, उचित नीतियाँ और विनियामक तंत्र (regulatory system) का होना आवश्यक है।

13.2 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप -

- ✓ पर्यावरण नीति की आवश्यकता एवं रूप रेखा को समझ सकेंगे।
- ✓ पर्यावरण नीति के लक्ष्य एवं उद्देश्यों को जान सकेंगे।
- ✓ पर्यावरण नीति के मुख्य आयाम एवं सिद्धान्त से अवगत हों सकेंगे।
- ✓ वन नीति का अर्थ, आवश्यकता एवं लक्ष्य को जान सकेंगे।

13.3 पर्यावरण नीति की आवश्यकता (Need for Environmental Policy)

आधुनिक युग में औद्योगीकरण, नगरीकरण, जनसंख्या के अपार बोझ, भौतिकतावादी जीवन शैली एवं बाजारवाद के चलते पर्यावरण पर संकट के बादल न सिर्फ गहराये हैं अपितु आवश्यकताओं के अत्याधिक दवाब के चलते धरती का परिवेश बढ़ा ही दमघोटू सा हो गया है। भारत में भी प्रदूषण जनित पर्यावरण संकट के कारण हमारे जल, भूमि, नदियाँ अपशिष्टों, रसायनों से परिपूर्ण होकर कूड़े-कचरे एवं गन्दे नालों का रूप ले चुकी हैं।

1970 के दशक से विश्वस्तर पर यह जागरुकता प्रसारित होने लगी कि उत्तरोत्तर तीव्र उत्पादन-उपभोग को प्रगति एवं संवृद्धि का पर्याय मानते हुए मानव प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध शोषण कर अपने पर्यावरण एवं परिवेश को जहरीला एवं दमघोटू बना रहा है। अत्यधिक संवृद्धि हेतु संसाधनों के लिए प्रतिस्पर्धा होड़ से आर्थिक एवं सामाजिक असमानता एवं राजनैतिक तनाव पैदा हो रहे हैं। कुल मिलाकर हमारी पृथ्वी पर मानवीय क्रियाकलापों का बोझ संकट स्तर तक पहुँच रहा है एवं सम्पूर्ण पृथ्वी संतुलन अस्थिर हो गया है। यदि यह क्रम इसी प्रकार जारी रहा तो निकट भविष्य में संसाधन समापन की स्थिति आ जाएगी एवं मानव सभ्यता के अस्तित्व पर ही प्रश्न चिन्ह लग जाएगा।

अत: आर्थिक संवृद्धि जनित विनाश के चक्रों से बचने के लिए सम्पूर्ण विश्व स्तर पर पर्यावरणीय संतुलन को बनाये रखने हेतु 5 जून, 1972 से स्वीडन की राजधानी स्टॉकहोम में मानव एवं पर्यावरण पर एक अन्तर्राष्ट्रीय कार्यक्रम संयुक्त राष्ट्र के तत्वाधान में आयोजित किया गया। इसी सम्मेलन से संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (United Nations Environment Programme-UNEP) का आरम्भ हुआ। इस सम्मेलन में भारत समेत सभी सदस्य देशों से यह अपील की गयी कि वह पर्यावरण संरक्षण हेतु नीतियाँ, अधिनियम एवं कार्यक्रमों को क्रियान्वित करे एवं आर्थिक संवृद्धि की प्रक्रिया में पर्यावरणीय मूल्यों (Environmental values) का समावेश करें।

ब्राजील के **रियो डि जेनेरो (Rio De Janeiro)** में हुए 1992 में आयोजित **पृथ्वी शिखर सम्मेलन (Earth Summit)** को आर्थिक संवृद्धि एवं पर्यावरणीय मूल्यों में सामजस्य स्थापित करने के दृष्टिकोण से बड़ा ऐतिहासिक एवं महत्वपूर्ण कहा जा सकता है। जलवायु परिवर्तन पर **क्योटो प्रोटोकॉल 1997 (Kyoto Protocol)** में तैयार किया गया एवं समस्त विकसित एवं विकासशील देशों की भागीदारी के साथ इसको वर्ष 2005 में लागू किया गया। दक्षिण अफ्रीका के जोहान्सबर्ग (Johannesburg) में आयोजित सतत विकास पर

सम्मेलन आयोजित किया गया एवं इस सम्मेलन में सतत् विकास के साथ पेयजल, टिकाऊ कृषि एवं खाद्य सुरक्षा, स्वास्थ्य, ऊर्जा एवं जैव विविधता जैसे विषयों को आत्मसात किया गया।

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अनेक समझौते, सन्धियों, सम्मेलन एवं अभिसमय के पश्चात् आर्थिक संवृद्धि एवं आर्थिक विकास के सिद्धान्तों को पर्यावरण मूल्यों के अनुसार परिभाषित किया जाने लगा है। जिसके कारण सैद्धान्तिक एवं व्यवहारिक तौर पर आर्थिक विकास की प्रक्रिया में पर्यावरण संरक्षण की महत्ता स्थापित हो गयी है। उपरोक्त सभी का यह परिणाम हुआ कि आर्थिक संवृद्धि एवं विकास के सिद्धान्तों व कार्यक्रमों को पर्यावरण मूल्यों के अनुसार परिभाषित किया जाने लगा। अत: पर्यावरण समस्याओं के साथ-साथ सामाजिक-आर्थिक विषमता (Socio-Economic Inequality) एवं उसके पर्यावरण पर पड़ने वाले नकारात्मक प्रभावों की रोकथाम् एवं उनके प्रभावी समाधान को भी पर्यावरण संरक्षण से जोड़ा जाना आवश्यक हो गया है । जिसके लिए प्राकृतिक संसाधनों का उचित प्रयोग पर बल दिया जाने लगा है।

13.4 पर्यावरण नीति के उद्देश्य एवं सिद्धान्त (Objectives and Principles of Environmental Policy)

पर्यावरण नीति के उद्देश्य एवं सिद्धान्त को इस प्रकार निर्मित किया गया है जिससे पर्यावरण में निहित तत्वों एवं संसाधनों का स्रोत अक्षुण्ण (intact) बना रहे एवं उनका उपयोग निरंतरता सुनिश्चित हो सके अर्थात् संसाधनों का उसी सीमा तक प्रयोग किया जाए जहाँ तक उनके पुननिर्माण की प्रक्रिया निरन्तर बनी रहे साथ ही समतामूलक आर्थिक-सामाजिक विकास सुनिश्चित किया जा सकेगा।

13.4.1 पर्यावरण नीति के उद्देश्य (Objectives of Environmental Policy)

इस नीति के उद्देश्य निम्नलिखित हैं -

1. महत्वपूर्ण पारिस्थितिकी प्रणालियों (ecosystem), पर्यावरणीय संसाधनों, प्राकृतिक एवं मानव निर्मित धरोहरों का संरक्षण।
2. पर्यावरणीय संसाधनों की पहुँच (access) एवं गुणवत्ता (quality) में इस प्रकार समता स्थापित करना कि निर्धन समुदाय समेत सभी को यह संसाधन सुलभ हों।
3. वर्तमान एवं भावी पीढ़ियों की आवश्यकता हेतु पर्यावरणीय संसाधनों का न्यायोचित प्रयोग सुनिश्चित करना।
4. आर्थिक सामाजिक विकास में पर्यावरणीय सरोकारों (Environmental Concerns) को सुनिश्चित करना।

13.4.2 पर्यावरण नीति के सिद्धान्त (Principles of Environmental Policy)

यह नीति निम्न सिद्धान्तों पर आधारित हैं -

1. मानव विकास का केन्द्र है एवं वर्तमान एवं भावी पीढ़ी की आवश्यकताओं की समान पूर्ति का अधिकार दिया जाना चाहिए।
2. पर्यावरणीय सुरक्षा सतत विकास का अभिन्न अंग है।
3. पर्यावरण से सम्बन्धित विभिन्न सार्वजनिक कार्यों में आर्थिक क्षमता प्राप्त करने का प्रयास किया जाए।
4. इस नीति में प्रदूषणकर्त्ता द्वारा किये गये प्रदूषण का उत्तरदायित्व प्रदूषणकर्त्ता पर स्थापित करने का प्रयास किया गया है।
5. इस नीति में समता के सिद्धान्त को महत्व दिया गया है, यह समता वर्तमान पीढ़ी में सभी के मध्य स्थापित करने का प्रयास किया गया है साथ ही वर्तमान एवं भावी पीढ़ियों के मध्य भी समता

स्थापित करने का प्रयास किया गया है। जिससे समाज में किसी को भी संसाधनों की कमी का सामना न करना पड़े।

13.5 पर्यावरण नीति की रूपरेखा (Framework of Environmental Policy)

देश के प्राकृतिक संसाधनों जैसे झीलें और नदियाँ, इसकी जैव विविधता, वन और वन्य जीवन के संरक्षण और प्रदूषण से बचाव को सुनिश्चित करने से सम्बन्धित नीतियों व कार्यक्रमों का क्रियान्वियन करने हेतु पर्यावरण एवं वन मंत्रालय का गठन 1985 में किया गया। पर्यावरण संरक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए अनेक कानून और विनियामक उपाय किए गए हैं। हमारे देश के संविधान में अनुच्छेद 48 (ए) में राज्य के नीति निर्देशक तत्वों एवं अनुच्छेद 51 ए (जी) में आम नागरिकों के मूल कर्तव्यों के अन्तर्गत पर्यावरण संरक्षण के दायित्व निर्धारित किये गये हैं । इसी सन्दर्भ में तीस से भी अधिक कानूनों को लागू किया गया है। जिनमें वन संरक्षण अधिनियम 1980, जल प्रदूषण एवं निवारण अधिनियम 1974, एवं वायु प्रदूषण एवं अधिनियम 1981 आदि प्रमुख हैं। इन अधिनियमों को केन्द्रीय एवं राज्य प्रदूषण नियन्त्रण बोर्डों जैसे संगठनों के माध्यमों से लागू किया जाता है ।

राष्ट्रीय पर्यावरण नीति में नियामक सुधारों पर्यावरणीय संरक्षण से सम्बन्धित कार्यक्रमों एवं परियोजनाओं और केन्द्र, राज्य एवं स्थानीय सरकारों की ऐजेंसियों द्वारा कानून बनाने एवं उसकी पुनरीक्षा करने के कार्य में एक निर्देशिका के रूप में बनाने की व्यवस्था की गयी है यानि विभिन्न निकायों के लिये यह दिशा-निर्देश की तरह कार्य करें।

इस नीति का प्रमुख विषय यह है कि पर्यावरणीय संरक्षण के साथ आजीविका (Livelihood) की सुरक्षा आवश्यक है एवं संरक्षण का सबसे सुरक्षित आधार यह सुनिश्चित करना है कि लोग उन संसाधनों के ह्रास (degradation) के बजाय उनके संरक्षण द्वारा बेहतर आजीविका प्राप्त कर सके एवं निरन्तर संसाधनों के संरक्षण में सहभागिता निभाते रहें।

इस नीति का लक्ष्य विभिन्न हितधारक (stakeholders) जैसे सार्वजनिक ऐजेन्सियों (public agencies), स्थानीय समुदायों (local comunities), शैक्षिक एवं वैज्ञानिक संस्थानों(educational and scientific institutions), निवेशकों (investors) एवं अन्तर्राष्ट्रीय विकास भागीदारों (international developmental partners) के मध्य पर्यावरणीय प्रबन्धन के लिये अपने अपने संसाधनों और क्षमताओं के नियन्त्रण व उपयोग के मामले में सहभागिता विकसित करना है।

इस नीति में लक्ष्यों, साधनों सिद्धान्तों एवं उनके लिये आवश्यक रणनीतियों पर चर्चा की गयी है। पर्यावरणीय संसाधनों भूमि, वन, जल आदि के संरक्षण, प्रबन्धन एवं प्रदूषणों से रोकथाम हेतु नीतियों एवं कार्य योजनाओं का विस्तार किया गया है साथ ही संवेदनशील क्षेत्रों एवं तंत्रों जैसे आर्द भूमियों (wetlands), पर्वतों, झीलों, तटीय प्रदेशों (coastal areas) आदि हेतु भी लक्षित कार्यक्रमों (targeted programs) को तैयार किया गया है।

13.6 पर्यावरण नीति के साधन एवं रणनीति (Instruments and Strategies of Environmental Policy)

पर्यावरण नीति के सिद्धान्तों, लक्ष्यों के अनुरूप साधनों एवं रणनीतियों की रचना की गयी है। जोकि निम्नलिखित हैं -

1. **विकेन्द्रीयकृत उत्तरदायित्व (Decentralized Responsibility) -** राज्य एवं स्थानीय निकायों को स्वयं की पर्यावरण नीतियों एवं कार्ययोजनाओं को बनाने हेतु प्रोत्साहित किया जाएगा।

2. **विनायमक एवं वैधानिक सुधार (Regulatory and Statutory Reforms) -** पर्यावरण संरक्षण हेतु ठोस वैधानिक ढाँचा एवं मजबूत विनायमक तंत्र विकसित किया जाएगा। पर्यावरण व प्रदूषण सम्बन्धी विभिन्न कानूनों जैसे जैव-विविधता अधिनियम (biodiversity act), वन अधिनियम (forest act), जल प्रदूषण निवारण अधिनियम (water pollution prevention act), वायु प्रदूषण निवारण अधिनियम (air pollution prevention act) आदि की समीक्षा की जाएगी।
3. **प्रक्रियात्मक सुधार (Procedural Reforms) -** पर्यावरण सम्बन्धी स्वीकृतियों में अनावश्यक देरी को कम किया जाएगा एवं पर्यावरणीय कार्यों में पारदर्शिता एवं विकेन्द्रीकरण सुनिश्चित किया जाएगा।
4. **पर्यावरणीय प्रबन्धन एवं अनुपालन (मॉनीटरिंग) (Environmental Management and Compliance Monitoring) -** पर्यावरणीय संसाधनों के प्रबंधन में बेहतर और एकीकृत रणनीतियों को संस्थागत बनाया जाएगा। पर्यावरण अनुपालन मॉनीटरिंग हेतु स्थानीय संस्थाओं के साथ-साथ सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र की सहभागिता सुनिश्चित की जाएगी। सूचना एवं प्रौद्योगिकी एवं संचार साधनों के माध्यम से पर्यावरण प्रबन्धन सुनिश्चित लिया जाएगा।
5. **संवेदनशील क्षेत्रों की पहचान (Identification of Sensitive Areas) -** देश में पर्यावरणीय दृष्टि से संवेदनशील ऐसे क्षेत्रों की पहचान करना एवं उन्हें वैद्यानिक रूप प्रदान करना जो अतुलनीय महत्व के साथ पर्यावरणीय रूप से अपना अलग स्थान रखते हैं और ऐसे क्षेत्रों के संरक्षण हेतु स्थानीय समाज की सहभागिता एवं आधार पर विकास योजनायें बनाना।
6. **पर्यावरण सूचना तंत्र (Environmental Information System) -** दूर संचार एवं संवेदी उपग्रह प्रणालियों, मीडिया, शिक्षण संस्थानों, उद्योग संगठनों आदि के माध्यम से पर्यावरणीय ज्ञान, अनुसंधान एवं व्यापक सूचना नेटवर्क विकसित करना। पर्यावरणीय एवं प्राकृतिक संसाधनों जैसे नदियों, भूजल, पर्वतों, वनों, आद्र भूमियों आदि के गुणवत्ता एवं विस्तार के सम्बन्ध में डाटा बैंक को अद्यतन रखना।
7. **पर्यावरण शिक्षा एवं जागरुकता (Environmental Education and Awareness) -** व्यापक पर्यावरण जागरुकता कार्यक्रमों एवं पाठ्यक्रमों के माध्यम से पर्यावरण शिक्षा को प्रोत्साहित करना एवं पर्यावरणीय जागरुकता हेतु औद्योगिक संस्थानों, मीडिया एवं सामाजिक संगठनों के प्रयास को विकसित करना।

13.7 राष्ट्रीय वन नीति (National Forest Policy)

पारिस्थितिकीय संतुलन (ecological balance) को बनाये रखने के लिए वनों का सही प्रबंधन अति आवश्यक हैं। वनों के प्रबंधन के सामान्य नियम राष्ट्रीय वन नीति के अनुसार निर्धारित होते हैं। भारत की प्रथम राष्ट्रीय वन नीति वर्ष 1894 में घोषित की गई थी। स्वतंत्रता के बाद भारत शासन के खाद्य एवं कृषि मंत्रालय के द्वारा राष्ट्रीय वन नीति को वर्ष 1952 में पुनरीक्षित किया गया। इस वन नीति के मुख्य बिन्दु निम्नानुसार थे -

1. निर्वनीकरण (deforestation) पर रोक लगाना व भू-क्षरण (soil erosion) को रोकना।
2. सभी प्रकार की भूमि का उपयोग इस प्रकार किया जाए जिससे उत्पादन अधिक से अधिक हो व भूमि को कम से कम क्षति पहुंचे।
3. ग्रामीणों को जलाऊ काष्ठ की सुविधा प्रदान करना जिससे कि गोबर को ईंधन के रूप में उपयोग को रोका जा सके एवं इसे खाद के रूप में उपयोग में लाया जा सके।
4. कृषि औजारों के लिए छोटी लकड़ी की आवश्यक मात्रा में उपलब्धता सुनिश्चित् करना।
5. रक्षा, संचार एवं उद्योगों के लिए आवश्यक इमारती लकड़ी एवं अन्य वनोपज प्रदान करना।
6. जलवायु की स्थिति सुधारने के लिए वृक्षों से आच्छादित भूमि जगह-जगह पर विकसित करना।

13.7.1 राष्ट्रीय वन नीति, 1988 (National Forest Policy, 1988)

भारत में कृषि एवं खाद्यान्न मंत्रालय ने वर्ष 1952 में वन नीति की घोषणा की जोकि भारत में समस्त राज्यों में लागू है। 1952 की राष्ट्रीय वन नीति के बाद देश में आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक क्षेत्रों में अत्यधिक विकास हुआ है। स्वतन्त्रता के पश्चात् से व्यापक पैमाने पर वृक्षारोपण की योजनायें एवं क्रियान्वित किये गये हैं परन्तु बढ़ती वनोत्पादों जैसे ईंधन, चारा, इमारती लकड़ी, रेशा जड़ी बूटियों आदि की बढ़ती माँग के चलते वन संसाधनों का गम्भीर अवनयन हुआ है। वन सम्पदा के अन्धाधुंध दोहन को अपूर्ण संरक्षण प्रयासों (incomplete conservation efforts), वनभूमि के अन्य उपयोग हेतु दोहन, व्यापक क्षतिपूरक (Comprehensive Compensation) एवं संरक्षणात्मक उपायों एवं वनों के प्रबन्धन में जन सहभागिता के अभाव के चलते वनों एवं वन भूमि का अवक्रमण निरन्तर जारी है। अत: वन, वन्य जीवन एवं वन संसाधनों के संरक्षण, प्रबन्धन संवृद्धि एवं विवेकपूर्ण, युक्ति संगत (reasonable) एवं सतत प्रयोग की संकल्पना ने भारत में वन नीति की समीक्षा कर नये सिरे से पुर्नगठन करने की आवश्यकता को जन्म दिया। अत: वर्ष 1988 में वन एवं पर्यावरण मंत्रालय द्वारा नयी पर्यावरण नीति को सारे देश में लागू किया गया।

13.7.2 राष्ट्रीय वन नीति 1988 के उद्देश्य (Objectives of National Forest Policy, 1988)

वन नीति के मूलभूत उद्देश्य निम्नानुसार है -

1. राष्ट्रीय वन नीति 1988 का मुख्य उद्देश्य पर्यावरण स्थिरता एवं परिस्थितिकीय सन्तुलन (ecological balance) को संतुलित करना है क्योंकि यह समस्त जीव जंतुओं, मानव, पशुओं, पक्षियों, पौधों सभी के लिए आवश्यक है। उपरोक्त उद्देश्यों की पूर्ति के उपरान्त ही आर्थिक लाभ की प्राप्ति के उद्देश्य को रखा गया है। इसके लिए देश की कुल भूमि का कम से कम एक तिहाई क्षेत्र वन आच्छादित क्षेत्र (Covered Area) करने का राष्ट्रीय लक्ष्य पूरा होना चाहिए ।
2. देश के वनों को गंभीर क्षरण से दुष्प्रभावित परिस्थितिकीय असंतुलन (adverse ecological imbalance) को पुन:स्थापित करना एवं पर्यावरणीय स्थायित्व का अनुरक्षण एवं रख रखाव करना।
3. विशिष्ट जैविक भिन्नता एवं जीव स्रोतों से परिपूर्ण वनस्पति एवं जीव-जन्तु वाले शेष वनों के अनुरक्षण द्वारा देश की प्राकृतिक विरासत (natural heritage) का संरक्षण करना।
4. बाढ़ एवं सूखा के प्रभाव को कम करने व जलाशयों मे मिट्टी भरने की मात्रा कम करने के लिए मृदा व जल संरक्षण हेतु नदियों, नालों एवं जलाशयों के जल ग्रहण क्षेत्र मे भू-क्षरण एवं निर्वनीकरण (deforestation) को रोकना।
5. राजस्थान के मरूस्थल व तटीय क्षेत्रों मे बढ़ते रेतीले टीलों की रोकथाम करना।
6. पूरे देश में वनीकरण और सामाजिक वानिकी कार्यक्रमों के माध्यम से, विशेष रूप से बंजर, निम्नीकृत और अनुत्पादक भूमि पर, वन/वृक्ष आवरण की मात्रा में उल्लेखनीय वृद्धि करना।
7. ग्रामीण व आदिवासी जनसंख्या की जलाऊ लकड़ी, चारा, लघु वनोपज एवं छोटी लकड़ी की आवश्कताओं को पूरा करना।

13.7.3 राष्ट्रीय वन नीति की रणनीति 1988 (Strategy of National Forest Policy, 1988)

राष्ट्रीय वन नीति के लक्ष्यों के अनुरूप साधनों एवं रणनीतियों की निम्नलिखित रचना की गयी है -

1. राष्ट्रीय आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु आवश्यकता अनुसार वनों की उत्पादकता में वृद्धि करना।
2. इमारती लकड़ी के विकल्पों एवं वनोपज के कुशल उपयोग को प्रोत्साहित करना।
3. इन उद्देश्यों की पूर्ति एवं वर्तमान वनों के दबाव को न्यूनतम करने हेतु महिलाओं की भागीदारी से प्रभावी आन्दोलन का निर्माण करना।
4. बढ़ती हुई खाद्य की आवश्यकता को देखते हुए वानिकी के लिये अच्छे एवं उत्पादक कृषि भूमि के उपयोग को हतोत्साहित करना।
5. जैविक विविधता के संरक्षण के लिये राष्ट्रीय उद्यानों, जीव मंडल रिजर्व एवं अन्य संरक्षित जगहों को सुदृढ़ करना और इनका पर्याप्त रूप से विस्तार करना।
6. वनों के क्षरण (deforestation) को रोकने के लिए विशेष रूप से वनों के समीपस्थ क्षेत्रों हेतु, समुचित चारा, ईंधन व घास की व्यवस्था आवश्यक है।
7. समस्त निरावृत्त (barren) एवं अवनत (degraded) भूमि पर आवश्यकता पर आधारित एवं समयबद्ध वनीकरण (Time bound afforestation) विशेषत: जलाऊ रोपण एवं चारागाह विकास हेतु प्रभावी कार्यक्रम एक राष्ट्रीय आवश्यकता है। वन भूमि के निर्वनीकरण (deforestation) वाली योजनाओं एवं कार्यक्रमों पर कड़ाई से रोक लगाई जानी चाहिए।
8. वैज्ञानिक एवं तकनीकी प्रणाली का उपयोग कर वनाच्छादित क्षेत्र (forested area) एवं इसकी उत्पादकता में बढ़ोत्तरी किया जाना चाहिए जिसका उद्देश्य प्राकृतिक वनों को नष्ट किए बिना मांग एवं पूर्ति के अंतराल को कम करने का होना चाहिए। वैज्ञानिक प्रयोगों द्वारा स्थापित होने के पश्चात ही बाह्य प्रजातियों का रोपण किया जाना चाहिए एवं यथा सम्भव घरेलू प्रजातियों को प्राथमिकता दिया जाना चाहिए।
9. वन क्षेत्रों में चराई व अन्य अधिकार एवं सुविधाओं की मात्रा वनों की धारण या वहन क्षमता के अनुकूल निर्धारित की जानी चाहिए। शेष आवश्यकता की पूर्ति हेतु आरक्षित वनों से बाहर ही सामाजिक वन व सामुदायिक वनों का विकास किया जाना चाहिए।
10. वनों में आसपास रहने वाले समुदायों, जन-जातियों के वनोपज से सम्बद्ध अधिकार एवं सुविधाओं को प्राथमिकता दी जानी चाहिए एवं वनों के अनुरक्षण एवं विकास में उनकी भागीदारी विकसित की जानी चाहिए ।
11. लकड़ी की आपूर्ति में कमी को देखते हुए उपयुक्त विकल्प विशेषत: ग्रामीण क्षेत्रों में लोकप्रिय बनाये जाने चाहिए। गैर वानिकी कार्यो हेतु वन भूमि के उपयोग वाली योजनाओं का सामाजिक एवं पर्यावरणीय मूल्य/लाभ विश्लेषण किया जाना चाहिए। ऐसे प्रकरणों में क्षतिपूर्ति वनीकरण हेतु उपयुक्त प्रावधान आवश्यक रूप से किया जाना चाहिए।
12. वन प्रबन्ध योजनाओं में वन्य प्राणी संरक्षण एवं प्रबंधन हेतु प्रावधान सम्मिलित किये जाने चाहिए।
13. खनन प्रबंध के लिए उचित योजना तैयार की जानी चाहिए जिसमें खनन के उपरांत वनीकरण का प्रावधान आवश्यक रूप से सम्मिलित हो। इसके बिना खनन की अनुमति प्रदान नहीं की जानी चाहिए ।

13.8 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1. वन की अंधाधुंध कटाई से……………… होता है। (खनन प्रबंध **या** जलवायु परिवर्तन)
2. वनों की सुरक्षा के लिए ....नीति की आवश्यकता है। (राष्ट्रीय वन नीति **या** सामुदायिक परिवर्तन नीति)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. वन संसाधनों का राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर महत्व है।
2. पर्यावरण संरक्षण के लिए सबसे महत्वपूर्ण अधिक कागज का उपयोग है।
3. पर्यावरण की रक्षा के लिए हमें नकारात्मक रवैया अपनाना चाहिए।

13.9 सारांश (Summary)

इस इकाई में पर्यावरण नीति पर विस्तार से चर्चा की गई है जिसमें पर्यावरण संरक्षण और संवर्द्धन के विभिन्न पहलुओं को शामिल किया गया है। इसमें सतत विकास की आवश्यकता, जनांकिकीय दबाव, गरीबी, बेरोजगारी और अंतर्राष्ट्रीय प्रतिबद्धताओं के संदर्भ में पर्यावरणीय चुनौतियों का उल्लेख किया गया है। नीति के उद्देश्यों में महत्वपूर्ण पारिस्थितिकी प्रणालियों का संरक्षण, संसाधनों की समता, न्यायोचित प्रयोग और आर्थिक-सामाजिक विकास में पर्यावरणीय सरोकारों को सुनिश्चित करना शामिल है।

इसमें राष्ट्रीय पर्यावरण नीति की रणनीति, राष्ट्रीय कृषि नीति, राष्ट्रीय जनसंख्या नीति, राष्ट्रीय वन नीति और अन्य विकास कार्यक्रमों जैसे गरीबी निवारण पर भी चर्चा की गई है। यह नीति विभिन्न हितधारकों जैसे सार्वजनिक एजेंसियों, स्थानीय समुदायों, शैक्षिक और वैज्ञानिक संस्थानों, निवेशकों और अंतर्राष्ट्रीय विकास संगठनों की सहभागिता सुनिश्चित करने का प्रयास करती है। इस इकाई में पर्यावरणीय प्रबंधन, संवेदनशील क्षेत्रों की पहचान, पर्यावरण सूचना तंत्र, पर्यावरण शिक्षा और जागरूकता जैसे पहलुओं पर भी चर्चा की गई है। नीति के अंतर्गत पर्यावरण संरक्षण के साथ आजीविका की सुरक्षा सुनिश्चित करने पर बल दिया गया है।

13.10 शब्दावली (Glossary)

- **राज्य के नीति निर्देशक तत्व (Directive Principles of State Policy):** भारतीय संविधान के चौथे भाग में कल्याणकारी राज्य की स्थापना हेतु राज्य को महत्वपूर्ण दिशा निर्देश दिये गये हैं परन्तु यह मूल अधिकारों की भाँति न्यायालय में प्रवर्तनीय नहीं हैं।
- **मूल कर्त्तव्य (Fundamental Duties):** भारत के संविधान में आयरलैण्ड से प्रेरित होकर 1976 में 42वें संविधान संशोधन के माध्यम् से आम नागरिकों के मूल कर्त्तव्य संविधान में समाहित किये गये हैं।
- **धारण क्षमता (Carrying Capacity):** किसी भी आर्थिक इकाई की धारण क्षमता निरन्तर अपने अस्तित्व को संकट में डाले बगैर सतत् उत्पादन देने से सम्बन्धित होती है। जैसे वनों की धारण क्षमता।
- **संयुक्त वन प्रबन्ध (Joint Forest Management):** समाज की सहभागिता के साथ शासन द्वारा वनों का प्रबन्ध संयुक्त वन प्रबन्ध के अन्तर्गत आता है।
- **पर्यावरणीय प्रभाव (Environmental Impact):** किसी परियोजना जैसे जल विद्युत आदि के विकास के समय पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों का ऑकलन किया जाता है।
- **सामाजिक प्रभाव (Social Impact):** किसी परियोजना के विकास की प्रक्रिया में, समाज पर पड़ने वाले प्रभाव जैसे विस्थापन का ऑकलन किया जाता है।

- **अनैच्छिक विस्थापन (Involuntary Displacement):** यह विस्थापन अपनी इच्छा के विपरीत यानि बाह्यकारी तौर पर किया जाता है।
- **73 एवं 74वां संविधान संशोधन (73rd and 74th Constitutional Amendments):** यह संशोधन स्थानीय नगर निकायों को शासन के विकेन्द्रीयकरण के सिद्धान्तों को ध्यान में रखकर 1993 किया गया ताकि स्थानीय निकायों को स्वशासन के अधिकार प्राप्त हो सके।
- **नवीकरणीय संसाधन (Renewable Resources):** ऐसे संसाधन जोकि नियमित अंतराल पर निरन्तर उत्पादन प्रदान करते रहते हैं।
- **एनविस प्रणाली (Environmental Information System):** एनविस का मतलब पर्यावरण सूचना प्रणाली है। भारत सरकार ने निर्णय निर्माताओं, नीति नियोजकों और वैज्ञानिकों को पर्यावरणीय जानकारी प्रदान करने के लिए एक योजना कार्यक्रम के रूप में दिसंबर 1982 में एनविस की स्थापना की। एनविस का केंद्र बिंदु पर्यावरणीय सूचना संग्रह, संकलन, भंडारण, पुनर्प्राप्ति और प्रसार में राष्ट्रीय प्रयासों को एकीकृत करना है।
- **जैव विविधता (Bio-Diversity):** इसे जैविक विविधता के रूप में भी जाना जाता है, पृथ्वी पर पौधों, जानवरों और सूक्ष्मजीवों सहित जीवन की विविधता है। इसमें वे जीन भी शामिल हैं जो इन जीवों में होते हैं और वे पारिस्थितिकी तंत्र जो वे भूमि और पानी में बनाते हैं। जैव विविधता लगातार बदल रही है और इसे तीन स्तरों (आनुवंशिक, प्रजाति और पारिस्थितिक) पर मापा जा सकता है।
- **सामाजिक-आर्थिक विषमता (Social-Economic Inequality):** सामाजिक आर्थिक असमानता बच्चों, युवाओं और परिवारों जैसे लोगों के समूहों के बीच सामाजिक वर्ग, शिक्षा और घरेलू आय में अंतर है। यह सामाजिक संरचना और उस संरचना में लोगों की स्थिति को भी संदर्भित कर सकता है।
- **समता के सिद्धान्त (Principle of Equality):** यह एक कानूनी सिद्धांत है जो बताता है कि समान स्थितियों के साथ समान व्यवहार किया जाना चाहिए और असमान स्थितियों के साथ अलग तरह से व्यवहार किया जाना चाहिए।
- **आजीविका (Livelihood):** जीवनयापन के साधनों में भोजन, आय और संपत्ति शामिल हैं। आजीविका में भोजन, आश्रय, कपड़े, सांस्कृतिक मूल्यों और सामाजिक संबंधों सहित बुनियादी जरूरतों को बनाए रखने के लिए सभी संसाधन (क्षमताएं) शामिल हैं।
- **परिस्थितिकीय असंतुलन (Ecological Imbalance):** पारिस्थितिक असंतुलन तब होता है जब कोई प्राकृतिक या मानव-जनित गड़बड़ी पारिस्थितिकी तंत्र के प्राकृतिक संतुलन को बाधित करती है।
- **प्राकृतिक विरासत (Natural Heritage):** प्राकृतिक विरासत से तात्पर्य प्राकृतिक विशेषताओं, भूवैज्ञानिक और भौगोलिक संरचनाओं और चित्रित क्षेत्रों से है जो जानवरों और पौधों की संकटग्रस्त प्रजातियों के निवास स्थान और विज्ञान, संरक्षण या प्राकृतिक सौंदर्य के दृष्टिकोण से मूल्यवान प्राकृतिक स्थलों का निर्माण करते हैं।
- **जनांकिकीय दबाव (Demographic Pressure):** प्रकृति पर जनसांख्यिकीय दबाव का अर्थ है मानवजनित कारकों का विकास, जो जनसंख्या में वृद्धि के कारण होता है और इसके परिणामस्वरूप, कृषि क्षेत्र में उत्पादन और वृद्धि में वृद्धि होती है।
- **गरीबी (Poverty):** गरीबी एक ऐसी स्थिति है जहां एक व्यक्ति के पास एक निश्चित जीवन स्तर बनाए रखने के लिए संसाधनों और आवश्यक चीजों का अभाव होता है। गरीबी के कई कारण और प्रभाव हो सकते हैं, जिनमें पर्यावरणीय, कानूनी, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक कारक शामिल हैं।
- **बेरोजगारी (Unemployment):** यह उस स्थिति को संदर्भित करती है जहां एक व्यक्ति सक्रिय रूप से रोजगार की तलाश करता है लेकिन काम पाने में असमर्थ होता है। बेरोजगारी को अर्थव्यवस्था के

स्वास्थ्य का एक प्रमुख उपाय माना जाता है। बेरोज़गारी का सबसे अधिक इस्तेमाल किया जाने वाला माप बेरोज़गारी दर है।

13.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर (Answer for Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1.जलवायु परिवर्तन 2. राष्ट्रीय वन नीति

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. सत्य 2. असत्य 3. असत्य

13.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- Andriantiatsaholiniaina, L. A., Kouikoglou, V. S., & Phillis, Y. A. (2004). ***Evaluating strategies for sustainable development: fuzzy logic reasoning and sensitivity analysis. Ecological Economics***, 48(2), 149–172. https://doi.org/10.1016/j.ecolecon.2003.08.009
- Bhalachandran, G. (2011). ***Kautilya's model of sustainable development***. Humanomics, 27(1), 41–52. https://doi.org/10.1108/08288661111110169
- Chen, H., & Yada, R. (2011). ***Nanotechnologies in agriculture: New tools for sustainable development***. Trends in Food Science & Technology, 22(11), 585–594. https://doi.org/10.1016/j.tifs.2011.09.004
- Dev, R. (n.d.-a). ***Corporate Social Responsibility (CSR) in Indian Banking Sector: An analytical study of ICICI bank limited***.
- Dev, R. (n.d.-b). ***Corporate Social Responsibility in India: Reaching to Unreached?***
- ***India follows a holistic approach towards its 2030 Sustainable Development Goals (SDGs).*** (n.d.). Retrieved February 13, 2020, from https://pib.gov.in/newsite/PrintRelease.aspx?relid=191192
- Kaygusuz, K. (2012). ***Energy for sustainable development: A case of developing countries. Renewable and Sustainable Energy Reviews***, 16(2), 1116–1126. https://doi.org/10.1016/j.rser.2011.11.013
- Oparaocha, S., & Dutta, S. (2011). ***Gender and energy for sustainable development. Current Opinion in Environmental Sustainability***, 3(4), 265–271. https://doi.org/10.1016/j.cosust.2011.07.003

- Smyth, J. C. (1995). ***Environment and Education: a view of a changing scene. Environmental Education Research***, 1(1), 3–120. https://doi.org/10.1080/1350462950010101

13.13 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

- सिन्हा, मेघा (2007), ***पर्यावरण और पारिस्थितिकीय तन्त्र***, वन्दना पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
- त्रिपाठी, रेणु (2011) ***पर्यावरण भूगोल***, ओमेगा पब्लिकेशन्स, दिल्ली।
- ***उत्तराखण्ड उदय***, उत्तराखण्ड दशक 2000-2010 (नवम्बर 2010) अमर उजाला पब्लिकेशन्स लिमिटेड, नोएडा।
- Sinha K. Rajiv (2007) ***Environmental Crisis and Human at risk***, INA Shree Publishers, Jaipur.
- Bhattacharya, R.N. (Ed.) (2001), ***Environmental Economics – An Indian Perspective***, OUP, New Delhi.

13.14 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay type Questions)

1. भारत में राष्ट्रीय पर्यावरण नीति के उद्देश्यों, आवश्यकता एवं रूपरेखा का विश्लेषण कीजिए?
2. भारत में राष्ट्रीय वन नीति की रणनीति का आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए?
3. भारत में पर्यावरण समस्यों का उल्लेख करते हुए सरकार के स्तर पर नीतिगत प्रयासों का विश्लेषण कीजिए?

इकाई 14 पर्यावरण नीति II
(Environmental Policy II)

14.1 प्रस्तावना (Introduction)
14.2 उद्देश्य (Objectives)
14.3 संरक्षित क्षेत्र: अर्थ तथा अवधारणा (Protected Area: Meaning and Concept)
14.4 संरक्षित क्षेत्रों के विकास हेतु नीति (Policy for Development of Protected Areas)
14.5 आपदा शमन: अर्थ एवं उद्देश्य (Disaster Mitigation: Meaning and Objectives)
14.6 आपदा शमन नीति: रूपरेखा एवं रणनीति (Disaster Mitigation Policy: Framework and Strategy)
14.7 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)
14.8 सारांश (Summary)
14.9 शब्दावली (Glossary)
14.10 अभ्यास प्रश्न के उत्तर (Answer for Practice Questions)
14.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)
14.12 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)
14.13 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay type Questions)

14.1 प्रस्तावना (Introduction)

भारत में पर्यावरण समस्याओं का समाधान करने की दिशा में राष्ट्रीय पर्यावरण नीति में व्यापक तथा प्रभावी दिशा-निर्देश, उपाय एवं रणनीति अपनायी गयी है। इस नीति की रूपरेखा, उद्देश्यों के साथ अन्य नीतियों वन नीति, पुर्नवास नीति आदि के साथ सामंजस्य के बारे में हम पूर्व की इकाई में व्यापक अध्ययन कर चुके हैं।

वास्तव में भारत में पर्यावरणीय चुनौतियाँ एवं संकटों का विस्तार बहुआयामी प्रकृति का है। अत: इस चुनौती का हल हेतु प्रयास भी बहुआयामी एवं विविधता पूर्ण होने चाहिए। जिससे कि समस्त पर्यावरण समस्यायें जैसे जलवायु परिवर्तन, संवेदनशील एवं पर्यावरण दृष्टि से नाजुक संरक्षित क्षेत्र, जैव विविधता संकट आदि पर मंडराते संकटों का समाधान किया जा सके। इसलिए पर्यावरण नीति को अन्य महत्वपूर्ण नीतियों जैसे संरक्षित क्षेत्र विकास नीति, राष्ट्रीय आपदा शमन नीति, जैव विविधता विकास नीति, जलवायु परिवर्तन नीति आदि के साथ सामंजस्य बनाते हुए गठित किया गया है। पर्यावरण नीति की इस रूपरेखा के बारे में इस इकाई में हम व्यापक अध्ययन करेंगे।

14.2 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप -

- ✓ पर्यावरण नीति की रूपरेखा को समझ सकेंगे।
- ✓ संरक्षित क्षेत्र के अर्थ तथा उसकी अवधारणा से अवगत हों सकेंगे।
- ✓ संरक्षित क्षेत्रों के विकास हेतु बनाई गई नीति के विषय में जान सकेंगे।
- ✓ आपदा शमन नीति के उद्देश्य को समझ सकेंगे।
- ✓ आपदा शमन नीति की रूपरेखा एवं रणनीति से अवगत हों सकेंगे।

14.3 संरक्षित क्षेत्र: अर्थ तथा अवधारणा (Protected Area: Meaning and Concept)

संरक्षित क्षेत्र की अवधारणा का विकास सर्वप्रथम अमेरिका से हुआ जहाँ कि पर्यावरणवादियों के ठोस प्रयासों से 1862 में विश्व के प्रथम राष्ट्रीय उद्यान **'येलोस्टोन नेशनल पार्क (Yellowstone National Park)'** की स्थापना की गयी। बीसवीं सदी में पर्यावरण चेतना के प्रति जागरुकता के कारण ही 1962 में सिएटल (Seattle) में राष्ट्रीय उद्यानों पर विश्व का पहला सम्मेलन आयोजित किया गया। उसके बाद सरकारी और गैर-सरकारी प्रयासों से यूनेस्को के तत्वावधान में 1970 में **'मानव और जैवमंडल (Man and Biosphere)'** कार्यक्रम की शुरुआत की गई। **संयुक्त राष्ट्र शिक्षा, विज्ञान और सांस्कृतिक संगठन** (United Nations Educational, Scientific and Cultural Organization - UNESCO) के **'मनुष्य और जीवमंडल (Man and Biosphere)'** कार्यक्रम के अन्तर्गत 1974 में **जैव-मण्डलीय संरक्षित क्षेत्र (Biosphere Reserve)** की अवधारणा लागू की गयी। जिसके उद्देश्य पारिस्थितिकीय संवेदनशील क्षेत्रों में भी जैव सम्पदा का संरक्षण करना तथा स्थानीय निवासियों की जैव-सम्पदा पर निर्भरता कम करने के उद्देश्य से वैकल्पिक विकास की व्यवस्था करना है। इसके लिए स्थानीय समुदाय हेतु शिक्षण, निगरानी, जागरुकता, प्रशिक्षण एवं अनुसंधान की आवश्यकता होती है।

संयुक्त राष्ट्रीय के तत्वाधानों में **मानव पर्यावरण (Human Environment)** पर एक सम्मेलन वर्ष 1972 में स्टॉकहोम (Stokahom) में आयोजित किया गया जोकि पर्यावरण संरक्षण हेतु संरक्षित क्षेत्रों की स्थापना हेतु एक महत्वपूर्ण कदम साबित हुआ। इस सम्मेलन में संयुक्त राष्ट्रीय ने सभी सदस्य देशों से वन, वन्य-जीव एवं पर्यावरण के संरक्षण हेतु सार्थक प्रयास करने का अनुरोध किया। इसी के पश्चात् भारत में वन्य-जीव अधिनियम 1972 लागू हुआ। जिसके माध्यम् से संरक्षित क्षेत्रों की स्थापना तथा प्रशासित किया जाता है। **संयुक्त राष्ट्र शिक्षा, विज्ञान और सांस्कृतिक संगठन** (United Nations Educational, Scientific and Cultural Organization - UNESCO) एवं **प्रकृति संरक्षण के लिए अंतर्राष्ट्रीय संघ**

(International Union for Conservation of Nature - IUCH) जैसी संस्थाओं ने भारत समेत अनेक देशों में दुर्लभ प्रजातियों से परिपूर्ण संरक्षित क्षेत्रों हेतु मानकों को स्थापित किया गया है। इसी प्रकार वर्ष 1981 में आद्र भूमियों के संरक्षण हेतु रामसर में हुए अन्तर्राष्ट्रीय समझौते के पश्चात भारत में आद्र भूमियों के संरक्षण हेतु प्रयास आरम्भ किए गए। यद्यपि भारत में वन्य-जीवों के संरक्षण के प्रयास ब्रिटिश शासन काल में ही आरम्भ हो गये थे परन्तु स्वतन्त्रता के पश्चात् राष्ट्रीय उद्यानों तथा अभयारण्यों की स्थापना में वृद्धि हुई हैं। वर्ष 1970 में भारतीय वन्य-जीव बोर्ड द्वारा राष्ट्रीय वन्य-जीव नीति का गठन किया जिसमें कि देश की वन्य-जीव सम्पदा तथा उनके प्राकृतिक आवास को गम्भीर संकट की स्थिति बताया एवं यह संस्तुति दी कि वन्य-जीव संरक्षण तथा संवर्धन हेतु ठोस वैधानिक, नीतिगत, प्रशासनिक एवं तकनीकी प्रयासों की आवश्यकता है। इसके पश्चात भारत में संरक्षित क्षेत्रों की स्थापना की मुहिम आरम्भ हो गयी।

अन्तर्राष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ के अनुसार संरक्षित क्षेत्र स्पष्ट रूप से परिभाषित भौगोलिक क्षेत्र होता है। जो प्रकृति और उससे संबंधित पर्यावरणीय सेवाओं और सांस्कृतिक मान्यताओं के दीर्घकालिक संरक्षण क्षेत्र पर्यावरणीय दृष्टि से संवेदनशील, नाजुक तथा विशिष्ट महत्व लिए हुए होते हैं तथा उनका अस्तित्व बनाये रखना पर्यावरण संरक्षण हेतु अपरिहार्य होता है। ऐसे संरक्षित क्षेत्रों की प्राकृतिक, पर्यावरणीय या सांस्कृतिक महत्व के कारण परिवर्तन से रक्षा की जाती है। इन संरक्षित क्षेत्रों में आर्थिक हस्तक्षेप जैसे उत्पादन, खनन, उपभोग, निर्माण आदि प्रतिबन्धित होती है। इन क्षेत्रों के संरक्षण हेतु सरकार द्वारा वैधानिक एवं नीतिगत उपाय किए गए हैं।

संरक्षित क्षेत्र विभिन्न प्रकारों प्रकृति एवं स्वरूप के होते हैं तथा इन्हें विभिन्न स्तरों पर अलग-अलग प्रकार का संरक्षण प्रदान किया जाता है। भारत में आर्थिक विकास तथा तीव्र जनसंख्या के दबाव तथा आवश्यकताओं के कारण संवेदनशील पर्यावरणीय क्षेत्रों जैसे वन, झीलों, नदियों, तटीय क्षेत्रों आदि के पारिस्थितिकीय क्षेत्रों के संतुलन पर संकट पैदा हो गया है। वन तथा वन्य जीवों को उनके प्राकृतिक पर्यावरण संरक्षण तथा संवर्धन देने के उद्देश्य से आज भारत में 650 से अधिक संरक्षित क्षेत्र हैं। इन संरक्षित क्षेत्रों में राष्ट्रीय पार्क, वन्य-जीव अभ्यारण्य, बाघ संरक्षित क्षेत्र, वनवासी संरक्षित क्षेत्र, संरक्षित जीवमण्डल क्षेत्र, आद्र तथा कच्छ, वनस्पति भूमि संरक्षित क्षेत्र आदि प्रमुख हैं तथा कुल मिलाकर भारत के कुल भौगोलिक क्षेत्र का 5 प्रतिशत भू-भाग से अधिक इन संरक्षित क्षेत्रों के अन्तर्गत आता है। यह संरक्षित क्षेत्र भूमि, झील, पर्वत, समुद्र आदि क्षेत्रों तक विकसित होते हैं।

भारत में संरक्षित क्षेत्र का प्रयोग सर्वप्रथम वनों के संरक्षण हेतु किया गया है। यह अवधारणा भारतीय वन अधिनियम 1927 के अन्तर्गत लागू की गयी। इस अधिनियम के माध्यम से आरक्षित तथा संरक्षित वनों की अवधारणा स्थापित की गयी। यह दोनों वन संरक्षित क्षेत्र के अन्तर्गत आते हैं तथा इन दोनों प्रकार के वनों की घोषणा भारत में राज्य सरकारों के माध्यम से की आती है। आरक्षित वनों में मानवीय हस्तक्षेप तथा क्रियाकलाप जैसे चारा, चुगान, शिकार, वन उपज निकासी, निर्माण, आवास आदि सभी कार्य पूर्णतया प्रतिबंधित होते हैं। जबकि संरक्षित वनों में चारा, चुगान एवं वन उपज का सीमित पैमाने पर अधिकार वनों तथा वनों के आस-पास के निवासियों को प्रदान किया जाता है। इस सन्दर्भ में आरक्षित वनों को संरक्षित वनों की तुलना में अधिक संरक्षण प्राप्त होता है।

14.4 संरक्षित क्षेत्रों के विकास हेतु नीति (Policy for Development of Protected Areas)

संरक्षित क्षेत्रों की विकास नीति का मुख्य उद्देश्य दुर्लभ वनों और जंगली जानवरों के प्राकृतिक आवास का संरक्षण और सुधार करना है और यह भी सुनिश्चित करना है कि वन संसाधनों पर निर्भर आदिवासियों और अन्य वनवासियों की आजीविका पर कोई नकारात्मक प्रभाव न पड़े। उनके सामाजिक-आर्थिक विकास में प्राकृतिक संसाधनों का समुचित दोहन किया जा सके। इसलिए भारत जैसे आबादी वाले देश में संरक्षित क्षेत्रों के प्रबंधन के लिए एक समावेशी दृष्टिकोण की आवश्यकता है।

भारत में संरक्षित क्षेत्र की अवधारणा को यद्यपि स्वतन्त्रता पूर्व ही स्थापित कर दिया गया था परन्तु वन्य-जीव अधिनियम 1972 के पश्चात् संरक्षित क्षेत्रों की संख्या तथा विस्तार में व्यापक वृद्धि हुई है।

भारत में संरक्षित क्षेत्रों, वन्य-जीव अधिनियम 1972, के माध्यम से ही स्थापित तथा प्रशासित होते हैं इनके अन्तर्गत राष्ट्रीय उद्यान, अभयारण्य, बाघ अभयारण्य, संरक्षणात्मक, आरक्षित क्षेत्र तथा सामुदायिक आरक्षित क्षेत्र आदि आते हैं।

वन्य-जीव अधिनियम 1972 के अतिरिक्त भारत सरकार द्वारा कुछ विशिष्ट क्षेत्रों को भी संरक्षित क्षेत्रों में घोषित किया गया है। यह प्रक्रिया अन्तर्राष्ट्रीय परम्पराओं समझौतों तथा प्रक्रियाओं के माध्यम से भी प्रभावित होती आयी है। जैसे कि **संयुक्त राष्ट्र शिक्षा, विज्ञान और सांस्कृतिक संगठन** (United Nations Educational, Scientific and Cultural Organization - UNESCO) द्वारा **'मनुष्य और जीवमंडल (Man and Biosphere)'** कार्यक्रम के अन्तर्गत जैव सम्पदा के संरक्षण तथा संवर्धन के उद्देश्य से जैव मण्डल आरक्षित क्षेत्र (Biosphere Reserve) घोषित किए गए हैं। इसी प्रकार **कच्छ** वनस्पतियाँ क्षेत्र, प्रवाल क्षेत्र तथा आर्द्रभूमि क्षेत्रों को भी घोषित किया गया है। यद्यपि इन क्षेत्रों में अधिकांश राष्ट्रीय उद्यान तथा अभयारण्यों के नियमानुसार ही विनियमित होते हैं परन्तु फिर भी इन क्षेत्रों की स्थापना तथा विनियमन अभी भी तदर्थ प्रकृति (Ad hoc nature) का है क्योंकि भारत के अभी भी 14 में से केवल 7 जैव मण्डलीय क्षेत्र **संयुक्त राष्ट्र शिक्षा, विज्ञान और सांस्कृतिक संगठन** (United Nations Educational, Scientific and Cultural Organization - UNESCO) द्वारा **'मनुष्य और जीवमंडल (Man and Biosphere)'** कार्यक्रम के मानकों को पूर्ण कर पाए हैं।

सामाजिक-आर्थिक एवं पारिस्थितिकीय दृष्टिकोण से संरक्षित क्षेत्रों का संरक्षण, संवर्धन तथा प्रबन्धन एक जटिल कार्य हैं। वर्तमान समय में जनसंख्या के दबाव तथा आर्थिक विकास की आवश्यकताओं ने इस कार्य को चुनौतीपूर्ण बना दिया है। जिसमें निम्नलिखित समस्यायें निरन्तर सामने जा रही हैं -

1. संरक्षित क्षेत्र में जनसंख्या का पुर्नवास एवं विस्थापन करना।
2. प्राकृतिक पर्यावास की क्षति एवं विघटन।
3. प्राकृतिक एवं जैविक संसाधनों का अन्धाधुन्ध दोहन।
4. मानव तथा वन्य-जीव संघर्ष में वृद्धि।
5. वन्य-जीव अंगों से वने उत्पादों में अवैध व्यापार एवं वन्य जीवों का शिकार।
6. आदिवासियों तथा वन वासियों के वन तथा वन्य प्राणियों से प्राप्त संसाधनों पर परम्परागत अधिकारों का संरक्षण तथा आजीविका की सुरक्षा।
7. स्थानीय निवासियों की भागीदारी संरक्षित क्षेत्रों के संरक्षण प्रबन्धन में सुनिश्चित करने हेतु व्यापक जन आधार तैयार करना।
8. सरकार, निजी क्षेत्र, नागरिक समाज, गैर सरकारी संगठन आदि संस्थाओं के मध्य बेहतर सामंजस्य तथा समन्वय स्थापित करना।
9. प्राकृतिक एवं मानवीय कारकों से जनित आपदाओं जैसे आग से सुरक्षा करना।
10. संरक्षण संवर्द्धन तथा प्रबन्धन हेतु वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति।
11. मानव संसाधन का प्रबन्धन, प्रशिक्षण तथा क्षमता निर्माण।
12. संरक्षित क्षेत्रों की स्थापना हेतु वैधानिक औपचारिकताओं की पूर्ति करना।
13. संरक्षित क्षेत्रों से इमारती लकड़ी, वन उपज तथा लघुवन उपजों की निकासी करना।
14. संरक्षित क्षेत्रों को आपस में वन गलियारे (corridors) के माध्यम से जोड़ना।
15. संरक्षित क्षेत्रों के मुख्य क्षेत्र (Core area) के बाहर समुचित बफर क्षेत्रों का निर्माण करना।

भारत में संरक्षित क्षेत्रों का गठन तथा प्रशासन भारतीय वन्य-जीव अधिनियम 1972 के अन्तर्गत किया जाता है जिसको समय-समय पर संशोधित किया गया है। इस अधिनियम का क्रियान्वयन को अन्य पूरक अधिनियम जैसे भारतीय वन अधिनियम 1927, (वन संरक्षण) अधिनियम 1980, पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम 1986, जैव विविधता अधिनियम 2002 तथा अनुसूचित जाति एवं अन्य परम्परागत वन निवासी (वनाधिकारों की मान्यता) अधिनियम 2006 के माध्यम से और अधिक प्रभावी बनाया जाता

है। प्रधानमंत्री के नेतृत्व में बने राष्ट्रीय वन जीव बोर्ड, वन्य प्राणियों के सरंक्षण एवं संरक्षित क्षेत्रों के विकास हेतु नीतिगत ढाँचे का निर्माण करता है।

भारत में वन्य-जीव संरक्षण की अवधारणा देश के सभी पारिस्थितिकीय तंत्र के प्रतिनिधि वन्य पर्यावासों (habitats) की पहचान कर विकसित करने पर आधारित है। देश में संघीय पर्यावरण तथा वन मंत्रालय इन संरक्षित क्षेत्रों के संरक्षण तथा विकास हेतु नोडल संस्था का कार्य करता है। चूँकि वन एवं वन्य प्राणी संरक्षण समवर्ती सूची के विषय हैं। अत: इन संरक्षित क्षेत्रों के प्रशासन का दायित्व प्रदेशों के वन विभाग के माध्यम से सुनिश्चित किया गया है।

संरक्षित क्षेत्रों के प्रबन्धन में सुधार सुनिश्चित करने के उद्देश्य से 1994 में इण्डिया इको-डेवलपमेंट प्रोजेक्ट (Indian Eco Development Project- IEDP) नामक पायलेट परियोजना को आरम्भ किया गया। इण्डिया इको-डेवलपमेंट प्रोजेक्ट (Indian Eco Development Project- IEDP) के द्वारा यह स्थापित किया गया कि संरक्षित क्षेत्रों के संवर्द्धन तथा विकास तथा जैव विविधता के संरक्षण में स्थानीय जनता की आजीविका की सुरक्षा तथा भागीदारी का महत्वपूर्ण योगदान है। अत: ग्राम के स्तर पर वन तथा वन्य जीवों के संरक्षण संवर्द्धन तथा प्रबन्धन हेतु ग्राम समिति को स्थापित किया गया है ।

वन्य-जीव संरक्षण अधिनियम, 1972 के पारित होने से पूर्व भारत में केवल 5 राष्ट्रीय पार्क नामित थे। यह अधिनियम जम्मू कश्मीर को छोड़कर सारे देश में लागू है। वन तथा पर्यावरण मंत्रालय इस अधिनियम् के क्रियान्वयन को सुनिश्चित करने के साथ-साथ संरक्षित क्षेत्रों के विकास हेतु वित्तीय तथा तकनीकि सहायता राज्यों को प्रदान करता है। हमारे देश में संरक्षित क्षेत्रों के विकास हेतु नीति निम्नलिखित रही है -

1. भारत में संरक्षित क्षेत्रों के संजाल (network) को व्यापक तथा विस्तारित किया गया।
2. संरक्षित क्षेत्रों के प्रबन्धन संबंधी कार्य को देखते हुए 2002 राष्ट्रीय वन्य-जीव कार्य योजना को अपनाया गया जिसमें वन्य-जीव कार्य योजना (2002-16) को अपनाया गया। जिसमें वन्य जीवों के संरक्षण हेतु स्थानीय लोगों की भागीदारी पर बल दिया गया है।
3. संरक्षित क्षेत्रों के प्रबन्धन में ग्रामीण जनता की भागीदारी हेतु ग्राम ईको समितियों का गठन किया गया है ।
4. संरक्षित क्षेत्रों को तीन भागों में विभाजित कर विकसित किया गया है। सबसे ***प्रथम*** कानूनी रूप से सुरक्षित मुख्य क्षेत्र (Core Zone) ***द्वितीय*** मुख्य क्षेत्र के बाहर स्थित मध्यवर्ती क्षेत्र (Buffer Zone) जहाँ पर गैर संरक्षण गतिविधियाँ निषिद्ध होती हैं। ***तृतीय*** क्षेत्र संक्रमण क्षेत्र (Transition Zone) जहाँ पर स्थानीय निवासियों के वनाधिकारों को संरक्षण दिया जाता है।
5. संरक्षित क्षेत्र के मुख्य क्षेत्र से समस्त मानवीय हस्तक्षेप तथा मानव जनित प्राकृतिक संसाधनों का दोहन वर्जित कर दिया जाता है तथा मध्यवर्ती क्षेत्र (Buffer Zone) में गतिविधियों को अत्यधिक प्रतिबन्धित कर दिया जाता है।
6. संरक्षित क्षेत्रों के प्राकृतिक पर्यावासों के समुचित प्रबंधन हेतु उनकी भौगोलिक सूचना प्रणाली (Geographic Information System-GIS) आधारित मॉडलिंग (Modelling) और मानचित्रण (Mapping) एवं अन्य संबंधित सूचनाओं का नेटवर्क स्थापित किया गया है।
7. राष्ट्रीय वन्य-जीव बोर्ड तथा वन्य-जीव संस्थानों की स्थापना की गयी। वन्य-जीव संस्थान को वन्य-जीव प्रशिक्षण और प्रशिक्षण अनुसंधानिक संस्थान के रूप में मान्यता प्रदान की गयी है।
8. वन्य-जीव अधिनियम 1972 में संशोधन कर संरक्षित क्षेत्र समेत देश में वन्य-जीव संबंधी अपराधों की रोकथाम हेतु वन्य-जीव अपराध नियंत्रण ब्यूरो का गठन किया गया है।
9. आद्र भूमि या नम भूमि, कच्छ वनस्पतियों एवं प्रवाल भित्तियों के संरक्षण तथा प्रबन्धन हेतु नीतिगत परामर्श देने हेतु **'राष्ट्रीय आद्र क्षेत्र प्रबन्धन समिति'** का गठन किया गया है।

संरक्षित क्षेत्रों को तीन भागों में विभाजित कर विकसित किया गया है। सबसे प्रथम कानूनी रूप से सुरक्षित मुख्य क्षेत्र (Core Zone) द्वितीय मुख्य क्षेत्र के बाहर स्थित मध्यवर्ती क्षेत्र (Buffer Zone) जहाँ

पर गैर संरक्षण गतिविधियाँ निषिद्ध होती हैं। तृतीय क्षेत्र संक्रमण क्षेत्र (Transition Zone) जहाँ पर स्थानीय निवासियों के वनाधिकारों को संरक्षण दिया जाता है।

14.5 आपदा शमन: अर्थ एवं उद्देश्य (Disaster Mitigation: Meaning and Objectives)

संयुक्त राष्ट्र अन्तर्राष्ट्रीय आपदा शमन रणनीति (United Nations International Strategy for Disaster Reduction) के अनुसार प्राकृतिक आपदाओं के मामले में चीन के बाद दूसरा स्थान भारत का है। भारत में आपदाओं की रूपरेखा मुख्यत: भू-जलवायु स्थितियाँ और स्थलाकृतियों की विशेषताओं से निर्धारित होती है और उनमें जो अन्तर्निहित कमजोरियाँ होती हैं उन्हीं के फलस्वरूप विभिन्न तीव्रता की आपदायें वार्षिक रूप से घटित होती रहती हैं। आवृति, प्रभाव और अनिश्चितताओं के लिहाज से जलवायु प्रेरित आपदाओं का स्थान सबसे ऊपर है। 1967 से 2006 के दौरान भारत में जो आपदायें आयीं उनमें से 52 प्रतिशत बाढ़ के कारण, 23 प्रतिशत चक्रवात के कारण और 11 प्रतिशत भूकम्प और 11 प्रतिशत भू-स्खलन के कारण हुयी परन्तु सबसे अधिक लोग भूकम्प में हताहत हुए, उसके बाद बाढ़ और चक्रवात से।

आपदा शमन करने हेतु आपदा प्रबन्धन योजनायें तैयार करने और उनके कार्यान्वयन पर निगरानी अपेक्षित संस्थागत तंत्र स्थापित करने के लिए आपदा प्रबन्धन अधिनियम, 2005 अभिनियमित किया गया ताकि आपदा निवारण और आपदा के प्रभाव में कमी के लिए सरकार ने विभिन्न उपाय करें और किसी भी आपदापूर्ण स्थिति का सामना ईमानदारी और समन्वित ढंग से शीघ्र कर पाएं। आपदा प्रबन्धन अधिनियम 2005 के प्रावधानों के अनुसार राष्ट्रीय आपदा प्रबन्धन नीति तैयार की गई है ताकि निवारण, शमन तैयारी और अनुक्रिया की संस्कृति के माध्यम से समग्र, अग्रसक्रिय (Proactive) और प्रौद्योगिकी-जनित रणनीति का विकास कर सुरक्षित और आपदा के आघात को सहने में समर्थ भारत का निर्माण किया जा सके।

भारत में आपदा काल प्रबन्धन की भूमिका गृह मंत्रालय के अधीनस्थ सरकारी एजेंसी भारतीय राष्ट्रीय आपदा प्रबन्धन प्राधिकरण के कंधों पर आती है। आपदा के समय प्रतिक्रिया और उबरने से रणनीतिक जोखिम प्रबन्धन और न्यूनीकरण तथा सरकारी संस्था दृष्टिकोण से विकेन्द्रीकृत समुदाय की भागीदारी की ओर ले जाने वाली अवधारणा के क्रियान्वयन हेतु विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्रालय एक आंतरिक संस्था का समर्थन करता है जो आपदा प्रबन्धन की प्रक्रिया में भू-वैज्ञानिकों के शैक्षणिक ज्ञान और विशेषज्ञता को शामिल कर अनुसंधान को सुसाध्य बनाती है।

आपदा शमन नीति के उद्देश्य (Objectives of Disaster Mitigation Policy)

आपदा प्रबन्धन नीति में आपदा शमन हेतु निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किए गए हैं -

1. आपदा की रोकथाम एवं आपदा से निपटने की तैयार, त्वरित प्रतिक्रिया की संस्कृति को सभी स्तरों पर विकसित करना।
2. आपदा प्रबन्धन को नियोजन तथा विकास की प्रक्रिया में आत्मसात करना।
3. आपदा प्रबंधन की प्रक्रिया के लिए संस्थागत, तकनीकी और कानूनी प्रक्रियाओं की एक प्रणाली बनाना ताकि प्रभावी अनुपालन और विनियमन की प्रणाली को मजबूत किया जा सके।
4. आपदा के जोखिम की पहचान, मूल्यांकन और निगरानी (monitoring) हेतु प्रभावी प्रक्रिया विकसित करना।
5. आपदा प्रबन्धन हेतु समुचित तथा प्रभावी सूचना तथा प्रौद्योगिकी आधारित पूर्व चेतावनी व्यवस्था को विकसित करना।
6. आपदा प्रभावों के न्यूनीकरण के अपायों को तकनीकि परम्परागत, बुद्धिमत्ता एवं पर्यावरण सुरक्षा के अनुरूप करना।
7. प्रभावी राहत-बचाव कार्यक्रमों को समाज के कमजोर वर्गों की आवश्यकतानुसार विकसित करना।
8. यथास्थिति बहाल करने हेतु पुनर्निर्माण की प्रक्रिया में सुरक्षित तथा सुदृढ़ आवास एवं संरचना का विकास करना।

9. आपदा प्रबन्धन की प्रक्रियाओं में समाज, मीडिया तथा निजी क्षेत्र आदि सभी की भागीदारी सुनिश्चित करना।
10. आपदा प्रबन्धन हेतु क्षमताओं के निर्माण हेतु प्रशिक्षण एवं मानव संसाधन का विकास करना।

14.6 आपदा शमन नीति : रूपरेखा एवं रणनीति (Disaster Mitigation Policy: Framework and Strategy)

आपदा प्रबंधन नीति में आपदा न्यूनीकरण की प्रक्रिया को एक आयाम के रूप में स्वीकार किया गया है। आपातकालीन प्रबंधन एक अंत:विषय क्षेत्र का सामान्य नाम है जो किसी संगठन की महत्वपूर्ण संपत्तियों को खतरनाक जोखिमों से बचाने से संबंधित है जो आपदा या आपदा और नियोजित जीवन चक्र का कारण बन सकते हैं। संपत्तियों को सजीव, निर्जीव, सांस्कृतिक या आर्थिक के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। खतरों को प्राकृतिक या मानव निर्मित कारणों के द्वारा वर्गीकृत किया जाता है। प्रक्रियाओं की पहचान के उद्देश्य से सम्पूर्ण सामरिक प्रबन्धन की प्रक्रिया को चार क्षेत्रों में बांटा गया है।

आपातकालीन प्रबन्धन की प्रक्रिया के चार चरण हैं न्यूनीकरण, तत्परता, प्रतिक्रिया और उबरना परिभाषा के अनुसार आपदा की रोकथाम 100 शमन हैं। इन चार क्षेत्रों में सामान्य रूप से जोखिम न्यूनीकरण, खतरे का सामना करने के लिए संसाधनों को तैयार करने, खतरे की वजह से हुए वास्तविक नुकसान का उत्तर देने और आगे के नुकसान को सीमित करने और यथासम्भव खतरे की घटना से यथापूर्ण स्थिति में लौटने से संबंधित हैं,

आपदा प्रबन्धन की प्रक्रिया में सार्वजनिक और निजी क्षेत्र दोनों की भागीदारी होती है आपातकालीन प्रबन्धन प्रक्रिया एक नीतिगत प्रक्रिया न होकर एक रणनीतिक प्रक्रिया है। अत: यह आमतौर पर संगठन में कार्यकारी स्तर तक ही सीमित रहती है। सामान्य रूप से इसकी कोई प्रत्यक्ष शक्ति नहीं है लेकिन यह सुनिश्चित करने के लिए कि एक संगठन के सभी भाग एक साझे लक्ष्य पर ध्यान केन्द्रित करें, यह सलाहकार के रूप में या कार्यों के समन्वय के लिए कार्य करता है, प्रभावी आपात प्रबन्धन संगठन के सभी स्तरों पर आपातकालीन योजनाओं के सम्पूर्ण एकीकरण और इस समझ पर निर्भर करता है कि संगठन के निम्नतम स्तर आपात स्थिति के प्रबन्धन और ऊपरी स्तर से अतिरिक्त संसाधन और सहायता प्राप्त करने के लिए जिम्मेदार हैं।

आपदा प्रबन्धन हेतु संस्थागत तन्त्र (Institutional Mechanism for Disaster Management)

↓

आपदा प्रबन्धन की प्रक्रिया (Process of Disaster Management)

↓

आपदा की रोकथाम (Prevention form Disaster)

↓

आपदा के प्रभावों को न्यूनतम करना (Minimization of Disaster effects)

↓

आपदा के दौरान तत्परता (Preparedness during Disaster)

↓

प्रतिक्रिया (Response)

↓

राहत एवं बचाव (Relief and Rescue)

↓

पुनर्निर्माण (Reconstruction)

↓

क्षमता निर्माण एवं मानव संसाधन विकास (Capacity Building and Human Resourse Development)

1. **आपदा प्रबन्धन हेतु संस्थागत तन्त्र (Institutional Mechanism for Disaster Management)** - राष्ट्रीय, राज्य, जिला एवं स्थानीय स्तर पर आपदा प्रबन्धन से जुड़े विभिन्न कार्यों को पूरा करने के लिए एक संस्थागत तंत्र की व्यवस्था करने के अलावा इसमें विभिन्न सरकारी विभागों, एंजेसियाँ, मंत्रालयों द्वारा शमन और बचाव के लिए उठाए जाने वाले विभिन्न कदमों का उल्लेख भी किया गया है। आपदा प्रबन्धन अधिनियम के अनुरूप सरकार ने 2005 में राष्ट्रीय स्तर पर **राष्ट्रीय आपदा प्रबन्धन प्राधिकरण** (National Disaster Management Authority - NDMA) का गठन किया गया जिसका अध्यक्ष प्रधानमंत्री को बनाया गया है। राज्यों और जिलों के स्तर पर विभिन्न सरकारों ने राज्य आपदा प्रबन्धन प्राधिकरणों (State Disaster Management Authority - SDMA) और जिला आपदा प्रबन्धन प्राधिकरणों (District Disaster Management Authority - DDMA) का गठन किया है। राज्य आपदा प्रबन्धन प्राधिकरणों (State Disaster Management Authority - SDMA) के अध्यक्ष मुख्यमंत्री एवं जिला आपदा प्रबन्धन प्राधिकरणों (District Disaster Management Authority - DDMA) के अध्यक्ष जिलाधिकारी नामित किए गए हैं। इनके अतिरिक्त, सरकार ने आपदाओं के साथ कार्रवाई के लिए विशिष्ट बलों का गठन किया है। प्रशिक्षण और अनुसंधान के लिए **राष्ट्रीय प्रबन्धन संस्थान** (National Institute of Management) की स्थापना की है और तुरन्त राहत के लिए धनराशि मुहैया कराने हेतु तंत्र की व्यवस्था की है। इसने विभिन्न शमन उपायों को हाथ में लेने के लिए कोष के गठन की आवश्यकता भी रेखांकित की है। आपदा प्रबन्धन के दृष्टिकोण में अब परिवर्तन आ गया है और यह राहतोन्मुखी ना रहकर पहले से तैयारी कर आपदाओं के जोखिम को सीमित करने पर जोर देता है।
2. **आपदा प्रबन्धन की प्रक्रिया (Process of Disaster Management)** - इस नीति में आपदा प्रबन्धन की प्रक्रिया को दो भागों में यानि आपदा पूर्व (Pre-Disaster) तथा आपदा पश्चात (Post-Disaster) में बाँटा गया है जिनके चरण निम्नलिखित हैं-

1. आपदा पूर्व प्रक्रिया में आपदा की रोकथाम, आपदा के प्रभावों का न्यूनीकरण, आपदा से निपटने की तैयारी की प्रक्रिया आती है।
2. आपदा के पश्चात प्रक्रिया में आपदा के समय त्वरित प्रतिक्रिया, राहत-बचाव, पुनर्निर्माण एवं पूर्व स्थिति बहाल करना आदि प्रक्रियाएं आती हैं।

3. **आपदा की रोकथाम (Prevention form Disaster)** - आपदा से निपटने का सबसे बेहतर उपाय यह है कि उनके घटित होने की आवृत्तियों की ही प्रभावी रोकथाम कर ली जाए परन्तु यह प्रभावी रोकथाम, प्राकृतिक आपदाओं जैसे भूकम्प, चक्रवात, अतिवृष्टि, बाढ़, भूस्खलन आदि के लिए नहीं की जा सकती है परन्तु आपदा संवेदनशील क्षेत्रों में समुचित नियोजन तथा विकास के द्वारा किसी संकट को आपदा बनने से रोका जा सकता है।
4. **आपदा के प्रभावों को न्यूनतम करना (Minimization of Disaster effects)** - यह अवधारणा आपदा प्रबंधन का प्रथम एवं आपदा-पूर्व भाग है। इसके अंतर्गत किसी आपदा से होने वाले संभावित नुकसान के प्रभाव को पहले से ही कम करने का प्रयास किया जाता है, अर्थात किसी भी संभावित खतरे को पूरी तरह से आपदा में बदलने से रोकने का प्रयास किया जाता है या आपदा घटित होने की स्थिति में उसके प्रभाव को कम करने का प्रयास किया जाता है। न्यूनीकरण चरण, जोखिम को कम करने या समाप्त करने के लिए दीर्घकालिक उपाय किए जाते हैं। न्यूनीकरण उपाय संरचनात्मक या गैर-सरंचनात्मक हो सकते हैं। बाढ़ के समय बांध और तटबंध जैसे संरचनात्मक उपाय तकनीकी समाधान की तरह हैं। गैर सरंचनात्मक उपायों में कानून, भूमि उपयोग योजना और बीमा में शामिल हैं। खतरों के प्रभाव को कम करने के लिए न्यूनीकरण सबसे अधिक लागत प्रभावी तरीका है। न्यूनीकरण की पूर्ववर्ती गतिविधि जोखिम की पहचान, आपदा के संवेदनशील क्षेत्रों का आकलन तथा भेद्यता मानचित्र (Vulnerability Map) को तैयार करना, राष्ट्रीय डाटाबेस आपातकालीन प्रबंधन (National Database Emergency Management) पर आधारित सूचना तन्त्र विकसित करना, भारत में राज्यों में आपदाओं के जोखिम की विस्तृत रूपरेखा को दर्शाने वाला दस्तावेज वल्नरेविलिटी एटलस (Vulnerability Atlas) है जिसे भवन निर्माण सामग्री एवं प्रौद्योगिकी संवर्धन केन्द्र ने तैयार किया है।
5. **आपदा के दौरान तत्परता (Preparedness during Disaster)** - तत्परता से तात्पर्य आपदा के घटित होने के दौरान आपदा ने निपटने की तैयारी से है अर्थात् हम आपदा के लिए कितने तैयार हैं। प्राकृतिक आपदाओं, आतंकवादी कृत्यों और अन्य मानव निर्मित आपदाओं की रोकथाम और इनसे सुरक्षा, प्रत्युत्तर, उबरने और प्रभावों को कम करने के लिए प्रभावी समन्वय और क्षमताओं में वृद्धि सुनिश्चित करने के लिए योजना, आयोजन, प्रशिक्षण, लैस करना, अभ्यास, मूल्यांकन और सुधार गतिविधियों का सतत चक्र तत्परता है। तत्परता चरण में, आपात प्रबन्धक जोखिम के प्रबन्धन और उसका सामना करने के लिए कार्रवाई की योजना बनाते हैं और इस तरह की योजनाओं को लागू करने के लिए आवश्यक क्षमताओं का निर्माण करने के लिए जरूरी कार्रवाई करते हैं, आम तत्परता उपायों में निम्न उपाय शामिल है -
    1. आसानी से समझ में आने वाली शब्दावली और तरीकों वाली संप्रेषण योजना।
    2. सामुदायिक आपात प्रत्युत्तर टीमों जैसे बड़े पैमाने के मानव संसाधनों सहित आपात सेवाओं का उचित रखरखाव और प्रशिक्षण।
    3. आपातकालीन आश्रय और निकासी योजना के साथ जनसंख्या को आपातकालीन चेतावनी देने संबंधी विधियों का विकास और अभ्यास।
    4. एकत्रीकरण, सूची और आपदा आपूर्ति और उपकरणों को बनाये रखना।
    5. नागरिक आबादी में से प्रशिक्षित, जिम्मेदार स्वयं सेवकों के संगठनों का विकास करना।

6. **प्रतिक्रिया (Response) -** प्रभावी एवं त्वरित प्रतिक्रिया से आपदा के प्रभाव तथा जान-माल की क्षति को न्यूनतम किया जा सकता है इस चरण के अन्तर्गत आपदा क्षेत्र में आवश्यक आपातकालीन सेवाओं और संसाधनों को गतिशील करना शामिल होता है। इसमें अग्निशामक, पुलिस और एम्बुलेंस दल जैसी कोर आपातकालीन सेवाओं को शामिल कर युद्धस्तर पर सक्रिय किया जाता है। प्राकृतिक या आतंकवादी जनित के लिए संगठनात्मक प्रतिक्रिया मौजूदा आपातकालीन प्रबन्धन संगठनात्मक प्रणालियों और प्रक्रियाओं प्रतिक्रिया योजना (response plan) और घटना आदेश प्रणाली (Incident Commond System) पर आधारित होता है। इन प्रणालियों को एकीकृत आदेश और आपसी सहायता के सिद्धान्तों के माध्यम से सशक्त किया जाता है।

   किसी भी आपदा का जवाब देने के लिए अनुशासन (संरचना, सिद्धान्त, प्रक्रिय) और चपलता (रचनात्मकता, आशुरचना, अनुकूलनशीलता) दोनों की जरूरत होती है पहले उत्तरदाता के नियन्त्रण से परे बढ़ने वाले प्रयासों का शीघ्रता से समन्वय और प्रबन्धन करने के लिए उच्च कामकाजी नेतृत्व टीम को शामिल करने और बनाने की आवश्यकता, एक अनुशासित, पारस्परिक प्रतिक्रिया वाले योजनाओं के समुच्चय (sets) को बनाने और लागू करने के लिए एक नेता और उसके दल की आवश्यकता को प्रकट करती है। इससे टीम समन्वित, अनुशासित प्रतिक्रियाओं के साथ आगे बढ़ सकती है जो कमोबेश (more or less) सही हों और नई जानकारी व बदलती परिस्थितियों के अनुसार ढल सके।

7. **राहत एवं बचाव (Relief and Rescue) -** इस चरण के अन्तर्गत आपदा क्षेत्र में आवश्यक आपातकालीन सेवाओं और संसाधनों को गतिशील करना शामिल होता है। इसमें अग्निशामक, पुलिस और एम्बुलेंस दल जैसी पहले स्तर की मुख्य (core) आपातकालीन सेवाओं को शामिल किया जाता है। सैन्य अभियान के तौर पर किए जाने पर इसे आपदा राहत अभियान कहा जाता है इसके अन्तर्गत विशेषज्ञ बचाव दल जैसी अनेक गौण आपातकालीन सेवाओं शामिल होती हैं एक अच्छी तरह से दोहरायी गयी आपातकालीन योजना को तत्परता चरण के भाग के रूप में विकसित करने से बचाव का कुशल समन्वयन होता है। आवश्यकता पड़ने पर खोज और बचाव को प्रयास की प्रारम्भिक अवस्था में ही शुरू किया जा सकता है।

8. **पुनर्निर्माण (Reconstruction)** - उबरने वाले चरण का उद्देश्य प्रभावित क्षेत्र को यथापूर्व स्थिति में बहाल कर उसका प्रभावी पुनर्वास करना है। इसका लक्ष्य प्रतिक्रिया चरण से भिन्न है, उबरने के प्रयास उन मुद्दों और निर्णयों से संबंधित हैं जो तत्काल आवश्यकताओं की पूर्ति के बाद किए जाने चाहिए। उबरने के प्रयास मुख्य रूप से नष्ट सम्पति, पुनर्रोजगार और अन्य आवश्यक बुनियादी ढांचे की मरम्मत संबंधी कार्य हैं, समुदाय और बुनियादी ढाँचे में आपदा पूर्व निहित जोखिम को कम करने के उद्देश्य से **'वापस बेहतर बनाने'** के प्रयास किए जाने चाहिए अन्यथा अलोकप्रिय न्यूनीकरण उपायों के कार्यान्वियन के लिए अल्पकालीन अवसर का लाभ उठाना, उबरने के प्रभावी प्रयासों का एक महत्वपूर्ण पहलू है। आपदा की स्मृति ताजा रहने पर प्रभावित क्षेत्र के नागरिकों द्वारा अधिक न्यूनीकरण परिवर्तनों को स्वीकार किए जाने की अधिक सम्भावना है।

   आपदा के दौरान होने वाली जान माल की भारी क्षति तथा आपदा के पश्चात् पुनर्निर्माण हेतु व्यापक वित्तीय संसाधनों की आवश्यकता होती है इस संदर्भ में सरकार के पास दो स्रोत हैं- प्रधानमंत्री राहत कोष और मुख्यमंत्री राहत कोष एवं आपदा राहत कोष (जिसे अब राज्य आपदा कार्रवाई कोष (Disaster Response Fund) कहा जाता है) का उपयोग भी राहत और बचाव कार्यों पर व्यय के लिए किया जाता है। यह कोष मूलत: एक ऐसा सहमत कोष होता है जिसमें राज्य योगदान 25 प्रतिशत और शेष 75 प्रतिशत केन्द्र का योगदान होता है। प्रभावित राज्यों में स्थिति का अध्ययन करने के लिए भेजे गये केन्द्रीय दल की सिफारिश पर केन्द्र सरकार सहायता राशि जारी करती है। इससे पुनर्निर्माण की आवश्यकताओं की पूर्ति पूर्ण

रूप से हो पाती एवं क्षति और पुनर्निर्माण की आवश्यकता के आकलन की किसी वैज्ञानिक पद्धति की अनुपस्थिति में, जारी राष्ट्रीय आपदा प्रतिक्रिया बल (National Disaster Response Force) राशि से ही विभिन्न राज्यों में जोखिम का पता चल जाता है।

9. **क्षमता निर्माण एवं मानव संसाधन विकास (Capacity Building and Human Resourse Development) -** राष्ट्रीय आपदा प्रबन्धन संस्थान (National Institute of Disaster Management) नई दिल्ली, भारत सरकार का एक शीर्ष राष्ट्रीय संस्थान है जोकि आपदा प्रबन्धन के क्षेत्र में मानव संसाधन विकास, क्षमता निर्माण, प्रशिक्षण, अनुसंधान, प्रलेखन, जनता की जागरुकता और नीति सुझाने के लिए उत्तरदायी है। यह संस्थान आपदा प्रबन्धन हेतु राष्ट्रीय सूचना तन्त्र (network) विकसित करने के साथ-साथ आपदा प्रबन्धन की प्रक्रिया में निपुणता के केन्द्र की तरह कार्य करता है।

   हाल के वर्षों में आपातकालीन प्रबन्धन की निरन्तरता की विशेषता के परिणामस्वरूप आपातकालीन प्रबन्धन सूचना सिस्टम की नई अवधारणा ने जन्म लिया है। आपातकालीन प्रबन्धन हितधारकों के बीच निरन्तरता और अन्तसंक्रियाकता (interactivity) के लिए, सरकारी और गैर सरकारी भागीदारी के सभी स्तरों पर आपात योजना को एकीकृत करने वाली संरचना प्रदान करके और आपात स्थितियों के सभी चार चरणों के लिए सभी संबंधित संसाधनों (मानव और अन्य संसाधनों सहित) का उपयोग करके आपातकालीन प्रबन्धन प्रक्रिया का समर्थन करता है। स्वास्थ्य देखभाल के क्षेत्र में अस्पताल हादसा आदेश प्रणाली का उपयोग करते हैं जो प्रत्येक प्रभाग के लिए जिम्मेदारियों के समुच्चय (sets) के साथ स्पष्ट रूप से परिभाषित आदेश शृंखला में संरचना और संगठन प्रदान करती है।

14. 7 अभ्यास प्रश्न (Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. प्रोजेक्ट टाईगर नामक परियोजना .... आरम्भ हुई। (1973 **या** 1990)
2. जैव आरक्षित क्षेत्र की अवधारण.................. संस्था द्वारा स्थापित की गयी है। (नोडल **या** यूनेस्को)
3. भारत का प्रथम जैव मण्डलीय आरक्षित क्षेत्र .... है। (नीलगिरी **या** अमरावती)

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. आद्र या नम भूमि के संरक्षण हेतु कौन-सी अन्तर्राष्ट्रीय रामसर संधि की गयी है।
2. यूनेस्को द्वारा भारत के पूर्वी घाट क्षेत्र को जैव विविधता की दृष्टि से हॉट स्पॉट घोषित किया गया है।

14.8 सारांश (Summary)

आज पर्यावरण संरक्षण में चुनौतियाँ चारों ओर से आ रही हैं, ऐसे में संरक्षित क्षेत्रों के विकास को पर्यावरण अनुकूल तरीकों से सुनिश्चित किया जाना चाहिए। इस दिशा में संरक्षित क्षेत्रों के मानकों को ध्यान में रखकर रणनीति बनाना आवश्यक है। पर्यावरण अवनयन से प्राकृतिक तथा मानवजनित आपदाओं की आवृत्ति तथा तीव्रता में बढ़ोत्तरी हुई है। आपदा शमन हेतु भारत में आपदाओं की रोकथाम तथा उनसे निपटने हेतु प्रभावी कार्यकारी संस्कृति का विकास आवश्यक है। यद्यपि राष्ट्रीय आपदा प्रबन्धन नीति में आपदा शमन के लिए व्यापक प्रयास किए गए हैं परन्तु अभी इन्हें और प्रभावी तथा क्रियाशील बनाने की आवश्यकता है। पर्यावरण अवनयन तथा पारिस्थितिकी तंत्र में असंतुलन का नकारात्मक प्रभाव सर्वाधिक जैव विविधता के ऊपर परिलक्षित हो रहा है। अतः जैव विविधता से परिपूर्ण संवेदनशील क्षेत्रों की पहचान व उनके लिये संरक्षण हेतु प्रभावी रणनीति की आवश्यकता है। राष्ट्रीय पर्यावरण नीति में इस दिशा में ठोस निर्देशों को जारी किया गया है। पर्यावरण नीति में सभी हितधारकों के प्रयासों को समावेश करने हेतु प्रभावी रणनीति बनायी गयी है।

14.9 शब्दावली (Glossary)

- **कच्छ वनस्पति (Mangroves) -** इन्हें मैग्रोव या सुन्दरी के वन भी कहते हैं यह वनस्पतियाँ खारे पानी में जीवित रहने के साथ-साथ तट रेखाओं संरक्षण का कार्य भी करती हैं।
- **प्रवाल मित्तियाँ (Coral Soils) -** इन्हें मूँगे की चट्टाने भी कहते हैं यह मुख्यतया उथले कटिबन्धीय सागरों में पायी जाती है।
- **हॉट स्पॉट (Hot Spots) -** जैव विविधता की दृष्टि से संवेदनशील एवं समृद्ध स्थलों को यूनेस्को द्वारा हॉट स्पॉट की संज्ञा प्रदान की जाती है।
- **भेद्यता एटलस (Vulnerability Atlas) -** यह ऐसे मानचित्रों का संकलन है जिसमें प्राकृतिक आपदा की संभावना, तीव्रता, जोखिम आदि की विस्तृत रूप रेखा का चित्रण होता है।
- **राष्ट्रीय उद्यान (National Park) -** राष्ट्रीय उद्यान ऐसे संरक्षित क्षेत्र हैं जहाँ पर वनाधिकार पूरी तरह से प्रतिबन्धित होते हैं।
- **अभयारण्य (Sanctuary) -** अभयारण्य ऐसे संरक्षित क्षेत्र होते हैं जहाँ पर वनाधिकारों को सीमित तौर पर प्रतिबन्धित किया जाता है।

14.10 अभ्यास प्रश्न के उत्तर (Answer for Practice Questions)

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए

1. 1973 2. यूनेस्को 3. नीलगिरी

निम्नलिखित कथनों में से सत्य या असत्य कथन का चुनाव कीजिए-

1. सत्य 2. असत्य

14.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- सिन्हा, मेघा (2007) ***पर्यावरण और पारिस्थितिकीय तन्त्र***, वन्दना पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली ।
- त्रिपाठी, रेणु (2011) ***पर्यावरण भूगोल***, ओमेगा पब्लिकेशन्स, दिल्ली ।
- उत्तराखण्ड उदय, ***उत्तराखण्ड दशक 2000-2010*** (नवम्बर 2010) अमर उजाला पब्लिकेशन्स लिमिटेड, नोएडा।

14.12 उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Text)

- Sinha K. Rajiv (2007) ***Environmental Crisis and Human at risk***, INA Shree Publishers, Jaipur.
- Bhattacharya, R.N. (Ed.) (2001) ***Environmental Economics – An Indian Perspective***, OUP, New Delhi.

14.13 निबन्धात्मक प्रश्न (Essay type Questions)

1. संरक्षित क्षेत्र की अवधारणा से क्या समझते हैं? भारत में संरक्षित क्षेत्रों के विकास के सन्दर्भ में अपनायी रणनीति पर चर्चा कीजिए?
2. आपदा शमन से क्या तात्पर्य है? आपदा प्रबन्धन के विभिन्न चरणों को स्पष्ट कीजिए?
3. संरक्षित क्षेत्रों के विकास हेतु नीति के महत्व पर टिप्पणी कीजिए। भारत में इस सन्दर्भ में किए गए प्रयासों का समीक्षात्मक मूल्यांकन कीजिए।